आश्रम-संहिता



आश्रमसंहिता

काकासाहब कालेलकर

प्रकाशक
श्री अमृतलाल नाणावटी
गांधी हिंदुस्तानी साहित्य सभा,
राजघाट, नयी दिल्ली १



आश्रमके प्रवेशद्वारके पास जो पुराण पुरुष अिमली-वृक्ष खडा है,
जो वहाँ आश्रमकी स्थापनाके पहले भी था,
आश्रम-जीवनके दिनोंमें जिसने अतिथियोंको प्याअूका काम दिया
और जो आज फैलकर आश्रमके दिनोंका स्मारक बना है,
अुसीको यह

आश्रम-संहिता

प्रेमसे अर्पण करनेको जी चाहता है।

—का० का०

प्रास्ताविक

जब गांधीजी दक्षिण आफ्रिकाका अपना काम पूरा करके भारतमें रहनेके लिअे और स्वराज्यसेवाके लिये आअे तब अुनके मनमें आदर्श जीवन-निर्माणकी बात थी ही। वैष्णव जैन आदि हिन्दू संस्कार तो अुनके खूनमें ही थे। मुसलमानोंके साथका परिचय भी अुनके पास काफी था। विलायतमें (और आफ्रिकामें भी) क्रिश्चन लोगोंसे अुन्हें गहरा संपर्क मिला। और अुनमें अीश्वर-प्राप्तिकी, मोक्ष-साधनाकी और निष्काम सेवाके लिये कर्मयोग चलानेकी महत्त्वाकांक्षा जाग्रत हुअी। स्वराज्य-प्राप्ति अुनके मन केवल अुस आदर्श जीवनका अेक अनिवार्य साधन ही था। अिसलिअे भारत लौटते ही अुन्होंने यहाँ अेक आश्रम खोलना चाहा। अुसके पहले भी अुनका निजी जीवन आश्रममय था ही। अुन्होंने अेक आश्रम खोलनेका अपना संकल्प जाहिर किया और लोगोंसे विधायक सलाह-सूचना माँग ली।

गांधीजीकी जीवन-साधनाका यह अेक बड़ा वैशिष्ट्य है कि वे कोअी भी प्रवृत्ति अकेले नहीं करते थे। बात व्यवहारकी हो या आध्यात्मिक साधनाकी, समानधर्मा लोगोंको ढूंढना, अुनको बुलाना, अुनसे सलाह-सूचना लेना और बन सके तो अुनका सहयोग भी लेना—यह प्रवृत्ति गांधीजीके खूनमें और हड्डीमें थी ही। अिसलिअे अुन्होंने दो-तीन जगह व्याख्यान देकर अपनी आश्रमकी कल्पना, अुद्देश्य और कार्यपद्धति लोगोंको समझाअी और देशमें अेक दफे घूमनेके बाद अहमदाबादमें अेक छोटा-सा आश्रम खोला।

जो आज भारतकी संस्कृतिमें प्राचीन कालसे पनपती आयी है असीका अेक प्रयोग अेक सुयोग्य व्यक्तिके द्वारा होनेवाला है अैसा पता चलते ही कआ लोग बिना बुलाये गांधीजीके पास पहुंच गये। दक्षिण आफ्रिकाके अनेक साथी तो अनके पास थे ही। पहलेसे ही गांधीजीकी स्वराज्य सेवा और आश्रम प्रवृत्ति दोनों बन गओ। जीवन परिवर्तनके साथ समाज-सुधार तो आ ही गया। बच्चोंकी शिक्षाके द्वारा राजनीतिक, सामाजिक धार्मिक सांस्कृतिक औद्योगिक और कलात्मक सब पहलू आश्रमके द्वारा व्यक्त होने लगे। सत्याग्रहाश्रम शुरूसे ही सेवाश्रम था और आखिर तक सेवाश्रम ही रहा। सेवाके लिअे विद्या, सेवाके लिये ग्रामोद्योग सेवाके लिये सेना और गोरक्षा और सेवाके लिये ही असहयोग और सत्याग्रह यह था गांधीजीके सत्याग्रहाश्रमका स्वरूप।

सारे राष्ट्रको स्वराज्यकी साधना करनी थी। असके लिये राष्ट्रने अखिल भारतीय सेवसंग्राहक अेक संस्था स्थापित की थी जिसका नाम था अिण्डियन नेशनल कांग्रेस। गांधीजीने अिस संस्थाको हाथमें लेकर असे कल्पनातीत बल दिया और असके द्वारा अपने तेजसे भारतको आजाद बनाया। अिस संस्थाके सामने गांधीजीकी निजी संस्था सत्याग्रहाश्रम छोटी बन गया। आश्रमको व्यापक बनानेके लिअे श्री जमनालालजीने गांधी सेवा-संघकी स्थापना की। गांधीजीने यथासमय सत्याग्रहाश्रमका विसर्जन किया। गांधी-सेवासंघका भी विसर्जन किया और स्वराज्य पाने पर अिण्डियन नेशनल कांग्रेसका रूपान्तर कर असे लोक सेवा संघका रूप देनेकी बात सुझायी।

कांग्रेसका अितिहास सबके सामने है ही। सत्याग्रहाश्रमका अितिहास गांधीजीने स्वयं बाहर तो दिया। लेकिन कुछ संताप हो सके जिस तरहसे असे वे पूरा नहीं कर सके। गांधी सेवा संघका जीवनकाल बहुत छोटा था। लेकिन आश्रमकी अपेक्षा संघकी प्रवृत्ति व्यापक थी। राजनीतिक नेता असमें आ गये थे या ले गये थे। जिसलिये

गांधीजीका आश्रमी प्रयोग

देशसेवा करनेका तरीका सीखनेके लिअे और देशसेवा करनेके लिअे गाधीजीने साबरमतीके किनारे वरसो तक सत्याग्रहाश्रम चलाया। और असका अुद्देश्य पूरा होने पर अुस आश्रमका विसर्जन करनेकी बुद्धिमानी और हिम्मत भी बताअी। सत्याग्रहाश्रमसे प्रेरणा पाकर अुसीके नमूने पर छोटे-बडे कअी आश्रम भारतमे जगह-जगह पर खोले गअे। अिनमेसे चन्द आश्रम आज भी चलते है। अिन आश्रमोका सामाजिक जीवन पर जो असर हुआ अुसका मूल्याकन अभी तक किसीने किया नही है। गाधीजीके बडे-बडे राजनीतिक शिष्योने और अनुयायियोने अिन आश्रमों की प्रकट या खानगी तौर पर निन्दा कम नही की। निन्दामे कुछ हिस्सा जायज था। लेकिन निन्दा करनेवालोके मनमे आश्रम-जीवनके दोष दूर करके अुसे शुद्ध करनेकी वृत्ति नही थी। सयमी और व्रती जीवनके प्रति अश्रद्धा होनेके कारण गाधीजीके अिस प्रयोगके प्रति अुनके मनमे तनिक भी सहानुभूति नही था।

गाधीजीका आश्रम-प्रयोग निर्दोप नही था। अुसमे सुधारके लिअे काफी गुजाअिश थी। आज सत्याग्रह-आश्रमके ढगका आश्रम चलाना शायद शक्य नही है, अिष्ट भी नही है। आश्रमजीवनमे पले हुअे लोगो मे कुछ विकृतियाँ आअी। युवकोने आश्रमजीवनका पूरा अनुभव लेनेके बाद अुसके खिलाफ बगावत भी की। स्वराज्यके आन्दोलनमे अिन आश्रमवासियोका ठीक-ठीक अुपयोग हुआ। सरदार वल्लभभाअीने आश्रमवासियोकी सेवामे काफी लाभ अुठाया। आश्रमवासियोकी बौद्धिक जडता और व्यवहारशून्यताके प्रति अपनी चिढ प्रकट करनेपर

भी वे छिपा नहीं सकते थे। महादेवभाओ देसाओ जैसे कुशल पुरुष आश्रममें निभ कैसे सकते हैं जिसका आश्चर्य भी बड़े बड़े लोग करते थे। गांधीजीने आश्रमका प्रयोग पूरी श्रद्धासे अरसे तक चलाया। आश्रमवासियोंके आंतरिक दोषोंके कारण और खास करके अपने राजनीतिक अनुयायियोंकी टीकाके कारण गांधीजीका अुत्साह बहुत कम हो गया। दूसरे अनेक महत्वके कारणोंसे अुन्होंने गुजरात छोड़कर वर्धा जाकर रहना पसन्द किया। जहाँ गांधीजी रहे वहाँ अुनके अिर्द गिर्द आश्रमजीवन बन ही जाता था। लेकिन साबरमती छोड़नेके बाद अुन्होंने आश्रमजीवनके प्रयोगमें अपना पूरा ध्यान नहीं पिरोया। स्वराज्यका आन्दोलन चलाते अुन्हें हमेशा घूमना पड़ता था। राजनीतिक कामोंमें सारा ध्यान देना पड़ता था। तो भी आश्रमजीवन अुनके लिअे श्वास प्रश्वासके जैसा स्वाभाविक था। क्या नोआखालीमें और क्या भंगी कालोनीमें, अुनके अिर्द गिर्द आश्रमका ही वायुमंडल रहता था।

गांधी प्रणीत आश्रम जीवनके गुण-दोषका तटस्थ रूपसे हिसाब करने अनुकूल प्रतिकूल बहुत-सी बातें कह सकते हैं। लेकिन सत्याग्रहाश्रमके प्रत्यक्ष जीवनकी सिद्धि कैसी भी हो, गांधीजीके अिस प्रयोगके कारण सारे देशमें चारित्र्यकी अुन्नतिका अेक अुज्ज्वल वायुमंडल तैयार हुआ था, जिसने स्वराज्य प्राप्तिमें बड़ी मदद की। व्यक्तिगत जीवन, कौटुम्बिक जीवन, सामाजिक, राष्ट्रीय और सार्वजनिक जीवनका जितना अूंचा आदर्श गांधीजीने देशके सामने रखा कि अुसका नजदीकसे या दूरसे ध्यान करके ही भारतमें चारित्र्यकी सर्वांगीण अुन्नति होने लगी। जिन लोगोंने गांधीजीके आश्रम प्रयोगकी निंदामें होकर मुंहभर निन्दा की अुन्होंने चारित्र्य निर्माणके अेक स्रोतको सुखा दिया और आज हमारे राजनीतिक नेता अपनी वाणीका अधिकांश अुपयोग चारित्र्यकी आवश्यकता पर निर्वीर्य व्याख्यान देनेमें करते हैं। चारित्र्यकी आवश्यकता पर दिये हुअे ग्रामोफोनी व्याख्यान जितने बढ़ते हैं,

राष्ट्रीय चारित्र्य अधिकाधिक गिरता जा रहा है। चन्द छोटे-बडे सरकारी कर्मचारियोके आचरणकी कभी-कभी जाँच करनेसे और अुन्हे कडी-से-कडी सजा करनेसे स्थिति सुधरनेकी नही।

जिस तरह ठडके दिनमे कमरेमे थोडी अुष्णता वढानेके लिअे कमरेमे जलते हुअे अगारकी अगीठी रखनी पडती है अुसी तरह देशका चारित्र्य अुन्नत करनेके लिअे देशके नेताओको और राजकर्मचारियोको भी आदर्शकी अगीठी बननी चाहिये। जिन शहरोमे सेन्ट्रल हीटीगकी व्यवस्था होती है, वहाँ तो अुष्णता, अत्यन्त तेज अुष्णता, अुत्पन्न करने का और घर-घर पहुँचानेका अेक महकमा ही होता है। आजकलकी सरकारे भी अुच्च न्यायालय, पब्लिक सर्विस कमिशन, फौज और पुलीस अिन चार विभागोमे पक्षपातरहित अमुक किस्मका चारित्र्य सभालनेकी कोशिश करती है। किन्तु शिक्षा विभागमे अैसे प्रयत्नका अभाव ही है। जो हो गाधीजीके आश्रम-प्रयोगका जैसेके वैसा अनुकरण या पुनरुज्जीवन हो नही सकेगा अिस वातका स्वीकार करते हुअे भी कहना चाहिये कि नये ढगके आश्रम जगह-जगह चलाये विना परिस्थिति सुधरेगी नही। जिस तरह ऋषिकालीन आश्रमोमे परिवर्तन करके गाधीजीने अपने आश्रमका नया आदर्श चलाया अुसी तरह गाधीजीके प्रयोगमे जरूरी परिवर्तन करके अेक नया आदर्श और नया प्रयोग देशभरमे चलाना चाहिये। अैसे प्रयोगके द्वारा शान्तिसेनाकी आवश्यकता भी पूर्ण हो सकेगी।

यह सव करनेके लिअे गाधीजीके युग-परिवर्तन करनेवाले प्रयोग का अितिहास देशके सामने और दुनियाके सामने विस्तारसे प्रगट करने की आवश्यकता है। मेरे अुत्कट अनुरोधसे गाधीजीने आश्रमका अिति-हास लिखनेका स्वीकार किया। लेकिन वैसा वे न कर सके। जो-कुछ थोडा वे लिख सके, अुससे अुन्हे सन्तोष नही था। अुसे जैसेके वैसे प्रकाशित करनेकी मजूरी अुन्होने नही दी। अुनके देहान्तके वाद अुस

चीजको प्रकाशित किया है। दुःखकी बात है कि अिसकी ओर किसीका ध्यान तक नहीं गया।

आज चारित्र्यके विकासकी अपेक्षा की जाती है। लेकिन जिस साधनाके द्वारा गांधीजी राष्ट्रको अिस दिशामें ले जाना चाहते थे, अुसके प्रति लोगोंकी अनास्था ही है।

पुण्यस्य फलम् अिच्छन्ति पुण्यम् नेच्छन्ति मानवाः।

पुण्यका फल तो लोगोंको चाहिये। पुण्यकी साधना लोग चाहते नहीं।

जिस तरह हमारे देशमें ऋषि मुनियोंने, स्मृतिकारोंने, गुरुकुलोंके आचार्योंने और साधु-सन्तोंने आश्रम-जीवनके तरह-तरहके प्रयोग किये अुसी तरह पश्चिममें अीसाअियोंने भी तरह-तरहके सामाजिक जीवनके आध्यात्मिक प्रयोग किये हैं। अनका पूरा अितिहास तो कहीं नहीं मिलता। किन्तु यूरपके मध्यकालीन अितिहासमें और तमोयुगमें चारित्र्यके बनाये रखनेमें अिन आश्रमोंने काफी मदद की है।

अपनी धार्मिक स्वतन्त्रता अबाधित रखनेके लिअे स्वदेशका त्याग करके जो लोग अमरीका आकर बसे अुन लोगोंके सामाजिक जीवनके धार्मिक प्रयोगोंमेंसे बीस तीस प्रयोगोंका बयान 'अमेरिकन कम्युनिटीज' नामक किताबमें पाया जाता है। आत्म धर्मको बाजू पर रखकर चारित्र्यके बारेमें निरुत्साही बनकर केवल अर्थ-व्यवस्थाको ही प्रधानता देनेवाले समाजसत्तावादी और साम्यवादी राष्ट्रीय प्रयोग चल रहे हैं। अभी तो यह युग है। लेकिन सफलता कहीं दीख नहीं पड़ती। अिसलिअे आध्यात्मिक प्रयोगोंका फिरसे अध्ययन चिन्तन करना जरूरी है। सर्वोदय चाहनेवाले लोगोंका यह कर्तव्य है कि वे दुनियाभरके प्राचीन मध्यकालीन और वर्तमान प्रयोगोंका अितिहास ढूंढें और विश्वजनीन अनुभवोंका संग्रह करें।

भारतसेवक गोखलेका सेवाश्रम

सन् १८८५ मे देशके दीर्घदर्शी नेताओने 'अिण्डियन नैशनल काग्रेस' की स्थापना की, तब अुसका स्वरूप दिसम्बरके बडे दिनोमे चार दिन के लिअे अिकट्ठा होनेवाले अेक नये मेलेके जसा ही था। प्रस्ताव पास किये, अुन पर व्याख्यान दिये, अुनकी प्रतियाँ भारतकी अग्रेज सरकार के पास भेज दी, अुनको अखवारोमे छाप दिया तो अेक सालका काम पूरा हुआ। फिर तो हरअेक आदमी अपने-अपने निजी व्यवसायमे व्यस्त रहता था। वहुतसे अखवार अग्रेजीमे चलते थे, जिनका सामान्य-प्रजा-जागृतिके लिअे विगेप अुपयोग नही हो सकता था।

काग्रेसका आन्दोलन और राप्ट्रीय महत्त्वाकाक्षा प्रजाके कानो तक पहुँचानेके लिअे लोकमान्य तिलक-जसे अनेक नेताओने देशी भापामे अखवार चलाये और काग्रेसके नेताओको वता दिया कि देशजागृति तो देशी भापाओके द्वारा ही हो सकती है। अुन दिनो जिन मुट्ठीभर लोगोके हाथमे काग्रेसकी वागडोर थी, ('काग्रेसकी सत्ता' कहने जैसी स्थिति थी ही नही) वे सव अग्रेजीमे ही काम करते थे। अिससे लोक-शक्ति जाग्रत नही हो सकी। देशी भापामे अखवार चलानेसे और व्याख्यान देनेसे और लोगोकी ठोस सेवा करनेसे देशमे प्रजा-जागृति हो सकती है, लोकशक्ति सगठित हो सकती है, अितना जिन्होने सिद्ध कर दिया अुनको extremist, जहाल या अुद्दाम पक्ष कहने लगे।

अिसके वाद नामदार गोखलेने साचा कि काग्रेसका काम हरसाल केवल नातालके वडे दिनोमे करनेसे कामयावी होनेवाली नही। देशके नेताओ

के पास असे साथिओंकी सेवकोंकी आवश्यकता है जो राष्ट्रसेवाकी दीक्षा लेकर अपना सारा समय अपना सारा जीवन अर्पण कर सकें।

अिस अुद्देश्यकी पूर्तिके लिअे गोखलेजीने पवित्र संकल्प किया और Servants of India Society की स्थापना की। वे स्वयं प्रथम भारत सेवक हुअ। अुनके साथ श्री श्रीनिवासशास्त्री श्री देवधर श्री ठक्कर बाप्पा, श्री कुंझरू आदि लोग भारत सेवक बनकर काम करने लगे। Servants of India Society के चन्द सदस्योंने राजनीतिक काम हाथ में न लेकर समाजसेवाका कार्यक्रम अपने हाथमें लिया, जिसकी तुलना गांधीजीके रचनात्मक कामसे थोडी कुछ हो सकती है।

जब गांधीजी भारतमें आये तब श्री गोखलेजीने अुन्हें अनुरोध किया कि Servants of India Society के सदस्य बनो और अुसीके द्वारा राष्ट्रसेवा करो। गांधीजी प्रथम राजी नहीं हुअे लेकिन गोखलेजीके देहान्तके बाद गुरुभक्तिसे प्रेरित होकर गांधीजीने Servants of India Society में प्रवेश पाने के लिअे अर्जी की।

अब गोखलेके शिष्योंके सामने बडा धर्मसंकट खडा हुआ। गांधीजी भी गोखलेके निष्ठावान भक्त या शिष्य। Servants of India Society अेक आध्यात्मिक शक्ति है असा गांधीजी मानते थे, अुसका आदर करते थे। असी हालतमें गांधीजीकी अर्जी मंजूर किये बिना चारा नहीं था। लेकिन मंजूर करनेकी हिम्मत गोखलेके शिष्योंमें नहीं थी। वे जानते थे कि गांधीजी गोखलेके शिष्य हैं सही लेकिन अुनकी विभूति कुछ और है।

Servants of India Society का धर्मसंकट ध्यान में आते ही गांधीजीने अपनी अर्जी वापस खींच ली श्रीनिवासशास्त्री आदि लोगों को अभयदान दिया और अपना अेक अलग आश्रम खोला। (हालांकि वे अवधूतरूपमें Servants of India Society के सदस्य माने जाते थे।)

यथासमय गाधीजीने Servants of India Society को आर्थिक और अन्य मदद की। लेकिन अुस सस्थाके साथ गाधीजी अेकरूप नही हो सके।

गाधीजीने 'देशसेवा करनेका तरीका सीखनेके लिअे और प्रत्यक्ष देशसेवा करने के लिअे' सत्याग्रहाश्रमकी स्थापना की। स्थापनाके पहले अुन्होने अपने विचार अेक योजनाके रूपमे छापकर देशके प्रमुख नेताओ के पास भेज दिये आर अुस पर अुनका सम्मतियाँ और रचनात्मक टीका-टिप्पणी माँग ली।

गाधीजोकी कल्पनाका दो-तीन प्रान्तोके लोगोने स्वागत किया और अुन्हे आमन्त्रण भी दिया। गाधीजीने सोचा कि 'मैं जन्मसे गुजराती हूँ। देशसेवाका प्रारम्भ गुजरातसे और गुजराती भाषाके द्वारा करूँ और गुजरातका पैसा राष्ट्रसेवाके लिये लगाअूँ।'

आश्रमकी स्थापनाकी जव चर्चा चल रही थी तव मैंने अुन्हे सुझाया कि अहमदावाद नही, किन्तु अहमदावाद और वम्बअीके व.च सूरतके आसपास कही आश्रम खोलना अच्छा होगा। मेरी सूचना विचार करने योग्य है, अितना तो अुन्होने कहा। लेकिन वस्त्र-निर्माणके भारत के प्रधान केन्द्र, अहमदावादमे हा आश्रम खोलनेका अुन्होने निश्चय किया। और अहमदावादके पास, सावरमताके अुस पार कोचरव नामक गाँवमे वॅरिस्टर जीवणलालका अेक वगला किराये पर लेकर अुन्होने आश्रमकी स्थापना की। तुरन्त दूसरा अेक पडोसका वगला भी किराये पर लेकर आश्रमके वस्तारके लिअे अनुकलता प्राप्त की। अिस तरहसे भारतमे गाधीजीका आश्रमी प्रयोग शुरू हुआ।

राष्ट्रसेवाके लिअे आश्रम-जीवनकी नितान्त आवश्यकता है, अिसका साक्षात्कार गाधीजीको दक्षिण आफ्रिकामे ही हुआ था। और अैसे दो प्राथमिक प्रयोग अुन्होने वहाँ किये भी थे। अुनके जिक्रके विना सत्याग्रहाश्रमके प्रारम्भका खयाल ठीक नही हो सकता।

'अग्नि-सम्भव' प्रवृत्ति

औरोंके सुख-दुःखके साथ अेकरूप होना अुदार हृदयका लक्षण है। अपना विचार तो हरकोअी करता है। अपने लाभकी बात हरकोअी सोचता है। लेकिन दूसरेका दुःख समझना, अुसे दूर करनेकी कोशिश करना और अपना और पराया असा भेद नहीं करना यह छोटे मनके लिअे शक्य नहीं है। जिनका हृदय अुदार है अुनके लिअे सारी दुनिया मानो अेक खानदान बन जाती है।

गांधीजीके स्वभावमें महात्माके ये सब लक्षण बचपनमें थे। जब राजकोटमें प्लेग शुरू हुआ तब लोगोंकी सेवाका अेक अच्छा-सा प्रबन्ध अुन्होंने संगठित किया था। जब दक्षिण आफ्रिका गये तब वहांके लोगोंके दुःखके साथ वे अेकप्राण हुअे। अपने बाल-बच्चों और अपने रिश्तेदारोंके ही स्वार्थका विचार करके बैठ जाना अुनके लिअे नामुमकिन था। औरोंके बच्चोंकी पढ़ाअीका ख्याल वे ज्यादा करते हैं अपने बच्चोंकी ओर वे दुर्लक्ष करते हैं अुन पर अन्याय करते हैं असी शिकायत अुनके लड़के ही नहीं और लोग भी करते थे। घरके मेहमानोंकी सेवा करनेमें अुन्होंने अपने स्त्री-पुत्रोंकी बड़ीसे-बड़ी कसौटी की। घरमें मेहमान हिन्दू मुसलमान अीसाअी सब आते थे। अुनके कमरेमें रखा हुआ पेशाबका बरतन साफ करनेका काम भी माता कस्तूरबाको करना पड़ता था। हम कह सकते हैं कि गांधीजीके आश्रमजीवनका घरमें ही प्रारम्भ हुआ। असी विशाल कुटुम्ब भावनामें दक्षिण आफ्रिकाके दो आश्रम पैदा हुअे। गांधीजीका फिनिक्स सेटलमेण्ट और अुनके यहूदी मित्र अजानिसर कॅलनबॅकका टॉल्स्टॉय फार्म। जब दक्षिण आफ्रिकामें

सत्याग्रह शुरू हुआ और भारतीय लोग जेलयात्रा करने लगे तब अनके बाल-बच्चोके और दूसरे रिश्तेदारोके रहनेका सवाल खडा हुआ। अिस कारण भी अेक आश्रम चलाना जरूरी हो गया। सब जातिके, सब धर्मके और भिन्न-भिन्न भाषा बोलनेवाले लोगोके सहजीवनका सवाल गांधीजीको हल करना पडा। अिनमेसे अिस प्रयोगके द्‌वारा अुन्हे अपने जीवन-सिद्‌धान्तोका स्पष्ट दर्शन होने लगा।

जब दक्षिण आफ्रिकाके गोरोने स्थानिक झुलू लोगोके बलवेको दबाया और अुनकी कतल चलाअी (जिसे झुलू वॉर कहते है), तब गांधीजीने घायलोकी मदद करनेका काम बडी निष्ठासे किया और अिस तरह दयाके कार्यमे सरकारकी मदद की। अुन दिनो शरीरश्रमका और जान खतरेमे डालनेका जो अनुभव अुन्हे हुआ अुस परसे अुन्होने निश्चय किया कि जिसे आजन्म सेवा करनी है, सेवामें ही जीवन व्यतीत करना है, अुसके लिये ब्रह्मचर्यका पालन नितान्त आवश्यक है। अुन्होने देवी कस्तूरबाकी समति ली, व्रत लिया और अपने साथियोको भी अुसके लिअ प्रेरित किया।

अिस अरसेमे गांधीजीके हाथमे रस्किनकी किताब—Unto This Last आअी, जिसका सार अुन्होने अपनी छोटी किताब 'सर्वोदय' मे दिया है।

मानव-कुटुम्बमे सब लोग अेकसे है, सबकी सेवा समाजके लिये अेकसी महत्त्वकी है, सबको खाने-पीनेका अेकसा अधिकार है और मनुष्यके सब व्यवहार विशाल कौटुम्बिक भावना पर होने चाहिये, यह हो गया गांधीजीका जीवन-सिद्‌धान्त।

गांधीजीने अपनी सारी जायदाद अर्पण करके Phoenix Settlement की स्थापना की। अुसमे अेक प्रेस रखकर Indian Opinion नामक साप्ताहिक चलाने लगे। प्रेसका और अखबारका

काम आश्रमी ढगसे चलने लगा। मकान खडे करना, पानीका प्रबन्ध करना, खेती और बगीचा सब कुछ आश्रम-जीवनके पोषक किये। अिस प्रयोगमें West Polak Miss Schlesin आदि गोरे लोग भी शरीक हुअे। गुजराती, मद्रासी महाराष्ट्री हिन्दू मुस्लिम पारसी अैसा वायुमण्डल वहाँ बन गया।

गाधीजीने अपने आश्रमको Phoenix Settlement का नाम दिया सो खास सोचकर नही। फिनिक्स नामके गाँवके पास जमीन लेकर आश्रमकी स्थापना की अिसीलिअे यह नाम पडा। लेकिन अिस नामके पीछे अेक बडा रहस्य आज हम देख सकते हैं।

पश्चिमके पुराणोंमें फिनिक्स नामके अेक अदभुत पक्षीका जिक्र आता है। कहते हैं कि यह पक्षी जब बूढा बनता है तब स्वयं आग जलाकर अुसमें कूद पडता है। अुसकी मृत्युके बाद अुसके शरीरकी रक्षामेंसे दूसरा पक्षी पैदा होता है, जो अपने पिताकी परम्परा आगे चलाता है।

जब गाधीजीने ब्रह्मचर्यका व्रत लिया और परिवारका विसर्जन करके आश्रमजीवनकी स्थापना की तब वे सत तुकारामकी तरह कह सकते थे—

"जाळोनि ससार बसलों अगणीं।"

—कौटुम्बिक जीवनकी आहुति देकर अुसमेंसे जिस आश्रमकी अुन्होंने स्थापना की अुसे हम फिनिक्स या अग्नि-सम्भव कह सकते हैं।

आगे जाकर दक्षिण आफ्रिकाका काम पूरा करके जब वे कायमके लिये भारतवर्ष आये तब अुन्होंने अपनी सारी जायदाद वहींकी वहाँ छोड दी। थोडी किताबें और लोगोंके प्रेमसे दिये हुअे मानपत्र लेकर वे हिन्दुस्तान आये। अिधर अुन्होंने सत्याग्रहाश्रमकी स्थापना की।

दक्षिण आफ्रिकाकी सारी प्रवृत्ति समेटकर, औरोंको सौंपकर जब वे केवल वहाँका अनुभव ले आये, और आश्रमकी स्थापना की तब अुनके सत्याग्रहाश्रमको हम जरूर 'अग्निसम्भव' कह सकते हैं।

अिसी ख्यालको आखिर तक समझनेके लिये कुछ आगेकी बात भी यहीं पर देना अच्छा होगा।

साबरमती आश्रमसे प्रेरणा पाकर श्री जमनलालजीने वर्धामें अेक आश्रम खोला और अुसमें श्री विनोबाजीकी स्थापना की। देशमें जगह-जगह आश्रम स्थापित किये गअे।

जब गांधीजीके आश्रमकी शालामेंसे विकसित रूपमें गुजरात विद्यापीठकी स्थापना हुअी तब अुसीके नमूने पर काशी विद्यापीठ, बिहार विद्यापीठ, पूनाका तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ आदि अनेक संस्थाअें स्थापित हुअीं।

अिसके बाद अँग्रेजोंकी दमन-नीतिका निषेध करनेके लिये साबरमतीका सत्याग्रहाश्रम भस्म करनेके दिन आये, तब श्री जमनालालजीने गांधीजीका नाम लेकर गांधी सेवा संघकी स्थापना की। यह भी अेक तरहका अग्निसम्भव संघ ही था। आश्रमवासी श्री किशोरलालभाअी मशरूवाला गांधी सेवा संघके अध्यक्ष बनाये गअे। अिस संघने सारे भारतके गांधी-विचारके लोगोंको संगठित किया।

देशकी हालत ही अैसी बदलती गअी कि सुभाषबाबू जैसोंकी टीकाके जवाबमें और अपना कार्य व्यापक करनेके लिये भी गांधीजीने गांधी सेवा संघका पद्‌मा नदीके किनारे मालिकान्दा स्थान पर होम कर दिया। गांधीजी वर्धामें आकर रहे। वहाँकी प्रवृत्ति भी अिस तरह अग्निसंभव ही थी। कुछ दिन महिलाश्रममें, बादमें मगनवाड़ीमें और आखिरकार सेवाग्राममें वह चली। लेकिन हर जगह आश्रमी वातावरण होते हुअे भी अुसमें गांधीजी पूरे-पूरे ओत-प्रोत नहीं हो सके। गांधीजी

जहां जाते थे फिर वह नोआखालीका काजीरखिल हो अथवा दिल्लीकी भंगी कालोनी हो, वायुमण्डल तो आश्रमका ही रहता था।

गांधी सेवा संघका विसर्जन करनेके बाद गांधीजी वर्धामें आकर रहे और श्री विनोबा भावे गोपुरी और पवनारकी ओर चले गये।

गांधीजीके देहान्तके बाद गांधी सेवा संघका व्यापक स्वरूप सर्व सेवा संघ और सर्वोदय समाजके नामसे प्रकट हुआ। अिस सर्व सेवा संघने विनोबाकी भूदान और ग्रामदान प्रवृत्ति आजमाओ और अुनके द्वारा व्यापक सर्वोदय समाजकी स्थापना हो रही है।

अिस सर्वोदय समाजका सौम्य विकास होगा हिन्दुस्तानी तालीमी संघके द्वारा और अुग्र अुत्कट विकास होगा शान्तिसेनाके द्वारा।

अगर अिसमें हम कामयाब हुअे तो दुनियामें जगह-जगह समाजसत्तावाद और साम्यवाद सर्वोदयका रूप धारण करेगा। यह सब सर्वेश्वर भगवानके हाथमें है।

अिस वक्त तो हम गांधीजीके सत्याग्रहाश्रम नामक आश्रमी प्रयोग या अितिहास केवल रूपरेखामें रजू करना चाहते हैं।

समन्वय-संस्कृतिका अुद्‌गम-स्थान

समस्त मानवजातिके कल्याणका किसी भी तरह अनहित न हो अैसे ढगकी देशकी सेवा करना और अैसी सेवा करनेके लिअे अपनी योग्यता वढाना यही था गाधीजीके सत्याग्रहाश्रमका अुद्देश्य ।

आदमी द्वारा शुद्ध सेवा तभी हो सकती है जब अुसका निजी जीवन शुद्ध हो, मानवी कल्याणकी अुसकी कल्पना निर्दोष हो और सेवाके लिअे जरूरी कौशल्य अुसने हासिल किया हो ।

अैसी विविध योग्यता हासिल करनेके लिअे गांधीजीने आश्रमके सामने ग्यारह व्रत रखे ।

अिनमेसे पहले पाँच व्रत तो अेक या दूसरे रूपमे सब धर्मोकी वुनियादमे पाये जाते है, हिन्दू, वौद्ध और जैन साधनाक्रममे और योग-शास्त्रमे भी अिन्हे यम कहा जाता है । पाँच यम और पाँच नियम मिल-करके मनुष्यकी व्यक्तिगत और सामाजिक साधनाकी वुनियाद मजबूत होती है । सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह और सयम अथवा ब्रह्मचर्य ये हैं पाँच यम, यानी सयमके प्रधान क्षेत्र । और शौच (स्वच्छता), सन्तोष, तप, स्वाध्याय, अीश्वर-प्रणिधान ये नियम मिलकरके मनुष्यकी आत्मिक, सामाजिक और आध्यात्मिक साधनाकी वुनियाद मजबूत होती है ।

गाधीजीने पांच यमोका यह सार्वभौम अुपयोग देखकर और अुनकी संस्कृति-समन्वयकी शक्ति पहचानकर अुन्होंने आश्रमजीवनका प्रारम्भ किया और अपने जीवन, चिन्तन, अनुभव और तुलनाके वलपर अुन्होंने

दूसरे छह व्रत अिनके साथ रख दिये। ये छह व्रत भी आजकी मानवजातिके व्यक्तिगत, सामाजिक, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय जीवनके दोषोंको पहचानकर ही यहाँ रखे गये हैं। अिनमेंसे अेक है निर्भयता। दूसरा है शरीरश्रमकी निरपवाद सार्वभौम आवश्यकता। संयम, अपरिग्रह और निर्भयता तीनोंकी साधनाके लिअ जरूरी है अस्वाद व्रत। अिस बातको आजकी दुनियाके सामने रखनेकी हिम्मत गांधीजी ही कर सके। 'जित सर्व जितं रसे' — अिस सिद्धान्तका महत्त्व जितना गांधीजीने पहचाना था उतना शायद ही किसी दूसरे समाजसेवकने, स्मृतिकारने या धर्मकारने पहचाना होगा।

दुनियामें मानवकी अुन्नतिके लिअे स्थापित धर्म अनेक हैं। ये सब धर्म सारी अुन्नतिके मूलमें हैं। लेकिन संकुचितता और अभिमानके कारण मनुष्यने धर्मको लेकर ही झगड़े शुरू किये। पृथ्वीके सभी खण्डोंमें अनेक धर्म चलते हैं और अुनके बीच तनाजा भी हमेशा चलता रहता है। स्वार्थ, लोभ, ओर्ष्या और अहंकारके कारण मानव मानवके बीच, वर्ग वर्गके बीच जो तनाजा चलता है अुसकी बुराअी तो मनुष्य झट पहचान सकता है। धर्म धर्मके बीच और संस्कृति-संस्कृतिके बीच जो तनाजा पाया जाता है अुसे दूर करना सबसे कठिन काम है।

अिस तनाजेको दूर करनेके लिअ गांधीजीने अेक व्रत सुझाया है सर्व-धर्म-समभावका।

दुनियामें जो जितनी होड चलती है, हरअेक खण्डके लोग खास करके यूरप अमेरिकाके पश्चिमी लोग जो संघर्ष और प्रतिद्वंद्विता चलाते हैं अुनका अिलाज गांधीजीने स्वदेशीमें ढूँढा। और अुसे आध्यात्मिक रूप दिया।

गांधीजीने यह भी देखा कि पश्चिमके गोरोंने, गोरोंके और रंगीन लोगोंके बीच जो झगड़ा चलाया है, अपनी चमड़ीके रंगके कारण जो

अूच-नीचका भाव अुन्होंने वढाया है अुसीका अन्तिम रूप हमारे स्पर्शा-स्पर्शके दोपमे सगठित हुआ है। अपने-परायेका भेद जव वढता है, तव मनुष्य अन्धा होकर अस्पृश्यता जैसे महापाप समाजमे चलाता है। अगर अस्पृश्यता दूर की, अुच्च-नीच भाव दूर किया, अपना और परायेका भेद नष्ट किया तो विश्वकुटुम्वभाव स्थापित होगा और हम तहे दिलसे गा सकेंगे—

"कोअी नहीं है गैर, वावा, कोअी नहीं है गैर।"

भारत, यूरप (अमेरिका) और अफ्रीका अिन तीनो खण्डोके राज-नीतिक, सामाजिक तथा वाशिक झगडोका निरीक्षण करके गाधीजीने अिसका अिलाज वताया और जो आश्रमके ग्यारह व्रत तैयार किये, अिन व्रतो द्वारा नव-मानवताका निर्माण करना यही था अुनका विराट् आदर्श।

भारतीय सभ्यताका स्वभाव ही है कि हरअेक कल्पनाको सादा, सार्वभौम और साथ-साथ नम्र रूप दे देना। अिसीलिअे आश्रमके अुद्देशों, व्रतो और नियमोमे कही भी कल्पना-गौरव पाया नही जायगा।

वचपनमे अपने पिताकी सेवा करते अुन्होने अुनके मुँहसे जो धर्म-चर्चा सुनी थी अुसका चिन्तन करके गाधीजी सघर्ष और समन्वयके स्वरूपको पहचान गये थे। विलायतमे अुन्होने अीसाअी धर्म और हिन्दू-धर्मके मूलभूत सिद्धान्तोका अध्ययन, मनन तथा चिन्तन किया। पूर्व और पश्चिमके सामाजिक जीवनके गुण-दोप देख ही लिये थे। दक्षिण आफ्रिकामे धर्मोके तनाजे, वर्ण-विद्वेप और वश-विग्रह (racial conflict) का पूरा दर्शन किया। और धर्माभिमान, वर्णाभिमान, चमडीके रगका अभिमान और सामर्थ्य और वैभवका अभिमान यह सव देखकर और अिनके कारण मानवता, वन्धुता और विश्वकुटुम्ववाद कैसे छिन्न-भिन्न होते हैं यह सव अुन्होंने देख लिया और वे समझ गये कि जव तक

मानस-परिवर्तन, जीवन परिवर्तन और समाज-परिवर्तन नहीं करेंगे तब तक मानव-जाति कृतार्थ नहीं हो सकेगी। अिसलिअे अुन्होंने आफ्रिकामें अपने घरमें और अपने साथ काम करनेवाले सब साथियोंके जीवनमें अुन्होंने परिवर्तन करना शुरू कर दिया। यही था अुनके आश्रम जीवनका प्रारम्भ।

भारतीय संस्कृतिके गुण-दोष अुन्होंने देखे थे। जातिका अभिमान, वर्णाभिमान, दूसरी जातियोंके प्रति तिरस्कार, हिन्दू व मुस्लिम आदि जातियोंका परस्पर अज्ञान और सहानुभूतिका अभाव, गोरोंकी अुद्धतायें यह सब अुन्होंने देख ही लिया था। अिन दोषोंके कारण अपना बड़ा राष्ट्र कितना दुर्बल, रोगी, अपमानित और दयनीय बन गया है अिसका अनुभव अुन्हें था। भारतमें हमने अछूतोंकी जो स्थिति कर रखी थी वही स्थिति नियतिने दक्षिण आफ्रिकामें हमारे लोगोंकी करके हमें अेक बड़ा सबक सिखाया और गांधीजीने तो अिसका अनुभव सिरसे पांव तक हरअेक हड्डीमें किया। अिसी अनुभवके कारण अुनका चिन्तन शुरू हुआ और अुनकी आस्तिकताने अुन्हें रास्ता सुझाया। वह रास्ता टाल्स्टाय फार्म और फीनिक्सके सेटलमेंटके द्वारा अुन्होंने आजमाया।

गांधीजीने यह भी देखा कि यूरोपके जागरूक, पराक्रमी, सतर्क और संगठित लोगोंने विज्ञानके बलपर सारी दुनियाको अपने हाथमें ले लिया है और आश्रित बना लिया है। अिस बड़ी आसुरी शक्तिका मुकाबला करना हो तो वह आत्मिक शक्तिसे ही हो सकता है।

गांधीजीका यह आविष्कार या साक्षात्कार मानवजातिके विकासमें सबसे महत्त्वकी घटना है। केवल भारतके लिअे नहीं किन्तु सारे विश्वके लिअे यह अेक लोकोत्तर घटना है।

आजकलके लोग काल-गणना औसाके पूर्व और औसाके पश्चात B C और A D जैसे भेदसे करते हैं। जब मनुष्यजातिका बाल्यकाल

दूर होगा, अन्धकार-युग हट जायगा तब लोग काल-गणनामे और मानवी अितिहासके विभागमे सत्याग्रहके जन्मके पहलेका अितिहास और सत्याग्रह के अवतारके बादका अितिहास अैसे विश्व-अितिहासके दो विभाग करेगे।

भारतभाग्यविधाताने दुनियाके सब वर्गके लोगोको भारतमे ला छोडा है। और दुनियाके सब धर्मोके धर्म-जीवनके प्रयोग भी भारतमे ही बो दिये। अिस तरह भारत बहुवर्गी, बहुधर्मी देश बना है। यहाँ पर शान्ति, न्याय और कौटुम्बिक भाव स्थापित करना आसान नही है। लेकिन अगर कही भी सर्वप्रथम स्थापित हो सकता है, तो अिसी देशमे हो सकता है। और सर्व-समन्वयका यह नया सन्देशा अिसी देशमे बाहर फैल सकता है।

अितिहासविधाताने भिन्न-भिन्न संस्कृतियोका समन्वय करनेका मिशन भारतको ही सौपा है और अुसकी सिद्धि आश्रमजीवनके द्वारा ही हो सकती है।

यह सब देखकर गाधीजीने आश्रममे सब धर्मोके और सब वर्गोके लोगोको अिकट्ठा किया, सबकी प्रार्थनाको अेक साथ चलाया, सबके लिअे समान हो सके अैसा अेक आहार ढूंढ निकाला और रसोअी बनानेमे लेकर टट्टी साफ करनेके काम तक सब कार्योके द्वारा सबको सादगी, श्रमजीवन और सर्वसमताके पाठ पढाये और अुन्होने दिखाया कि जो बात आश्रम मे शक्य है, सिद्ध हो चुकी है वह बात सारे भारतमे और धीमे-धीमे सारी दुनियामे सिद्ध हो ही जायगी।

गाधीजीने तेंतीस बरसो (अेक शतकके तिहाअी भाग) तक जितनी भी प्रवृत्तियाँ की अुनका अुद्गम आश्रमके जीवनमे ही है। अिसलिअे आश्रम-सिद्धान्त, आश्रमके व्रत, आश्रमका जीवन और आश्रमकी प्रवृत्ति अिनका सूक्ष्म अध्ययन करना जरूरी है।

आश्रम सांस्कृतिक जामन

आश्रम शब्दके दो अर्थ हैं। शहरसे बाहर या जंगलमें जहाँ ऋषि लोग धर्मसाधनाके लिओ रहते हैं अैसे स्थानको आश्रम कहते हैं। अैसे स्थान पर ऋषि लोग लड़कों और लड़कियोंको विद्यार्थीके तौर पर पास रखकर सिखाते भी थे। आश्रम शब्दका सम्बन्ध श्रमसे तो है ही। आश्रममें अन्नोत्पत्तिके लिओ श्रम करना अग्निकी अुपासनाके लिओ समिधा आदि जंगलकी चीजें लाना और तपस्या द्वारा श्रमित होना यह सब बातें आ जाती हैं। अैसे श्रमजीवनके आश्रयस्थानको आश्रम कहते थे। आश्रम शब्दके साथ निष्पाप और सेवामय जीवन तपस्या संयम की पवित्रताका स्थान आ ही जाता है।

अैसे आश्रमके साथ जंगलकी खेती, वृक्ष-वनस्पति और पशु-पक्षियों का भी सम्बन्ध आ जाता है। रवीन्द्रनाथने अपनी 'साधना' में *आरण्यक जीवन आरण्यक विश्वविद्यालय और आरण्यक संस्कृतिके बारे* में लिखा ही है। यह संस्कृति दीवालोंकी संस्कृति जैसी सीमा-बद्ध नहीं होती मुक्त होती है। वृक्ष-वनस्पति और पशु-पक्षी आदिके सहवासके कारण भी आश्रम-जीवन सम्पूर्ण जीवन होता है और अरण्यवासके कारण आदिम जाति आरण्यक लोगोंका भी सम्बन्ध अिसमें आता है। अक्सर पाया गया है कि आश्रमके अिर्दगिर्द रहनेवाले आदिम जातिके लोग ऋषि मुनियोंकी भक्तिभावसे सेवा करते-करते बहुत कुछ सांस्कृतिक लाभ अुठाते थे। अिस तरह भारतमें आर्योंकी संस्कृतिका प्रचार आरण्यकोंमें कुछ-न-कुछ होता ही था।

खुद आर्योंके जीवनमें भी अिन आश्रमोंका जामनके जैसा अुपयोग

होता था। विलासी राजा लोग और श्रेष्ठी वैश्य लोग बीच-बीचमे कुछ कालके लिये आश्रमोमे जाकर रहते थे और अपने जीवनके काट (जग) को अुतारते थे। कोअी राजा लडाअीमे हारकर अपना राज खो बैठा अथवा किसी वैश्यका चित्त अुद्विग्न हुआ तो अैसे लोग भी आश्रमो का आश्रय लेते थे और अपनी जीवन-धाराको मोडकर अुसे आध्यात्मिक प्रवाहमे बहा देते थे।

प्राचीन आश्रमोमे कभी-कभी द्वादश वार्षिक अथवा छोटे-मोटे अनेक सत्र होते थे, जिनमे अनेक धर्मनिष्ठ, अनुभवी विद्वान् अिकट्ठा होते थे और धर्मचर्चा द्वारा सस्कृति-सवर्धन करते थे। रामायण, महाभारत आदि पवित्र ग्रन्थोका निर्माण भी अैसे ही सत्रोके बाद होता था।

अिस तरह आश्रमजीवन अनेक अर्थोमे आर्योके सास्कृतिक जीवन की बुनियाद ही थी।

वर्तमान कालमे गाधीजी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, अरविन्द घोष, स्वामी विवेकानन्द, दयानन्द सरस्वती, श्रीमती अॅनी बेजट, रमण महर्षि, नारायणगुरु अित्यादि लोगोने अपने नये ढगके आश्रम खोलकर पुरानी परम्पराको अबाधित रखा है और नया रूप भी दिया है।

आश्रम-शब्दका असली भाव कायम रखकर अिन लोगोने अपनी-अपनी सस्थाको आधुनिक रूप दिया है। अगर हम अिन सारे आश्रमो का अितिहास ढूंढे तो हरअेकका रूप, हरअेकका आदर्श और हरअेकका जीवन-क्रम स्वतन्त्र और भिन्न भी है और भविष्यकालकी मनोरचना और समाज-रचनाका जो लोग मनन और चिन्तन करते है वे कबूल करेगे कि आजके जमानेको अिन सब आश्रमोकी जरूरत थी ही।

: २ :

आश्रम-शब्दका दूसरा अर्थ है द्विजोकी सस्कारी आयुके तीन या चार विभाग।

जिस तरह हमारे पुराने समाजने ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र अैसे चार वर्ण बनाये, असी तरह हरअेक मनुष्यके जीवनके ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ और संन्यास अैसे चार विभाग भी किये हैं। अिसी वर्णाश्रम-व्यवस्थाको आर्यजीवनकी सामाजिक बुनियाद भी माना है।

अिस आश्रम-व्यवस्थामें अभ्युदय और निःश्रेयस, प्रवृत्ति और निवृत्ति दोनोंका समन्वय भी किया है।

पहले ब्रह्मचर्याश्रममें जहाँ केवल तपस्याका आन्तरिक जीवन ही प्रधान है, असका नाम अगर हम छात्र-दशा या शिष्य-गुरुकुलवास रखें, अन्तेवासी छात्रोंकी सर्वाङ्गीण शिक्षाका आरम्भ जिसमें प्रधान है अैसे ऋषियोंके आश्रममें आश्रम-जीवनके दोनों अंग अलग-अलग हैं।

ऋषियोंके अैसे विशाल आश्रमोंमें नैष्ठिक ब्रह्मचारी भी रहते थे, गृहस्थाश्रमी स्वयं अुपाध्याय भी रहते थे। सारे समाजकी संस्कारिताकी दीक्षा देनेका भार अुठानेवाले संयमधन आचार्य भी रहते थे और वानप्रस्थ और संन्यासी भी (जो सब अपनी सेवा देनेके लिअे) अैसे आश्रमोंका आश्रय लेते थे।

अितिहाससे मालूम होता है कि अैसे विशिष्ट प्रकारके आश्रम बड़े विश्वविद्यालयका काम करते थे और राजधानीके आसपास ही किसी अनुकूल स्थान पर चलते थे। [आन्ध्रमें विजयवाड़ा और अमरावती अैसे दो केन्द्र परस्पर पूरक थे। अेक थी राजधानी और दूसरी थी सांस्कृतिक विद्याधानी।]

अैसी प्राचीन परम्पराको बिलकुल ही नया रूप देनेके लिअे जो आधुनिक आश्रम हुअे, अुनमेंसे कुछ नाम नमूनेके तौर पर अूपर दिये हैं। अिन्हींमेंसे गांधीजीके सत्याग्रहाश्रमके हेतु, अुद्देश और कार्यपद्धतिके बारेमें कुछ सोचना है। बाकीके सब आश्रम कायमी संस्थाके तौर पर स्थापित हुअे हैं। दीर्घकाल तक अपना काम करते रहेंगे।

स्वय गाधीजीका जीवनकार्य क्रान्तिकारी होनेसे और अुनका काम युगान्तरका होनेसे अुनका आश्रम और अुनकी प्रेरणासे स्थापित हुअे देशभरके अनेकानेक आश्रम कुछ स्थायी रूप पकड नही सके। यह अुनका कोअी दोष नही था। अेक जबरदस्त बीज बोनेका काम गाधीजीने और अुनके आश्रमने किया। अब अुसके जड पकडनेके और स्थायी मजबूत पौधा बननेके दिन आये है। गाधीजीकी और सत्याग्रहाश्रमकी प्रेरणासे जो नये आश्रम भविष्यमे बनेगे अुनका रूप सत्याग्रहाश्रमके-जैसा नही बनेगा। कुछ अलग ह्. बनेगा। क्योंकि गाधीजीकी प्रेरणा अेक तरहसे अग्निसभव ही है।

अिसीलिअे गाधीजीके आश्रमी प्रयोगका हेतु और स्वरूप अच्छी तरह समझना जरूरी है।

आश्रमी जीवन

जब गांधीजी दक्षिण आफ्रिकामें अपना काम सफलतापूर्वक पूरा करके हिंदुस्तानमें आओ (१९१५) तब अुनके बारेमें देशमें बड़ी आशा जाग्रत हो चुकी थी। गांधीजी भी देशके बारेमें बहुत बड़ी आशा लेकर आओ थे। भारत-सेवक नामदार गोखले, विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर, दीनबन्धु चार्ली ॲण्ड्र्यूज जि० लोगोंने अुनकी स्तुति की थी। आर्य समाजी गुरुकुलके महात्मा मुन्शीराम, दिल्लीके स्टीफन्स कॉलेजके प्रिन्सिपल रुद्र, मद्रासके सम्पादक प्रकाशक जी० अे० नटेसन्, बम्बओके समाज-सुधारवादी श्री नटराजन जि० लोगोंके साथ अुनका घनिष्ठ सम्बन्ध था। रंगूनके बरिस्टर जौहरी डा० प्राणजीवन मेहता अुनके जी-जान दोस्त थे। श्रीमद् राजचन्द्र जैसे जैन अध्यात्म-साधकके साथ अुनका गहरा पत्र-व्यवहार था। भाओी कोतवाल जैसे राष्ट्रसेवारत महाराष्ट्री दक्षिण आफ्रिकामें जाकर अुनके साथ रह आये थे। राजकोटके डॉ० शुक्ल जैसेके साथ अुनका व्यक्तिगत परिचय था और वे स्वयं भारतके करीब सबके-सब राष्ट्रनेताओंको और राष्ट्रसेवकोंको कभी-न-कभी मिल चुके थे। सबके बारेमें वे कमोवेश जानते भी थे। सबका अभिप्राय था कि कर्मवीर मोहनदास करमचन्द गांधी अेक अच्छे और सच्चे राष्ट्रसेवक हैं, वह तत्त्वनिष्ठ हैं, स्वार्थत्यागी हैं और गरीबोंके प्रति अुनका प्रेम केवल तात्त्विक नहीं किन्तु सेवामय है।

जब गांधीजी हिंदुस्तानमें रहने आओे तब देशमें निराशा और अंधकारका वायुमण्डल था। बहुत-सी प्रवृत्तियां निष्फल साबित हो चुकी थीं और परिस्थितिपर किसीका भी काबू नहीं था। सार्वजनिक जीवन

परिपुष्ट हो सके जिसके लिअे जिन-जिन राष्ट्रीय सद्गुणोंकी आवश्यकता होती है, अुनका करीव-करीव अभाव-सा था। सव लोगोके मनमे गांधी-जीके प्रति सद्भाव था। अुनके दक्षिण आफ्रिकाके भगीरथ प्रयत्नोके वारेमे सामान्य लोगोंने थोडा कुछ सुना था, आदरसे सुना था। अिस-लिअे अुनके प्रति लोग आशाकी नज़रसे देख रहे थे। लेकिन राष्ट्रके नेताओंने नही माना था कि यह राष्ट्रपुरुष कोअी युगान्तरकारी कार्य करके दिखायेगा।

दक्षिण आफ्रिका छोडकर, विलायत होकर गाधीजी हिन्दुस्तान आये अुसके पहले अुन्होने अपने चुनिन्दा कार्यकर्ताओको और कुटुम्बी-जनोको हिन्दुस्तान भेजा। अुन लोगोको 'फीनिक्स पार्टी' कहते थे। क्योंकि हिन्दुस्तान आनेके पहले ये सव लोग दक्षिण आफ्रिकामे नाटाल राज्यकी राजधानी डर्वनके पास फीनिक्स गाँवमे अेक छोटा-सा समूहजीवन वना कर रहे थे। गाधीजीने अुसका नाम रखा था 'फीनिक्स सेटलमेंट'। गांधीजीके यहूदी अिन्जिनियर मित्र कॅलनवैकने भी टॉलस्टॉय फार्म नामक अेक समूह जीवन चलाया था, जिसके साथ भी गाधीजी ओतप्रोत थे।

अंग्रेज लेखक,चिन्तक और कलाविवेचक जॉन रस्किनकी किताव Unto This Last पढकर अपने जीवनमे परिवर्तन करनेकी गांधीजीको प्रेरणा हुअी थी। अुसके अनुसार प्रथम अपने घरका रूपान्तर अुन्होंने किया। वादमे फीनिक्स सेटलमेंट और टॉलस्टॉय फार्मकी स्थापना की और रशियाके महात्मा टॉलस्टॉयके विचारोके अनुसार समाज-परिवर्तन और समाज-सेवाका आदर्श आजमानेका अुन्होंने सकल्प किया।

लेकिन कोअी यह न समझे कि गाधीजीकी प्रेरणा अुन्हे परदेशसे ही मिली। विलायतमे विद्यार्थी थे तव और आफ्रिकामे वैरिस्टरी करते थे तव भी अुनका अपने धर्मका अध्ययन पारमार्थिक भावसे चलता ही था। अुन्होंने भगवद्गीता पढी थी, तुलसी रामायण पढा था, योग-

साधनाके रंगमें रंगा था। श्रीमद् राजचन्द्रके चिंतन-ग्रंथ अुनके पास पहुँच गये थे। वैष्णव और जैन संस्कार अुन्हें बचपनमें मिले थे। और वे जानते थे कि भारतीय अध्यात्म जीवनका परिपाक आश्रमोंमें होता आया है। भारतीय आदर्शोंकी प्रेरणा अुनके पास थी ही। अुनके श्रद्धाधन हृदयने अुन आदर्शोंको श्रद्धासे भक्तिसे सेवन किया था। किन्तु यहाँके परंपरागत रूढ़ जीवनसे अुनका अुद्धार नहीं हो गया था। युवावस्थासे ही स्वतन्त्र प्रयोग करनेकी वैज्ञानिक वृत्ति और हर चीज आजमाये बिना स्वीकार न करनेकी जिज्ञासावृत्ति अुनमें प्रथम थी और जिस अुम्रमें मनुष्यका मन और हृदय कुछ-न-कुछ रूप पकड़ता है अुस अुम्रमें गांधीजीको हिन्दुस्तानके बाहर रहकर हिन्दू जीवनसे भिन्न अैसे समाजोंका परिचय पानेका और सूक्ष्म निरीक्षण करनेका मौका मिला था।

भारतीय आश्रमोंमें हजारों वर्षोंके जीवनके कारण जो जड़ता आ गयी थी, अुसके बीच आश्रमोंने जो अपना धार्मिक स्वरूप बनाया था अुसके अन्दर वे पैठ नहीं सके और अिसलिअे अुनके मनमें सर्वसाधारण अश्रद्धाभाव जड़ नहीं पकड़ सका था। अति परिचय और अति अनुभवके कारण जो अश्रद्धाभाव होता है और अनादर पैदा होता है अुसके शिकार वे नहीं बने थे।

कार्यकर्ता मिले और अुनकी श्रद्धासे जो वल मिला अुसके आधार पर अुन्होने भारतमे आते ही राष्ट्रसेवाके लिअे अेक आश्रमकी स्थापना की। गिरे हुअ समाजको अगर फिर अुठाना है, निराशाका जाडा अगर दूर करना है तो आध्यात्मिक अगीठी खडी करनी चाहिअे असा सोचकर अुन्होने अेक आश्रमकी स्थापना करनेका तय किया।

दक्षिण आफ्रिकामे प्रतिकूल परिस्थितिका सामना करनेके हेतु और यूरपकी अजेय शक्तिका मुकावला करनेके लिअे अुन्होने जिस आध्यात्मिक वलका आवाहन किया था अुसको यथार्थ भारतीय नाम अुन्होने दिया 'सत्याग्रह'। भारतमे सव सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक रोगोका अिलाज अुन्होने सत्याग्रहमे पाया था अिसलिअे आश्रम-जीवन और सत्याग्रहको लेकर अुन्होने अपनी भारतीय प्रवृत्ति शुरू करनेकी ठानी। हिन्दुस्तानमे आते ही सव प्रान्तोमे घूमकर देश-स्थितिका अुन्होने निरीक्षण किया। अनेक आमन्त्रणोका विचार किया और स्वय गुजराती होनेके कारण अुन्होने गुजरातमे अपने आश्रमकी स्थापना करनेका निश्चय किया।

सत्याग्रह आश्रमके हेतु, अुसके अुद्देश, जीवनके सिद्धान्त और कार्य-पद्धतिका जरूरी चित्र, सव मिलाकर गाधीजीने अेक छोटा-सा पत्र तैयार किया और अनेक मित्रोके प्रति रचनात्मक टीका पानेके अुद्देशसे अुसे भेज दिया। अुस समय सस्थाका नाम भी अुन्होने निश्चित नही किया था। दो-चार नाम सूचित किअे थे।

अिस नियमावलिके अनुसार आश्रमका अुद्देश देशकी सेवा करते सीखना और देशसेवा करना यही था।

आश्रमकी वुनियादमे अुसके ग्यारह व्रत थे जिनमेसे पाँच तो भारतीय सव धार्मिक परम्पराकी योगसाधनाकी वुनियादमे थे ही।

योग-साधनामे चित्त-शुद्धि और जीवन-शुद्धिके लिअ पाँच यम और

पाँच नियम बताये गये हैं। पाँच यमोंके बदले भगवान पार्श्वनाथने चातुर्याम धर्म कहा है। सत्य, अहिंसा, अस्तेय और अपरिग्रह ये हैं पार्श्वनाथके चार याम। आदर्श अध्यात्म-परायण समाज-सत्ताकी स्थापना करनी हो तो अुसकी बुनियादमें सत्य, अहिंसा, अस्तेय और अपरिग्रह ये चार जीवनसिद्धान्त होने ही चाहिये यह स्पष्ट करनेवाला अेक निबन्ध बहुत बरसोंके पहले श्री धर्मानन्द कोसम्बीने लिखा है। भगवान् पार्श्वनाथ मानते थे कि अपरिग्रहमें ब्रह्मचर्य आ ही जाता है।[1]

पार्श्वनाथकी कल्पना कि अपरिग्रहमें ब्रह्मचर्य आ जाता है, जड़ नहीं पकड़ सकी, पर्याप्त नहीं मालूम हुअी और यमसमूहमें ब्रह्मचर्यको स्वतन्त्र स्थान दिया गया। अिस तरह सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्तेय और अपरिग्रह ये पाँच यम सर्वमान्य हो गये। पाँच यमोंके साथ पाँच नियम भी बनाये हैं। अुनका पालन यमोंके जैसा नित्य और सार्वभौम नहीं है। अुनको आज हम छोड़ दें।

गांधीजीने पाँच यमोंके साथ और भी छः यम जोड़ दिये, जिनमें जिह्वा-जयका यम अस्वादके रूपमें बनाया है। शरीर-श्रमके बिना शारीरिक, मानसिक और खास करके नैतिक आरोग्य टिक नहीं सकता। अिसलिये शरीरश्रमको भी यमोंमें स्थान दिया और अुसके द्वारा समाज-जीवनका जो सबसे बड़ा रोग है शोषण, अुसका अुपाय भी बताया। जो लोग शरीरश्रम बचाना चाहते हैं वे औरों पर अपना अधिकार जमाते हैं और अुनको गुलाम या पशु बनाकर अुनकी मेहनतका नाजायज लाभ अुठाते हैं। सब समाजका मूल अन्याय है। अिसलिये शरीर

[1] [illegible]

श्रमको गाधीजीने आश्रमसिद्धान्तकी बुनियादमे स्थान दिया ।

अध्यात्मजीवनका प्रारम्भ, दैव। सम्पत्तिकी बुनियाद और सर्व तेजस्विताका अुगम निर्भयतामे है यह देखकर निर्भयता— भयवर्जनको आश्रम की बुनियादमे स्थान देना अपरिहार्य था ।

शोषणरहित समाजकी स्थापना करन। हो तो जिस तरह अहिंसा और शरीरश्रमका विकास करना चाहिअे अुसी तरह स्वदेशी वृत्तिका भी स्वीकार करना चाहिअे असा सोचकर गहरे अर्थके साथ गाधीजीने स्वदेशीको भी आश्रमकी बुनियाद बनाया ।

और भी अेक महत्वकी देन गाधीजीने आश्रमजीवनको दे दी। दुनियामे भिन्न-भिन्न वशके लोग केवल चमडीके रग अलग हैं या शरीर का बाह्यरूप कुछ भिन्न है अिस कारण अेक-दूसरेके लिअ पराये बन जाते हैं और बन्धुता भूलकर अेक-दूसरेके दुश्मन बनते है । अिस सकुचितताके दोषके कारण मानवजाति पीडित है ही, लेकिन सब वशके लोगोको अेकत्र लाकर अिनका अेक अखिल मानवीय परिवार बनानेके लिअे जिनकी स्थापना हुअी अैसे सब धर्मोमे भी वही सकुचितता आ गअी, जो वश-भेदके कारण मानव-जातिमे थी। वशभेदके कारण मानव-मानवके बीच जितने झगडे हुअे या हो रहे हैं अुनसे भी अधिक झगडे धर्मभेदके कारण होने लगे । जहाँ वशभेद थे वहाँ आतरवशीय विवाहोके द्वारा कुछ अिलाज हो सका । धर्मोके बारेमे सिद्धान्तोकी और रिवाजोकी जिद बढनेके कारण वह अिलाज कारगर नही हो सका । अिसलिअे भारतके मनीषिओने सब धर्मोका कमोवेश स्वीकार करनेकी जो नीति चलाअी अुसका लाभ गाधीजीने स्पष्ट देख लिया और सर्वधर्म-समभाव को आश्रमकी बुनियादमे स्थान दिया ।

वशभेदके कारण हो या धर्मभेदके, मनुष्य-मनुष्यके बीच खाअी पैदा करना महापाप है। अैसे अेक महापापको हिन्दुस्तानके समाजधर्मने

आश्रम-परम्परा और आश्रम-संहिता*

गाधीजीकी धर्म-साधना, अुनकी समाज-सेवा, जीवनका आदर्श, अुनके समाज-परिवर्तनकी रूपरेखा और अुनके सत्यके प्रयोगोकी बुनियाद यह सब अुनके आश्रम-जीवनमे आ जाता है।

किसी आदर्शको सामने रखकर अुसके अनुसार अपने जीवनका सगठन करनेकी अिन्तजारी बचपनसे ही गाधीजीमे थी।

जब वे दक्षिण आफ्रिका जाकर रहे तब अलग-अलग धर्मके और वर्गके साथियोको, सबधियोको, और सेवकोको साथ रखकर सम्मिलित जीवन चलानेका प्रयोग अुन्होने किया। वैसा करते अपने मामूली कौटुम्बिक जीवनको अुन्होने करीब-करीब निचो डाला।

अुसके बाद हेतुपूर्वक सामुदायिक जीवन जीनेके लिअे फीनिक्समे और अपने मित्र केलनबेकके टॉलस्टाय फार्ममे अुन्होने समूह-जीवनका प्रयोग चलाया। अग्रेजीमे अुसे Community life कहते है। हम अुसे आश्रम-जीवन कह सकते है।

सन् १९१५ मे भारतमे आनेके बाद जब अुन्होने देखा कि नामदार गोखलेके Servants of India Society (भारत-सेवक-समाज) मे अुनका दाखिल होना गोखलेजीके शिष्योके लिअे अनुकूल नही है, तब अुस सस्था के साथ अपना आध्यात्मिक सम्बन्ध कायम रखकर अुन्होने अहमदाबाद

* अिस लेखमें पहले दी गअी कुछ जानकारी दुबारा आअी है। लेकिन विषय-प्रतिपादनके लिअे वह सब आवश्यक होनेके कारण पुनरुक्तिका दोष सहनकर के भी अुसे वैसा ही रहने दिया है।

ने नजदीक अपना अक स्वतंत्र आश्रम खोला जिसका नाम अुन्होंने सत्याग्रहाश्रम रखा। गांधीजीके जीवनका सारा निचोड और अुनके व्यक्तित्व की सारी शक्ति और सुगंधी अिस आश्रम जीवनमें पाओ जाती है।

गांधीजीने क्रमशः अपने कौटुम्बिक जीवनका टॉल्स्टाय फार्मके समूहजीवनका, फीनिक्स सेटलमेंटका, सत्याग्रहाश्रम और गांधी सेवा संघका यथासमय विसर्जन किया और अक प्रयोगकी चिता भस्ममें से दूसरी और व्यापक संस्था पैदा होती गओ। ग्रीक पुराणोंमें फीनिक्स पक्षी की बात आती है जो अपना जीवनकाल पूरा होते ही अग्नि पैदा करके अुसीमें कूद पडता है और अुसीके चिता भस्म में से नया फीनिक्स जन्म लेता है। अिस पौराणिक काल्पनिक फीनिक्स पक्षीको मैंने अग्निसंभव कहा है। गांधीजीकी आश्रम-जीवनकी परम्परा फीनिक्स पद्धतिकी ही थी। अिसलिअे अुसको हम अग्निसंभव कह सकते हैं। गांधीजी आखिरतक अग्निपरीणाम से ही पसार हुअ हैं।

आश्रमी जीवनका यह प्रयोग गांधीजीने करीब अठारह या अुन्नीस बरस तक चलाया। आश्रमके आदर्श तक हम नहीं पहुंच सकते असे अंतर्मुख ध्यानमें अुन्होंने आश्रमका नाम बदलकर अुसे अुद्योगमंदिर कहकर देखा। लेकिन यह नया नाम चल नहीं सका। पुराना नाम ही अपनी आंतरिक शक्तिके बलपर कायम रहा।

गांधीजीने शुरूमें आश्रमकी नियमावली तैयार करके प्रकाशित की। अुसके साथ आश्रमके ग्यारह व्रतोंका विवरण भी था।

बादमें मेरी प्रार्थनाको स्वीकार करके अुन्होंने जेल-जीवनके दरमियान आश्रमका अितिहास लिखा जो अपूर्ण है। और गांधीजीको अुससे संतोष नहीं था। वे असे सुधारनेवाले थे। पूरा भी करने वाले थे। लेकिन वैसा नहीं हो सका।

अिसके बाद मेरे कहने से अुन्होंने आश्रमके व्रतोंका विस्तारपूर्वक

विवरण करनेवाले पत्र लिखे, जो 'व्रतविचार' या 'मगल-प्रभात' के नामसे प्रकाशित हुअे है।

'व्रत-विचार' नामक पत्रमाला पूरी करनेके वाद गाधीजीने आश्रम-वासियोके नाम दूसरे वाअीस पत्र लिखे, जिनका सग्रह 'आश्रमवासी प्रत्ये' के नामसे शाया हुआ है।

राजनीतिक और आतरिक परिस्थितिके कारण गाधीजीने सत्याग्रहाश्रमका विसर्जन किया और वे वर्धा, सेवाग्राम जाकर रहे। अुन दिनों श्री जमनालालजीने गाधी सेवा सघ नामकी भारतव्यापी अेक सस्था चलाअी, जिसको प्रेरणा और सलाह देनेका काम गाधीजीने पूरी निष्ठासे किया। हालाकि गाधी सेवा सघके अध्यक्ष तो श्री किशोरलाल मशरूवाला ही रहे। सत्याग्रह-आश्रममे देशसेवाके जो अलग-अलग कार्यक्रम चलाअे गअे, अुनके पीछे गाधीजीके विचार क्या थे, कैसे थे, अिसका विवेचन श्री मशरूवालाजीने 'गांधी-विचारदोहन' नामसे प्रकाशित किया है।

गाधीजीने अिस गाधी सेवा सघका विसर्जन सन् १९४० मे मालिकादा (पूर्व वगाल) मे किया। तव अुनका आश्रमी जीवन सेवाग्रामके निवास दरमियान विकसित हुआ। सेवाग्राममे आश्रम स्थापित करनेकी गाधीजीकी मुराद नही थी। मगनवाडी (वर्धा) से जव वे सेवाग्राम जाकर रहे तव वहाँ अकेलेही रहना चाहते थे। लेकिन माता कस्तूरवा को वहाँ आकर रहते वे रोक नही सके। श्रीमती मीरावहन भी अुनके नजदीक रहने के लिअे वहाँ पहुँच गअी। फिर धीरे-धीरे दूसरे भी लोग आ पहुँचे और आहिस्ता-आहिस्ता सेवाग्राम भी पूरा-पूरा आश्रम वन गया।

जव सेवाग्राम छोड़नेकी नौवत आअी, तव गाधीजीने अुसके लिअे— सेवाग्राममे कायमी ढगसे रहनेकी प्रतिज्ञा लेनेवाले लोगोके लिअे अेक नियमावलि वनाना चाहा, जिसका रूप लिखा हुआ है; लेकिन कच्चा है।

कअी सेवक और भक्त आश्रमके पवित्र वायुमडलमे विवाह जैसे शुभ

आश्रम जीवनके हेतु

आश्रमके द्वारा गांधीजीने नवजीवनके जो अनेक प्रयोग किये अुनका थोड़ा-सा जिक्र अुनके लिखे हुअे आश्रमके अितिहासमें आ जाता है। अुससे भी अधिक चर्चा और ब्योरा आश्रमवासियोंके नाम लिखे हुअे गांधीजीके पत्रोंमें पाया जाता है। आश्रमके व्यवस्थापक प्रारम्भमें श्री मगनलालभाअी गांधी रहे। अुसके बाद थोड़ी छगनलाल जोशी थे। अुनके बाद श्री नारायणदास गांधी। बीचमें श्री छगनलाल गांधी, चन्दुलाल भाअी, श्री रमणिकलाल मोदी, श्री चीमनलाल शाह आदि अनेक लोगोंको वह स्थान दिया गया होगा।

आश्रमकी बहनोंका दर्शसेवाके लिअे और नवजीवनके लिअे तैयार करनेके गांधीजीके प्रयत्नोंका जिक्र आश्रमकी बहनोंको लिखे हुअे पत्रोंमें आता ही है, जिनका सम्पादन मैंने अेकत्र कर दिया है और जिनका अनुवाद हिन्दी और अंग्रेजीमें भी हो चुका है। अुससे भी अधिक जिक्र आता है कुमारी प्रेमाबेन कंटकके नाम लिखे हुअे पत्रोंमें, जिनका सम्पादन मैं अभी-अभी कर चुका हूँ और जो किताब गुजरातीमें सुरन्त ही प्रकट होनेवाली है।[1]

अन्यान्य बहनोंको लिखे हुअे गांधीजीके पत्रोंका सम्पादन हो रहा है जिनमें आश्रमका विशेष जिक्र आता है श्री गंगाबहनके पत्रोंमें, क्योंकि वह काफी समय तक आश्रमके स्त्री-समाजका नेतृत्व करती थी।

आश्रमजीवनका अधिकसे अधिक जिक्र और रोजमर्राका ब्योरा

१ यह किताब नवजीवनकी ओरसे अब हिन्दीमें भी प्रकाशित हो चुकी है।

श्री मगनलालभाअी और श्री नारायणदासभाअीके नाम लिखे हुअे पत्रोमे मिलेगा ।

गाधीजीने अपने अितिहासमे आश्रमजीवनका विचार आश्रमके लिअे अुन्होने जो अनेक व्रत वताये अुनके अनुसार किया है । लेकिन हम दूसरे ढग से भी सोच सकते है ।

गाधीजीका सवसे पहला प्रयोग श्रममय जीवनका था । आश्रममे नौकरोको न रखते हुअे सवका सव काम आश्रमवासियोके द्वारा ही किया जाता था । हम लोग टट्टी साफ करना, कुअेसे पानी खीचकर लाना, आटा पीसना, वर्तन माँजना, कपडे सीना, रसोअी वनाना, अनाज आदि साफ करना अित्यादि काम तो करते ही थे, लेकिन कभी-कभी मेहमानोका असवाव अुठाकर ले जानेका काम भी हम लोगोने किया है । अेक मेहमानकी ट्रक अपनी पीठपर अुठाकर अेलीस व्रीज तक मै ले गया था, अिसका स्मरण मुझे आज भी है । अिसलिअे कि ट्रकके वोझके कारण मेरी पीठकी थोडी-सी चमडी अुखड गअी थी । मै यह कहनेको तैयार नही हूँ कि मैं नाजुकवदन था या वोझ अुठानेकी कलामे अनजान था ।

गाधीजीको आश्रमके द्वारा खेती करनेका अुत्साह नही था, लेकिन जैसा कि अिसमे पहले मै लिख चुका हूँ खेती और गोशाला चलानेका असाधारण अुत्साह श्री मगनलालभाअी गाधीमे था और अुन्हे असमे प्रोत्साहन देनेका गाधीजीने अपना कर्तव्य माना । गाधीजीका सारा ध्यान कपडे वुननेकी कलामे स्वदेशीका तत्त्व पूर्णतया लानेकी ओर था । कपासका वीज वोना, कपास अिकट्ठा करना, वीजसे रेषा अलग करना, कपास धुनकना, सूत कातना, सूतकी पाँजनी करके कपडेका ताना तैयार करना, कपडा वुनना आदि सव क्रियाअे आश्रममे होती थी । अितना ही नही लेकिन वुनाअी आदिके सव औजार भी आश्रममे वनते थे और अुनके सुधारके प्रयोग भी चलते थे ।

श्रममय जीवन और औद्योगिक कौशल्य दोनो प्रवृत्तियोकी वुनियाद

से शोषणरहित समाज स्थापन करनेका हेतु मुख्य था।

जातिभेदके कारण वर्णभेद या वर्गभेदके कारण दुनियामें जो अूंच-नीच भाव सर्वत्र फैला हुआ है अुसको निर्मूल करनेका अुद्देश्य भी श्रममय जीवन और आश्रमजीवनकी बुनियादमें था। केवल तत्त्वप्रचारसे लोग नये विचार समझ तो सकते हैं और धर्मबुद्धि जाग्रत रही तो नये तत्त्वोंका मनुष्य बौद्धिक स्वीकार भी करता है, लेकिन जब तक नित्य जीवनकी आदतोंमें कायमी परिवर्तन नहीं हुआ, तब तक मनुष्य नये नये विचारोंको अपने आचरणमें नहीं ला सकता। गांधीजीका शरीर और अुनकी आदतें मध्यमवर्गकी और वैश्य समाजकी थीं। केवल प्रबल संकल्पशक्तिके कारण झुलू युद्धमें और बोअर युद्धमें शरीरश्रम करनेमें वे अद्भुत विक्रम बता सके। सैनिकोंका काम भी अुन्होंने दीर्घकाल तक किया होगा। दस-दस बीस-बीस मील चलना, आटा पीसनेके लिअे घंटों तक चक्की चलाना अित्यादि काम तो वे करते ही थे। जूते बनाना, कपड़े सीना, रुअी धुनना, सूत कातना, रसोअी बनाना अित्यादि कौशल्ययुक्त श्रमकी ओर ही अुनका ध्यान ज्यादा था। नाजुक बनके मध्यमवर्गके लोगोंको श्रमजीवनकी ओर ले आनेका काम कितना कठिन है अिसका ख्याल गांधीजीको था, और यह सब किये बिना शोषणकी बुनियाद पर रचे हुअे समाजमें परिवर्तन हो नहीं सकता यह भी वे जानते थे।

मनुष्यमात्रके साथ और प्राणीजगतके साथ अपनी अेकता अनुभव करनेके लिअे भी श्रमजीवन जरूरी है और ब्रह्मचर्य अत्यावश्यक है यह अुनका विश्वास था। ब्रह्मचर्यका पालन आहारमें सादगी और सात्त्विकता लाये बिना नामुमकिन है, यह जैसा अुनका विश्वास था वैसा ही श्रमजीवनके बिना ब्रह्मचारीका निर्विकारी जीवन सिद्ध हो नहीं सकता यह भी अुनका दृढ़ विश्वास था।

हरअेक व्यक्तिके जीवनमें चार वर्ण प्रगट होने चाहिअे। हरअेक व्यक्ति ज्ञानकी अुपासना करे, आत्मरक्षाकी योग्यता हासिल करे, औद्यो

गिक कौशल्यमे प्रवीण हो, हिसाव-किताव वरावर रख सके, कुटुम्ब और समाजके सचालनकी सब खवियाँ जाने और सेवाके लिअे स्वात्मार्पण करनेका आदर्श असके सामने रहे यह सब आश्रमजीवनके प्रधान अग थे।

स्त्री-पुरुष समानताका अनुभव करनेके लिअे भी ब्रह्मचर्य और श्रम-मय जीवन दोनोकी आवश्यकता आश्रमकी वुनियादमे थी।

आश्रमजीवन और खास करके आश्रमकी प्रार्थना द्वारा सर्व-धर्म-समभावका विराट् प्रयोग गाधीजीने चलाया। दुनियाके अितिहास का अेक वहुत वडा हिस्सा धर्मो धर्मोके बीच चले हुअे युद्धोसे और रोजमर्राके तनाजोसे भरा हुआ है। लोभ, अीर्ष्या, अभिमान और द्वेषके कारण दुनियामे जितने युद्ध हुअे है अुतने ही धर्म और पथके भेद के कारण हुअे है। अिन सबका अिलाज सर्व-धर्म-समभाव ही है। आश्रमजीवनके द्वारा सब धर्मोके प्रति जिसमे आत्मीय भाव पैदा हुआ है वह धार्मिक झगडोमे पडेगा ही नही, अितना ही नही किन्तु धार्मिक झगडे टालने या मिटानेमे किसीको सफलता मिलती हो तो अुसीको मिलेगी जिसके हृदयमे सर्वधर्म-समभाव और सर्वधर्म-ममभाव भरा हुआ है।

गाधीजीका अेक प्रयोग था कौटुम्बिक जीवनसे, पारिवारिक जीवन से अूंचा अुठकर अेक विशाल सेवामय आध्यात्मिक कुटुम्ब स्थापित करनेका। अिसमे अुन्हे पूरी सफलता नही मिली। अिस दिशामे गाधीजी ने जो प्रयोग किये अुनका सारा पूरा अितिहास जगतके सामने नही आया है। आश्रमवासी भी सबके सब अुसे नही जानते।

पक्षियोके जीवनमे नर, मादा और छोटे कमजोर बच्चे अितनोका ही अेक परिवार होता है। पशुओमे अिससे शायद कुछ व्यापक पारि-वारिक सम्बन्ध रहता होगा, लेकिन हजारो वरस हुअे मनुष्य-जातिने पति-पत्नीके अिर्दगिर्द ही कुटुम्ब-भावनाको स्थिर किया है। पति-पत्नी का सहजीवन और भाअी-वहन या पुत्रकन्या आदि की सेवा यही है

मानवी कुटुम्बकी मर्यादा, जिसके बादका जीवन या तो कुनबेका है या जाति-सगठनका। कुटुम्ब-जीवनको ही विशाल व्यापक बनानेके प्रयोग मनुष्यजातिने कम किये हैं। असा ही अेक प्रयोग करनेका गाधीजीका मानस था। आश्रमके सब पुरुष अेक विभागमें रहें और सब स्त्रियाँ दूसरेमें—अलग-अलग कोओी कुटुम्ब परिवार न हो असे विचारको अमलमें लानेकी कोशिश गाधीजीने बहुत की। अेकसाथ खाना अेकसाथ प्रार्थना करना और अेकसाथ आश्रम-जीवन चलानेमें शरीक होना यह तो अुन्होंने आश्रममें दाखिल किया ही। ब्रह्मचर्यके द्वारा भी पति-पत्नीका सम्बन्ध अुन्होंने आसान कर लिया। तो भी गाधीजी अनेक परिवारोंका विसर्जन आश्रममें नहीं करा सके। हरअेक व्यक्तिको अपनी पत्नी और अपने बच्चोंके साथके सहजीवनसे जो सन्तोष रहता था अुसे छोड़नेकी किसीकी तैयारी नहीं थी। यह केवल मोह नहीं था ब्रह्मचर्यका शुद्धभावसे पालन करते हुअ भी पति-पत्नीको अेक-दूसरेके सहवासकी भूख रहती थी और अेक-दूसरेके जीवनमें विशेष रूपमें ओतप्रोत हुअ बिना सन्तोष नहीं मिलता था।

जिस तरह गाधीजी जातिसनाका आग्रह आश्रमके जरिये सिद्ध न कर सके (हालाँकि हम लोग कभी-कभी चोरोंके खिलाफ रक्षाके लिअ आश्रममें अेक गिरद सारी रात बारी-बारीसे चौकी करते थे और समाजमें कहीं भी तूफान हुआ या झगड़ा फिसाद पैदा हुआ तो लोगोंको शान्त करनेके लिअ हम दौड़ भी जाते थे।) असी तरह भिन्न भिन्न कुटुम्बोंका विसर्जन कराकर अेक विशाल आश्रमका पारिवारिक जीवन वे सिद्ध न कर सके। लेकिन असमें आश्चर्य भी क्या? आश्रममें दाखिल हुअ व्यक्ति अेक-अेक रत्न लगते थे। धर्मभेद तो हमारे लिअ कठिनाओी नहीं पैदा कर सकता था। आहार और रहन-सहन तो सबका अेक-सा था ही। आर्थिक कठिनाओीके लिअ गुंजाअिश ही नहीं थी। यू तो हम अेक-दूसरेके परिवारके साथ अच्छी तरह घुलमिल जाते थे। हमारे बच्चे भी

आपसमे हर तरहसे घुलमिल जाते थे। जिस भारतमे विशाल अविभक्त कुटुम्ब सैकडो और हजारो बरसोसे चले हुअे थे, अुस भारतमे अेक ही सामाजिक और धार्मिक आदर्शवाले हम अेक ही परिवारके जैसे हो चुके थे। लेकिन हम सब अपने परम्परागत कौटुम्बिक जीवनका विसर्जन करनेके लिअे तैयार नही थे। अेक-दो अपवादोके द्वारा यह आदर्श सिद्ध नही हो सकता था और गाधीजी किसीके भी अूपर अपना आदर्श लाद नही सकते। अिस अेक विषयके बारेमे जो प्रयत्न हुअे और पत्र-व्यवहार चला, अुसका बयान जब जगतको मिलेगा तब गाधीजीके प्रयोगोका कुछ ख्याल मनुष्यजातिको मिलेगा। जब महम्मद पैगम्बर साहबके साथ अुनके अनुयायी मक्कासे हिजरत करके मदीना गये तब मक्काके हिजरती और मदीनाके असारी लोगोका अेक समाज बनानेकी नबी साहबने जो कोशिश की थी, वह सचमुच अेक अद्‌भुत प्रयोग था।

अगर गाधीजी आश्रममे अनेकधर्मी, अनेक प्रातके, अनेक जातिके, अनेक भाषा बोलनेवाले लोगोका अेक विशाल दृढ परिवार बना सकते तो वह अेक अैसा ही अद्‌भुत प्रयोग होता। लेकिन गाधीजीको यह सब अहिंसक ढगसे करना था। अगर वे सफल होते तो शायद भारतके अनेक सवालोको हम हल कर सकते। लेकिन मुझे डर है कि गाधीजीकी कल्पनाका व्यापक परिवार दीर्घकाल तक टिक नही सकता और टिकता तो हम अेक अलग सम्प्रदाय बन जाते और गाधीजीके आश्रमका आदर्श तेलकी बूंदके जैसा न फैलते घी की बूंदके जैसा सिकुड जाता और समाजके अूपर वह घीकी गोलीके जसा तरता रहता।

आश्रमी जीवनका स्वागत

आश्रम जीवनका शुरू शुरूमें बोलबाला बहुत था। अिस आश्रममें रहनेके लिअे अनेक प्रांतके लोग आने लगे। जितने लोग स्थायी रूपसे आश्रममें रहे अुनसे अधिक संख्यामें लोग कुछ समयके लिये आश्रममें रह कर यहांके जीवनसे लाभ अुठाकर अपने अपने जीवनमें परिवर्तन करने लगे। सारे भारतभरमें असे अनेक आश्रमोंकी स्थापना हुअी। कहीं कहीं लोगोंने अपनी संस्थाको आश्रमका नाम न देते हुअे विद्यालयका नाम और रूप दिया। लेकिन आश्रम अेक बहुत बड़ी जबरदस्त सामाजिक शक्ति साबित हुअी और गांधीजीने जो अनेक बार सारे देशमें दौरे चलाये यात्राअें कीं अुनमें सुबह शामकी प्रार्थनाके द्वारा भी गांधीजीने आश्रमके आदर्शोंका लगातार जोरोंसे प्रचार किया।

गांधीजीके अिन सबमाय प्रयोगोंके अन्दर कअी दोष तो थे ही। कुछ दोष जीवनकी पद्धतिके ही थे। कुछ दोष गांधीजीके स्वभावके कारण आये। अिससे भी अधिक दोष भारतीय समाजके अन्तर्मानसमें पैदा हुअे और कुछ दोष आश्रममें आकर बसे हुअे लोगोंमेंसे कअियोंकी पामरतासे पैदा हुअे। अिन सब दोषोंकी चर्चा पक्षपातरहित कुछ निर्दयतासे करनी ही होगी।

लेकिन अिन सब दोषोंके बावजूद आश्रम द्वारा जो कुछ अच्छा कार्य होना था अुसकी कमी करके आश्रमजीवन और आश्रम आन्दोलनको कमजोर बनानेवाले तीन व्यक्ति गांधीजीके ही साथियोंमेंसे निकले। अेक थे सरदार वल्लभभाअी पटेल, दूसरे थे आचार्य कृपलानी और तीसरे कुछ हद तक थे पंडित जवाहरलाल नेहरू। अिनमेंसे आचार्य

कृपलानी तो स्वय आश्रम चलानेवाले और गाधीजीके सब सिद्धान्तोको माननेवाले होते हुअे भी अुनकी यथार्थवादी या वास्तववादी दृष्टि और अुनकी जबरदस्त सिनिसिझम (Cynicism) आश्रमके प्रयोगको बहुत कुछ बाधक हुअी। सरदार वल्लभभाअी बडे व्यवहार-चतुर। स्वय गाधीजी की कअी बाते अुनको पसन्द नही आती थी। लेकिन निभा लेते थे। आश्रमवासी लोग ज्यादातर बुद्धू, व्यवहारशून्य, श्रद्धाजड और अपनी तुच्छताको नही पहचाननेवाले है अैसा ही कुछ अुनका खयाल था। लेकिन अुनसे काम लेनेको अुनकी हमेशा तैयारी रहती थी। गाधीजी के साथ सिद्धान्त-चर्चामे वे कभी अुतरते नही। महादेवभाअीके साथ अुनकी अच्छी घनिष्ठता थी। नरहरिभाअीकी और स्वामी आनन्दकी असाधारण निष्ठा वे हासिल कर सके थे। अिमामसाहबसे अुन्होने जो काम लिया अुससे गाधीजी बडे ही प्रसन्न हुअे। लेकिन सामान्य तौर पर आश्रमवासियोके प्रति अुनके मनमे आदर कम था। अुनसे कुछ डरते भी थे। जब गाधीजीने आश्रमका विसर्जन किया और आश्रमवासी लोग गुजरातमे जगह-जगह फैलकर समाजसेवाका काम करने लगे और गाधीजी भी वल्लभभाअीकी अिच्छा ताडकर गुजरात छोडकर वर्धा जानेको तैयार हुअे तब वल्लभभाअीके मुँहसे अेक वचन निकल गया— "आश्रमके अिन छोटे-छोटे सर्पोको गाधीजी हटा देवे तो अच्छा।" ('सापोलिया' शब्दका वल्लभभाअीने अिस्तेमाल किया था। गुजराती मे छोटे-छोटे साँपोको या साँपके बच्चोको 'सापोलिया' कहते है।) जब वल्लभभाअीका यह वचन गाधीजीके कानो तक पहुँच गया तब अुन्हे बहुत दुःख हुआ और जब वल्लभभाअीने सुना कि गाधीजी दुःखी हुअे है तब बडे पछताये और अपनी जीभ पर काबू नही होनेपर अफसोस भी करने लगे।

जवाहरलालजीकी सज्जनता और मिजाज खोने पर भी सँभाला जानेवाला अुनका वाचा-सयम अुनको हमेशा मददगार रहा। जवाहर-

लालजीने आश्रम-जीवनकी या आश्रमवासियोंकी टीका टिप्पणी नहीं की। लेकिन आश्रम-जीवन और आश्रम-कार्यके बारेमें अुनके मनमें तनिक भी आदर नहीं था। राष्ट्रपुरुष और अितिहासकार होनेके कारण वे हर चीजका समाज पर क्या असर होता है अुसीको देखते रहते हैं। फल देखकर वृक्ष की कीमत करते हैं। अुनको आश्रमजीवनमें ग्राह्य वस्तु बहुत कुछ कम दीख पड़ी तो भी गांधीजीके कार्यकी बुनियादमें आध्यात्मिक निष्ठा और शक्ति है अितना तो वे जरूर पहचान गये और विनोबाके कार्यकी भी वे काफी कदर करते हैं। तो भी आश्रम जैसी संस्थाके विधि विधान नियमावलि कार्यक्रम और परम्पराके बारेमें अुनके मनमें कुछ भी आदर नहीं है।

सरदार वल्लभभाअी आचार्य कृपलानी और जवाहरलालजी अिन तीनोंके अभिप्रायको आश्रमजीवनकी पर्याप्त कसौटी मैं मानता हूँ। अपने समयके अिन तीन पुरुषोंको आश्रमजीवन प्रभावित न कर सका अिस बातको हम भूलना नहीं चाहिये।

आश्रमजीवनके बारेमें विस्तारसे लिखनेवाला हूँ। अिसलिये मैं अपने सम्बन्धको पहलेसे स्पष्ट कर दूँ यह जरूरी है।

मैं आश्रमवासी था भी और नहीं भी था। आश्रमके आदर्शोंको मैंने शुरूसे मान्य रखा था। लेकिन आश्रमका जीवनक्रम और अुसकी परम्परा और खास करके अुसकी व्यवस्था और अुसके पीछे रही हुअी गांधीजीकी दृष्टि मुझे शुरूसे पूरपूरी मान्य नहीं थी। मैं गांधीजीसे अिस बारेमें हमेशा लड़ता रहा। लेकिन अुनके प्रति असीम आदर और निष्ठा होनेके कारण बड़े ही सौम्य शब्दोंमें लेकिन दृढ़ताके साथ मैं अपने मतभेद और रुचिभेद अुनके सामने रखता रहा। अिसलिये अिन मतभेदोंने कभी भी झगड़ेका रूप नहीं लिया। मेरा झगड़ा रहता था और बहुत कुछ मशहूर हुआ सो आश्रमके व्यवस्थापक श्री मगनलाल भाअी गांधीके साथ।

बाहरकी दुनिया मुझे आश्रमवासी ही गिनती थी। आश्रमवासियों के प्रति समाजमे जो आदर रहता था अुसका काफी हिस्सा मुझे मिल गया है। अिसलिअे आश्रमजीवनके प्रति मैं हमेशा कृतज्ञ हूँ।

आश्रमकी कअी बातें मुझे पसन्द नही थी तो भी आश्रममें रहना था, अिसलिये मैंने अुनको स्वीकार किया और धीरे-धीरे अुन चीजोका मेरे स्वभाव पर असर भी होने लगा। मानो आश्रममे रहनेसे आश्रमके वायुमण्डलके कारण मेरा 'अचार' ही बन गया। जिन चीजोको मैंने श्रद्धासे स्वीकार नही किया, लेकिन अैसी जो चीजे मेरे जीवनमे घुल-मिल गअी अुनके गुणोसे तो मै वंचित रहा और अुनके दोष मुझे भुगतने पडे।

सबसे पहले व्रतोकी ही बात ले।

आश्रमके ग्यारह व्रत मुझे हृदयसे मान्य थे। अुनके अनुसार अपना जीवन बनानेका मैंने प्रयत्न किया है। यह प्रयत्न कभी जोरोका था, कभी शिथिल था। कभी-कभी प्रयत्न ही गायब हुआ। फिरसे अुसका पुनर्जीवन हुआ। अिस तरहसे मेरे व्रतपालनमे ज्वारभाट चलता ही आया है।

लेकिन शुरूमे ही कह दूँ कि आदर्शके तौरपर अिन व्रतोको मैने हृदयसे पसन्द किया था। लेकिन जिसे 'प्रतिज्ञा लेना' कहते है, अुससे मैं हमेशा डरता ही रहा। सत्यके जैसे व्रतका पालन मनुष्यसे पूरा हो या न हो अुसका व्रत लेते मनुष्यको सकोच नही होना चाहिअे। क्योकि हृदय ही कहता है कि सत्यके प्रति त्रिकालाबाधित निष्ठा होनी चाहिअे। लेकिन अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य आदि आदर्श मान्य होते हुअे भी मनुष्यकी अिन बातोमे पूरी तैयारी नही होती। अिन बातोमे कणश, क्षणश मनुष्य अूपर चढ सकता है। सत्य बोलना आसान है, झूठ बोलनेके लिअे प्रयत्न करना पडता है। निर्भयताके बारेमे अैसा हम

नहीं रह सकता। मनका दमन कर जाना यह है स्वभाव। तो भी मनुष्य धीरे धीरे निर्भय बन सकता है। स्वादके बारेमें कह सकता हूँ कि स्वादका [illegible] पहचान सकता हूँ और स्वादिष्ट चीजोंको पसन्द भी करता हूँ। लेकिन स्वादका मैं कभी दास नहीं था। स्वाद पर विजय पानेके लिअे मुझे बड़ी मेहनत नहीं पड़ी। तो भी मैं जानता हूँ कि मनुष्यके लिअे सबसे कठिन चीज यही है। अिसीलिअे तो [illegible] ने कहा है—जितं सर्वं जिते रसे।

हमारे पुरखाओंने अिसीलिअे कह रखा है कि संन्यासका स्वीकार आसानीसे मत करो। संन्यास लिया और फिर पछताना पड़ा और समाजके सामने फजीहत भी हुआ, अिससे बेहतर है कि संन्यास आश्रमका स्वीकार करना ही नहीं। मनकी वृत्ति सुधारते जाओ और जब देखो कि अब यह वृत्ति परिपक्व हुअी है तभी जाकर गेरुअे वस्त्रका स्वीकार करो। संन्यासी गुरुओंको भी शास्त्रोंने साफ कहा है कि किसीको भी संन्यास लेनेकी व्यक्तिगत प्रेरणा मत दो। संन्यासकी दीक्षा लेनेके लिअे कोअी तुम्हारे पास आ ही गया तो प्रथम अुसे अुस संकल्पसे परावृत्त करानेकी कोशिश करो। मना करो और जब देखोगे कि वैराग्य सचमुच ही पक गया है, दृढ़ हुआ है तब बाहरी मददके तौर पर और सिक्का मुहरके तौर पर अुसे गेरुआ दे दो।

मैंने कहा और लिखा भी है कि भोजनके समय मौन रखनेका नियम मैंने बरसों तक चलाया, बहुत ही [illegible] चलाया। लेकिन अुस नियमके लिअे कुछ मोह नहीं रखा। जब जी चाहा तब सोच विचार करके अुस नियमको मैंने छोड़ भी दिया। मौनका नियम लिया वह भी अच्छा था, छोड़ा वह भी अच्छा था।

प्रार्थना

अेक दिन अेक चर्चा-रुचि आदमी गाधीजीके पास आकर कहने लगे कि, "मुझे आश्रमका सेवाकार्य पसन्द है। जीवनक्रम भी निभा सकूंगा। लेकिन प्रार्थनामे मेरा विश्वास नही है। मुझे आप आश्रममे ले सकेगे ?" गाधीजीने कहा कि, "जिस ढगकी प्रार्थना हम आश्रममे करते है वह ढग और वे श्लोक आपको पसन्द न हो तो प्रार्थना-भूमिपर आकर सबके साथ खामोश बैठिये और मनमे जो-कुछ भी प्रार्थना आपको भाती हो, अुसीको करे। लेकिन किसी भी किस्मकी प्रार्थना आपको पसन्द नही आती हो, यानी प्रार्थना पर ही आपको आपत्ति हो तो आप आश्रममे दाखिल नही हो सकते। मेहमानके तौरपर कुछ दिन रहिये सही, लेकिन मैंने आश्रमजीवनकी अनेक व्याख्याअे की है अुनमे यह भी अेक व्याख्या है कि 'प्रार्थनापर जिनका विश्वास है अैसे लोगोका समूह'।"

गाधीजीने यह जवाब अैसी दृढतासे दिया कि आगन्तुक सज्जन बराबर समझ गये। जिसे देशसेवा करनी है अुसे कौन मना करता है ? अपने ढगसे करता जाय। आश्रममे रहकर आश्रमके द्वारा सेवा करनी है तो कम-से-कम प्रार्थनापर तो विश्वास होना ही चाहिये।

अिसलिअे आश्रम-जीवनका वर्णन करते प्रार्थनासे प्रारम्भ करना चाहिअे। फीनिक्स सेटलमेटमें सामूहिक प्रार्थना सिर्फ शामको ही होती थी। अुसके लिअे गाधीजीने गीताके दूसरे अध्यायके आखिरी अुन्नीस श्लोक पसन्द किये, जिनके अन्दर भगवानने स्थितप्रज्ञके लक्षण बताये है और अुस साधनाको चलानेवालेको अन्तमे क्या लाभ होता है यह भी बताया है। अिन श्लोकोके बाद जो भजन गाये जाते थे अुनका सग्रह

फीनिक्स सेटलमेंटके आश्रमी प्रेसके द्वारा 'नीतिना काव्यो' के नामसे प्रकाशित भी किया था। ज्यादातर गुजराती और थोड़े हिंदुस्तानी भजन असमें थे।

दक्षिण आफ्रिकाके अस समूह-जीवनमें अनेक धर्मोंके लोग थे और गांधीजीका आग्रह था कि जिस तरह सामान्य नियम पालते हुअे हरअेक आदमीको असकी तबीयतके अनुकूल आहार देना चाहिये, असी तरह समूह-जीवनमें जो शरीक हुअे हैं अनको प्रार्थनाके बारेमें भी सन्तोष देना चाहिये। जो गोरे ओसाओी लोग अनके साथ रहते थे अनके लिअे गांधीजीने चन्द अंग्रेजी स्तोत्र (hymns) पसन्द किये। और वे भी 'नीतिना काव्यो' में जोड़ दिये गअे। 'मने व्हालुं व्हालुं व्हालुं बाबा रामजीनुं नाम' अिस प्रख्यात गुजराती भजनमें रामजीकी जगह होरमसजी का नाम डालकर वह भजन पारसी लोगोंके साथ गाते गांधीजीको और आश्रमवासियोंको बड़ा ही आनन्द आता था।

जब गांधीजी हिंदुस्तानमें आये और हम महाराष्ट्रीय अनके साथ रहने आये तब गांधीजीने समर्थ रामदासका 'मनोबोध' प्रार्थनाके बाद पढ़ना शुरू किया और मराठी भजन भी बीच-बीचमें गानेका रिवाज चलाया।

जब फीनिक्स पार्टीके लोग हिंदुस्तानमें आये और शान्तिनिकेतनमें रहे थे तब मैं वहां अनके साथ काफी घुल मिल गया। सुबहका भोजन शान्तिनिकेतनमें और शामका भोजन फीनिक्स पार्टीके साथ अैसा क्रम मैंने चलाया। अनकी शामकी प्रार्थनामें भी मैं शरीक हुआ। मैंने कहा कि गीताके श्लोक शुरू करनेके पहले 'य ब्रह्मा' वाला श्लोक बोलनेका सारे देशमें रिवाज है। मगनलालभाओीने मेरा सुझाव मंजूर रखा और मैंने वह प्रारम्भका नमनका श्लोक और स्थितप्रज्ञ वाले श्लोक सबको शुद्ध अच्चारण सिखाना शुरू किया। अच्चारणशुद्धिके लिअे पूरी निष्ठासे प्रयत्न करनेवाले मगनलालभाओी ही थे।

थोड़े ही दिनोमे मैने प्रस्ताव रखा कि शामकी सामुदायिक प्रार्थना वस नही है। दिनका प्रारम्भ भी सामुदायिक प्रार्थनासे होना चाहिअे। (अुसके पहले कअी लोग सुवह अुठते ही मुँह धोकर अपनी-अपनी छोटी प्रार्थना करते थे। लेकिन अुसका समय मुकर्रर नही था। और साथ बैठकर प्रार्थना होती ही नही।)

(जिस शान्तिनिकेतनमे हम रहते थे वहाँ अेक सुन्दर काव्यमय रिवाज था। चन्द लडके अेक जगह पर तडके अिकट्ठा होकर वैतालिक दल वनाते थे और कोअी अेक सुन्दर-सा गान पसन्द करके अुसे गाते-गाते शान्तिनिकेतनकी भूमिपर जो अनेकानेक छात्रालय थे अुनके पास जा-जाकर अपने गानके द्वारा लडकोको जगाते थे। अुसके वाद नहा-धोकर हरअेक लडका अपना आसन साथ लेकर आश्रमकी भूमिपर कही भी जाकर वैठता था और मौनके साथ ध्यान-भजन जो-कुछ भी करना हो, करता था। फिर अेक घण्टी वजते ही सव लडके अेकत्र होकर 'पिता नोऽसि, पिता नो वोधि' वाला मन्त्र सस्कृतमे और वाँगलामे वोलकर विसर्जित होते थे।

शान्तिनिकेतनमे हर वुधवारको प्रार्थना-मन्दिरमे अुपासना होती थी जिसमे कविवर स्वय या कोअी अच्छा अध्यापक प्रवचन चलाते थे। अिस प्रार्थना-मन्दिरके प्रवचनमे रातके समयमे दिया जलाते नही। अँधेरेमे ही सव लोग वैठकर प्रार्थना करते और प्रवचन सुनते थे। जब गाधीजीने शान्तिनिकेतनमे आकर देखा कि अँधेरेकी भव्यता और आध्यात्मिकताका असर वहुत है तव अुन्होने अपनी सस्थामे भी अुसी रिवाजको ले लिया।)

सुवहकी प्रार्थनाके लिअे मैने अुन्ही सस्कृत श्लोकोको चलाया, जो समूचे महाराष्ट्रमे 'प्रात स्मरण'के नामसे घर-घर चलते है। श्लोकोकी यह पसन्दगी वडी ही सुन्दर है और अुसमे शिव, विष्णु, गणपति,

देवी और सूर्यनारायण जिस उपास्यपंचकका ध्यान और उपासनाकी प्रधानता है।

संस्कृत स्तोत्र रत्नाकर मेरी एक प्रिय पुस्तक था। उसमें भगवत्पादाचार्यका तीनश्लोकी वेदान्ती प्रातःस्मरण मुझे बहुत ही प्रिय था। उसीसे मैं अपनी प्रार्थना शुरू करता था। एक श्लोकमें 'स्मरामि' दूसरेमें 'भजामि' और तीसरेमें 'नमामि' यह क्रम मुझे विशेष पसन्द था।

श्री मगनलालभाई, रामदास, देवदास आदि सब लोगोंने प्रातःस्मरणके बीस पचास श्लोक कण्ठ किये और सुबहकी प्रार्थना आश्रम-जीवनका आवश्यक अंग बन गया।

जब गांधीजीने अहमदाबादमें सत्याग्रहाश्रमकी स्थापना की तब उन्होंने सुबहकी प्रार्थनाके श्लोक सूक्ष्म ध्यानसे देख लिये और उनमें कुछ काट-छांट करके सुबहकी प्रार्थनाको निश्चित रूप दे दिया।

मैंने अन्यत्र लिखा ही है — आश्रम भजनावली की आखिरी आवृत्तिकी प्रस्तावनामें — कि गांधीजीको भगवत्पादाचार्यके तीन वेदान्ती श्लोक पसन्द तो थे, लेकिन बोलनेमें संकोच था। 'मैं भूतसंघ नहीं हूँ, ब्रह्म हूँ' ऐसा अनुभव हुए बिना ऐसा कहते उन्हें बड़ा ही संकोच था। सत्यवादिताके। इतनी सूक्ष्म कोटि तक नहीं गये हुए हम लोगोंको उसका कभी ख्याल ही नहीं आया।

शामकी प्रार्थना जो भोजनके बाद और सोनेके पहले आखिरी सामुदायिक कार्यक्रम था, उसका समय मुकर्रर होनेमें ज्यादा कठिनाई नहीं थी। लेकिन सुबहकी प्रार्थनाका समय जल्दी निश्चित नहीं हुआ। कभी पाँच बजे, कभी छः बजे और कभी-कभी चार बजे या सब लोग इकट्ठा होकर प्रार्थना करते थे। उसमें केवल सबकी सहूलियतका ही ख्याल था।

कुछ दिन ऐसा चला लेकिन अनिश्चितताके और अनियमितताके

गाधीजी वडे ही नाराज हो गये। अेक दिन अुन्होने कहा, 'सुवहकी प्रार्थना चार वजे ही होगी। गरमी, जाडा या वर्षाका ख्याल किये विना, व्यक्तिकी आदते और अुसके स्वास्थ्यका ख्याल किये विना, सुवहकी प्रार्थना आअिन्दा चार वजे ही हुआ करेगी।'

तव मैंने कहा कि मेरे लिअे तो यह नियम अनुकूल ही है। लेकिन जव सोनेका समय मुकर्रर है और अमुक घण्टे सोना जरूरी है, तव चार वजे अुठनेका हम नियम रखे और दाँत-मुह धोनेके लिअे जरूरी समय देकर चार वजकर वीस मिनटको प्रार्थना शुरू करनेका नियम रखा जाय।

वरसो तक वसा हा चला। लेकिन आखिरी दिनोमे गाधीजी सुवह होनेके पहले कभी-कभी तीन वजे और कभी-कभी दो वजे ही अुठते थे। तव सुवहकी प्रार्थना वहुत ही जल्दी होती थी और चन्द लोग प्रार्थनाके वाद थोडा समय सो भी जाते थे। स्वास्थ्य कमजोर होने पर गाधीजी भी सुवहकी प्रार्थना और थोडा जरूरी काम करनेके वाद जरा सो जाते थे।

गाधी-कुटुम्वमे रामभक्ति और तुलसी रामायणका पारायण लम्वे अरसे से चलता था। महाराष्ट्रमे तो समर्थ स्वामी रामदासके जवरदस्त प्रचार के कारण रामोपासना फैली हुअी थी ही। कृष्णकी अुपासनामे मधुराभक्ति, गोपियोका रास, राधाकृष्णकी कथाअे, अैसी-अैसी वाते महाराष्ट्रमे चन्द सन्तो को जरा खतरनाक-सी मालूम हुअी। अुन्होने मर्यादापुरुषोत्तम रामकी अुपासना, वजरगवली हनुमानकी अुपासना और रामनाम-सकीर्तन अिन वातोपर ही अधिक जोर दिया था और रामदासस्वामीने तो गाँव-गाँवमे हनु-मानके मन्दिर और पहलवानोके अखाडे भी स्थापित किये थे। अिस परम्परा के प्रतिनिधि अेक सगीतशास्त्री नारायणराव खरे जव आश्रममे आये तव अुन्होने रामनामकी धुन और अैसी ही दूसरे सन्तोकी धुन आश्रममे जोरो से चलाअी, अच्छे-अच्छे हिन्दी भजन प्रार्थनामे दाखिल किये और अुनका सग्रह हम सव लोगोकी मददने 'आश्रम-भजनावलि'के नामसे गाया

किया। संग्रहका यह नाम गांधीजीने ही पसन्द किया था। शुरू शुरूमें भजन पसन्द करनेमें संगीतके रागकी ही दृष्टि अधिक रहती थी। बादमें गांधीजीने चन्द सिद्धान्त बताये, जिनमें जो नहीं बैठते थे असे भजन भजनावलिमेंसे निकाल दिये गये। जिन भजनोंमें केवल शब्दोंके अनुप्रास ही हैं और खास अर्थ कुछ नहीं है असे भजन छोड़ दिये गये। जिनमें मृत्युका डर बताया गया है असे भी भजन निकाल दिये गये। मनुष्य स्वभावके बारेमें अश्रद्धा बतानेवाले सब लोग मतलबी होते हैं सचमुच कोअी विश्वासपात्र नहीं है अैसी बात समझाकर वैराग्यका अुपदेश करनेवाले श्लोक भी छोड़ दिये गये।

गांधीजीने शुरूमें ही कहा था कि देशभरके सब अच्छे भजनोंका संग्रह करनेका हमारा अिरादा नहीं है। आश्रमवासियोंको समय-समयपर जो भजन अच्छे लगें और जिनसे प्रेरणा मिले अुतने ही भजन भजनावलिमें लेने हैं।

भजनावलिकी रचनाके बारेमें अुसकी नअी आवृत्तिकी प्रस्तावनामें मैंने काफी लिखा है अुसमेंसे चन्द बातें यहाँ ली हैं। अिससे ज्यादा विस्तार करना जरूरी नहीं है। हमारी प्रार्थनामें अीसाअी, मुस्लिम पारसी और जापानी बौद्ध मन्त्र या स्तोत्र कब और कैसे आये अुनके बारेमें भी मैंने वहाँपर लिखा है। यहाँ अितना कहना बस है कि आश्रमकी प्रार्थना और आश्रमका भजन संग्रह दोनोंमें आश्रम-जीवनका प्रतिबिम्ब है।

मैंने अूपर लिखा कि शामकी प्रार्थनाका समय मुकर्रर करना आसान था। लेकिन अिसमें भी मुसाफिरीमें बड़ी कठिनाअी और गड़बड़ी रहती थी। अिस अनिश्चिततासे अूबकर गांधीजीने अुसका समय भी कायमी मुकर्रर कर दिया। अैसा अेक प्रसंग 'बापूकी झाँकियाँ'[1] में (पृ० ६५) मैंने :। अनिश्चितता, अव्यवस्था और ढीलापन गांधीजी बिलकुल

[1] प्रकाशक नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद।

बरदाश्त नही कर सकते थे ।

कअी लोगोने शिकायत की कि आश्रमकी प्रार्थनाके श्लोक महत्त्व के होते हुअे भी और ज्यादातर भजन लोकप्रिय होते हुअे भी आश्रमकी प्रार्थना नीरस ही लगती है । अिस दोषको दूर करनेके लिअे गाधर्व महाविद्यालयसे भक्त-हृदय, सगीत-प्रवण नारायणराव खरेको हम ले आये । पडितजीने प्रार्थनाको सगीतमय और रसमय बनानेकी पूरी कोशिश की । तो भी आश्रमकी प्रार्थनामे हम रग जमा नही सके । अिसका कारण ढूंढते मुझे लगता है कि गाधीजीकी भक्ति हमेशा अन्त:-स्रोता रही । पारमार्थिक और अुत्कट होते हुअे भी वह हृदयके अन्दर-ही अन्दर रह जाती थी । अुन्होने जो दो-तीन गद्य-प्रार्थनाअे लिखी है अुनमे अुनका हृदय कुछ-कुछ प्रकट हुआ है सही । अिसी तरह बेलगाममे गौरक्षा मघकी स्थापना करते अुन्होने जो भगवानकी प्रार्थना की थी वह भी काफी अुत्कट है ।

आश्रमवासियोमेसे हम चन्द लोग सिद्धान्तके वेदान्ती । हमारी भक्ति अुत्कट हो या यान्त्रिक हो, अुसमे ज्यादा रस नही आ सकता था और आश्रमके बहुतसे लोग और विद्यार्थी तो सुबह-शामकी प्रार्थनामे रस्म अदा करनेके ख्यालसे ही अिकट्ठा होते थे । अुनके वायुमण्डलमे सच्चे भक्तोका हृदय भी दब जाता था ।

श्री विनोबाने प्रार्थनामे कुछ तबदीली शुरूसे ही की थी । लेकिन पदयात्रा मिशन शुरू होनेके बाद अुन्होने सारी प्रार्थना ही अलग ढगसे चलाअी है । अुसका असर भी समाजपर अच्छा होता है ।

भारतमे सन्ध्यावन्दन आदि अीश्वरोपासना अमुक वर्णो तक ही सीमित रही । सस्कृतके श्लोक बडे ही सुन्दर है । लेकिन सामान्यत: लोग अुन्हे समझ नही सकते और चन्द स्तोत्रोमे भावको गौण बनाकर

अनुष्ठानोंमें भजनावलिका ही प्रधानता रही है। आश्रमवासी सबेरे यहां दिये गये हैं सारे भजन। सुनते पूरा आश्रम गांधीजीने आश्रम प्रार्थनामें लिया ही है। सन्तवाणी और नामगीत सब धर्मोंके लिए और सब वादके लोगोंके लिए भी है। आश्रम प्रार्थना सब धर्मोंका, सब पन्थोंका और सब भाषाओंका स्वीकार करती है। आश्रममें प्रार्थना सर्वधर्म-समभाव है। आश्रमकी प्रार्थनाओंमें जन्म आग ... सर्वधर्म समभावका पालन है, जिसका अनुसरण विनोबाजी आज तक कर रहे भी नारायण तू ... स्तोत्रम अच्छा तरहसे हुआ है।

प्रार्थनामें क्या-क्या आता है ?

धर्माचरण और आत्मोन्नतिकी दृष्टिसे जो कुछ नित्य चिंतन, मनन या विधिविधान किया जाता है, अुसे हम अुपासना कहते हैं। अुपनयन (जनेअू), अुपवास (व्रत, फाका), अुपासना (सध्यावदना, प्रार्थना आदि) और अुपनिषद (गुरुसे पायी हुअी रहस्यविद्या) ये सारे शब्द नजदीकके हैं क्योंकि अिनके पीछे अेक ही कल्पना है। द्विजोंकी त्रिकालसध्या नित्यकी अुपासना ही थी। अिस्लामकी रोजकी पाँच नमाजें अुपासना ही है। अीसाअियोंकी सुबह-शामकी या साप्ताहिक प्रार्थना भी अुपासना ही है। भक्तोंके भजन तो अुत्कट अुपासना है ही।

अुपासनामें क्या-क्या आ सकता है ? क्या-क्या आना चाहिअे ?

भक्त कहेंगे : अपनी मन स्थिति भगवानको समझाकर अुसकी करुणाकी याचना करना, अुसकी मदद माँगना और अुस करुणासागरकी मदद अवश्य ही मिलनेवाली है अैसा विश्वास अपनेको दिलाना—यही है प्रार्थना-अुपासनाका प्रधान अंग। भक्त लोग आत्मिक अुन्नति चाहते हैं। दुनियाकी स्थितिके बारेमें अुदासीन होते हैं। अिसलिअे अीश्वर जैसा भी रखे वैसा रहनेकी मनकी तैयारी करना अिसे भी वे अुपासना कहते हैं।

जो आर्त—यानी सकटग्रस्त—होते हैं, वे सकटनिवारणकी सीधी प्रार्थना करते हैं। जिसके जीवनमें जिस चीजकी कमी है अुसकी पूर्तिके लिअे जो प्रार्थना करते हैं अुनको अर्थार्थी भक्त कहा जाता है। जो भक्त भगवानसे दिशादर्शन, अुपदेश, प्रेरणा या रहनुमाअी चाहते हैं, अुन्हें शास्त्रोंने जिज्ञासु कहा है। ये तीनों कुछ-न-कुछ भगवानसे माँगते ही हैं।

जो भानी भक्त होते हैं वे ओीश्वरका और अपना सम्बन्ध (जीव शिवका सम्बन्ध) जानते हुअे युग सम्बन्धकी स्मृति कायम रखनेके लिअे वेदान्ती अपासना करते हैं। शंकराचार्य आदि भानियोंने जो स्तोत्र बनाये हैं वे अिसी प्रकारके हैं। शंकराचार्य भक्तिकी व्याख्या ही करते हैं—

स्वस्वरूपानुसंधानं भक्तिर् अित्यभिधीयते।

जो साधक होते हैं और सिद्ध होने पर भानी बनते हैं, अनके लिअे आदर्श पुरुषके लक्षण ही अुनकी साधना बन होती है। श्री शंकराचार्यने गीताभाष्यमें कहा है —

"सर्वत्र अेव हि अध्यात्मशास्त्रे कृतार्थलक्षणानि यानि, तानि अेव साधनानि अुपदिश्यन्ते।"

यही बात दूसरे ढंगसे कहते हैं—

"यानि यत्न साध्यानि साधनानि तानि अेव भवन्ति सिद्धपुरुषस्य लक्षणानि।"

अिसलिअे गांधीजीने गीताके स्थितप्रज्ञ-लक्षण ही आश्रमकी प्रार्थनाके लिअे लिअे।

गीताके स्थितप्रज्ञ गुणातीत योगी, पण्डित सिद्ध बुध भक्त आदिके सब लक्षण करीब-करीब अेक से हैं। अिन सब लक्षणोंको अेकत्र करने पर गीताके आदर्श पुरुषका सम्पूर्ण चित्र पाया जा सकता है। दैवी संपत् के छब्बीस लक्षणोंको हम प्रार्थनाका अविभाज्य अंग बना सकते हैं, क्योंकि ये छब्बीस लक्षण आदर्श (दैवी) समाजकी स्थापनाकी बुनियाद भी है और मोक्षार्थीकी अनन्य साधना भी हैं।

पुराने भक्तकवि और पौराणिक स्तोत्रकार अिष्ट देवताका शारीरिक रूप अुसके कपड़े अलंकार आयुध और आसनसे लेकर मुकुटतक सब चीजोंका सुंदर वर्णन भी प्रार्थनामें लाते थे। भगवानके दिव्य जन्मकर्म

और अुपकारका भी वर्णन लाते थे। बीच-बीचमे भगवानके गुणकर्म और कृपाप्रसादका भी रसभरित वर्णन करते थे। अुन दिनो प्रार्थनामे भगवानकी सगुण-साकार मूर्तिका ध्यान किया जाता था। आजकल अैसी सालकृत मूर्तिके ध्यानके बारेमे लोगोका अुत्साह कम हुआ है। भगवानके गुणो पर ही ज्यादा ध्यान दिया जाता है।

प्रार्थना-अुपासनाका और भी अेक अग है। चार तरहके पुरुषार्थोकी सिद्धिके लिअे कोशिश करना यह भी अुपासना ही है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्षमे प्रथम जो धर्म आता है, वह है आदर्श दैवी सपत्युक्त सामाजिक जीवनके लिअे गुणोका विकास। अुसीको धर्म कहा है। नीति, सदाचार, शिष्टाचार आदि मिलकर जो सामाजिक सत्पुरुपका जीवन-क्रम होता है वही धर्म है। अैसे धर्मका विस्तार प्राचीन स्मृतियोमे पाया जाता है। अिन स्मृतियोमेंसे जो आचारधर्म सार्वभौम है, चार वर्णोके लिअे समान है और युगानुकूल है अुसका सकलन करके अुसे हम प्रार्थनाका अेक अग बना सकते हैं।

धर्मप्राप्तिके लिअे जो अर्थोपार्जन जरूरी है अुसके मूलभूत सिद्धान्त भी हम प्रार्थनामे ला सकते है। जैसे कि अद्रोहसे आजीविका प्राप्त करनी चाहिअे, प्राप्त समृद्धिका सबके साथ सविभाग करके अुपभोग करना चाहिअे, सबका ख्याल करनेके बाद अन्तमे ही अपना ख्याल करना चाहिअे अित्यादि।

तीसरा पुरुषार्थ है काम। धर्मके अविरोध, धर्मानुकूल कामका ही सेवन हो सकता है। अिसमे प्रधान वस्तु 'सयम' है। और अितना ही महत्त्व है सर्वभूतोके हितका।

और अन्तमे चौथा पुरुपार्थ आता है मोक्षका, अिसमे विश्वात्मैक्य-भाव सिद्ध करनेके लिअे षड्रिपुसे मुक्ति माँगी जाती है और अुसको साधना साधी जाती है। अन्तिम अुपासना या प्रार्थना मोक्ष या विश्वा-

समन्वयके लिअ ही हो सकता है। अिसके लिअे—'यो असौ असौ पुरुष सोऽहमस्मि'—अिस वृत्तिका विकास करके ज्ञानमय तप बताया गया है। अिस तत्त्वके बिना प्रार्थना सम्पूर्ण नहीं हो सकती।

स्वस्वरूपानुसंधानं भक्तिर् अित्यभिधीयते।

हमारी भारतीय प्रार्थनाओंके स्वरूपके कुछ लक्षण यहां बताअे। गांधीजीके आश्रममें जो प्रार्थना चलाअी जाती थी अुसमें ये सब तत्त्व, कहीं सूक्ष्म रूपमें कहीं स्पष्ट रूपमें आ ही जाते हैं।

प्रार्थनाकी भाषा

सुबह-शामकी प्रार्थना किस भाषामे की जाये, यह सवाल शुरूमे अुठा ही नही था। सन्तोके वचन जिस भाषामे मिले, अुसी भाषामे अुनको लेना हमारे लिये स्वाभाविक था। सन्तोंकी वाणी गुजरातीमे थी, हिन्दीमे थी, चन्द सुन्दर भजन हिन्दुस्तानी शैलीके थे। दो-तीन स्तोत्र अंग्रेजीमे थे। अेक गीत तमिलमे था। गीताके श्लोक संस्कृतमे थे। अिस तरह प्रारम्भसे ही आश्रमकी प्रार्थना बहुभाषी हो चुकी थी।

धीरे-धीरे अुपनिषद्, गीता और आध्यात्मिक स्तोत्रोका अध्ययन बढनेसे सुबह-शामकी प्रार्थनामे संस्कृतका महत्त्व बढा और अीशावास्यका पहला मन्त्र आनेसे हमारी प्रार्थनाका प्रारम्भ वैदिक भाषासे होने लगा।

जब कुराने-शरीफके अित्रके जैसा अल्फातेहा हमने प्रार्थनामे लिया तब अुसके साथ अरबी भाषा आ गअी और जब पारसियोका मन्त्र भी हमने ले लिया तब अवेस्ता भाषाका भी स्वीकार हमने किया। बाँगला, मराठी, सिन्धी—जो भी भाषा प्रार्थनामे आ गअी, हमने कबूल रखी। हममेसे किसीने नही कहा कि अरबी भाषा हमे नही चाहिये, या अंग्रेजी नही चाहिये। पूरबकी बंगला, दक्षिणकी तमिल, पश्चिमकी गुजराती, सिंधी और मराठी और अुत्तरकी हिन्दी और अुर्दू सब भाषाअे हमारे लिये अेकसी प्यारी थी। अगर कही किसी चीजका अच्छा अनुवाद मिला तो अुसका भी हमने अुतने ही प्रेमसे स्वीकार किया।

हिन्दू मनोवृत्तिकी यह स्वाभाविकता है—(हम नही जानते थे कि अिसमे कुछ अुदारता भी है) कि हम सब धर्म, सब पन्थ, सब नबी,

भा आने लगे। जिनमे कुमारप्पा स्वभावके और धर्मके प्राटेस्टट क्रिस्ती। अुन्होने सस्कृतके खिलाफ आपत्ति अुठाओ। मैंने अुन्हे हमारा दृष्टिकोण समझाया लेकिन अुन्हे सतोष नही हुआ। आखिरकार हम समझौते पर राजी हुओ कि गीताके श्लोक अक दिन सस्कृतमे बोले जाय और दूसरे दिन गुजरातीमे। यह सिलसिला काफी चला और अुसका वायुमण्डल भी अच्छा बना रहा।

फिर तो स्वराजका आन्दोलन अप हो अुठा और सरकारने आश्रम, विद्यापीठ आदि सब सस्थाये जप्त की।

जब गाधीजी गुजरात छोडकर वर्धा चले गये और वहा सेवाग्राममे आश्रमकी स्थापना हुओ तब फिरसे प्रार्थनाकी भाषाका सवाल चर्चा जागने लगा। तब गाधीजीने कहा कि मैं तो अब भी सस्कृत रखनेके हा पक्षका हूँ। लेकिन अब मैं अुसका आग्रह नही रखूगा। मैंने आश्रममे सस्कृतका वायुमण्डल बनानेकी कोशिश की लेकिन हार गया हूँ। सस्कृत सीखनेका अुत्साह अब पहलेके-जैसा नही दीख पडता। बिना अर्थ समझे सस्कृतके श्लोक बोलते जाना केवल यान्त्रिक हो जाता है। अिसीलिअ सस्कृतकी जगह हिन्दी अनुवाद बोलनेकी अिजाजत देता हू। सेवाग्राम के हिन्दुस्तानी तालीमी सघके विद्यार्थी ज्यादातर महाराष्ट्री थे अिसलिये वहाँ पर मराठी अनुवाद बोलनेका सिलसिला चला।

और सस्कृतका वायुमण्डल समाप्त हुआ।

सीखनेका अधिकार न रखा। अिस पवित्र मनुष्य-वाणीका पावित्र्य और बढाने लिअे अुसे 'देववाणी' का नाम दिया, गिर्वाणवाणीकी प्रतिष्ठा दी। अिसका नतीजा यह हुआ कि मनुष्यलोकमे अुसका प्रचलन रुक गया। अिस तरह हमारे पुराने पापका ही फल हमे भुगतना पडता है। दिवगता देववाणी का पुनरुद्धार होनेके दिन आयेंगे जरूर, लेकिन अुसके लिये नये ढगकी तपस्या करनी पडगी। वुद्ध भगवानके दिनोसे आजतक सव सन्तोने सस्कृतका हमारा खजाना देशी भापाओको देनेका सिलसिला चलाया है। और अव हम पश्चिमकी विद्याओको भी अपनी देशी भापाओमे लानेकी कोशिश कर रहे है। यह प्रयास जव सफल होगा और हमारी लोक-भापाये प्रतिष्ठित होगी, तव सस्कृतका दोहन फिरसे शुरू होगा और सस्कृतके आशीर्वाद हमे मिलने लगेगे।

आज जहाँ-जहाँ गाधीजीकी प्रेरणाके आश्रम चलते है, वहाँ-वहाँ प्रार्थनामे स्थानिक और राष्ट्रीय देशी भापाओकी ही प्रतिष्ठा हो, लेकिन सस्कृतका वहिष्कार न हो। अिस भापाने कभी किसीका द्रोह नही किया है।

असलमे सस्कृत भापा सिर्फ ब्राह्मणोकी नही है। तीनो वर्णोंने अुसकी सेवा की है। और अव तो जर्मन आदि परदेशके लोग भी अुसे सीखने लगे है। सस्कृत अनेक भापाओकी माता है। अुसने अपना दूध अनेक भापाओको दिया है। अुसका धार्मिक आध्यात्मिक साहित्य समृद्ध और अमर है।

प्रार्थनाका वायुमंडल

आश्रमकी प्रार्थनामें सुबह ज्यादातर आश्रमवासी ही रहते थे। कोअी मेहमान आवें और चार बजे अुठनेकी हिम्मत करें तो वे सुबहकी प्रार्थनामें शरीक हो सकते थे। लेकिन अैसोंकी संख्या हमेशा नहींके जैसी रहती थी। शामकी प्रार्थनामें बाहरके लोग बहुत आते थे। अिसीलिअे प्रवचनोंमें भी भेद रहता था। सुबहका कभी-कभी गीता आदि कोअी आध्यात्मिक ग्रन्थका वाचन विवरण होता था कभी गांधीजी अपने आध्यात्मिक सामाजिक या राजनैतिक अनुभव आध्यात्मिक दृष्टिसे कहते थे, कभी आश्रम-जीवनके बारेमें महत्त्वकी सूचना देते थे और कभी-कभी विद्यार्थी जीवनकी चर्चा भी करते थे। अिस तरह सुबहके प्रवचन गम्भीर और अन्तर्मुख रहते थे। शामके प्रवचन आश्रमकी और देशकी रचनात्मक प्रवृत्तिके बारेमें ही रहते थे। प्रवासके अनुभव और आगेका कार्यक्रम यह भी बहुत दफे प्रवचनोंका विषय बनता था। सब आश्रमवासियोंके साथ अेक साथ बात करनेका यही अेकमात्र मौका होनेके कारण गांधीजी व्यवहारकी बहुत-सी बातें शामकी प्रार्थनाके बाद ही कहते थे।

सुबह-शामके भोजनके समय भी कभी-कभी जरूरी सूचनाअें दी जाती थीं। क्योंकि अुस समय भी सब स्त्री पुरुष और बालक अिकट्ठा पाअे जाते थे।

कभी-कभी शामकी प्रार्थनामें विद्यार्थियोंको नसीहत देनेमें बड़ा कीमती वक्त खर्च होता था। बड़े-बड़े नेता दूरसे आये हुअे हैं और गांधीजी बच्चोंको प्रार्थनामें कैसे बैठना, नाक, कान आदि साफ करने

रखना अिसकी ब्योरेवार सूचनायें दे रहे है, अैसे दृश्य देखनेको मिलते थे। जब किसी आगन्तुकने अिस बातकी मेरे पास शिकायत की तब मैंने कहा कि गाधीजीके मन सब बाते अेक-सी महत्त्वकी है। भगवानके मन किसी फूल या क्षणजीवी कीडेका जीवन-विकास, किसी महापुरुषका जीवन-विकास, अेक बड़े राष्ट्रका अुत्थान और पतन और किसी महान् सस्कृतिका विस्तार और सकोच सब अेकसे महत्त्वपूर्ण होते हैं। कोअी चीज छोटी है अिस वास्ते अुसकी अुपेक्षा और बड़ी चीज है अिस वास्ते अुसका विशेष महत्त्व अैसा भेद भगवानके घरमे नही है। मैं तो मानता हूँ कि हमारे लहूके अन्दर केवल खुर्दबीन (सूक्ष्मदर्शक-यन्त्र) से ही दिखाअी देनेवाले कीटाणुकी शरीर-रचनामे भी अद्भुत खूबियाँ और कौशल्य दीख पडेगा।

अेक दिन मीरा बहनने बापूजीसे पूछा कि आश्रमकी प्रार्थनामे भिन्न-भिन्न देव-देवियोकी स्तुतियाँ, वर्णन और भक्तिके जिक्र क्यो आते है? गाधीजीने अुन्हे अितना ही कहा कि अेक ही भगवानके ये सब नाम और रूप है। अनेक देव-देवियोका अुपासक हरअेक हिन्दू जानता है कि भगवान तो अेक ही है। दो हो नही सकते। लेकिन अगर ज्यादा समझनेकी अिच्छा है तो काकासाहबसे पूछ लेना। सुबहका प्रार्थनाकी रचना अुन्हीकी है।

मैंने मीरा बहनको यह तो समझाया ही कि हम सब अेकेश्वरपूजक ही है। लेकिन सब तरहकी अुपासनाओको अेक साथ स्वीकार करनेसे हम लोगोमे जो व्यापकता (अिसे मैं अुदारता नही कहूँगा) और समझ-शक्ति आती है, वैसी और किसी भी धर्ममे पाअी नही जाती। बाकीके सर्व धर्मोकी अेक ही रट है कि "हम ही अेक सही हैं, बाकीके सर्व गलत है।" जहाँ तक मैं जानता हूँ अपवाद रोमन लोगोका है। वे लोग सब तरहकी अुपासनाको मजूर रखते थे। अुनके पेंथीयनमे सब देवोंकी मूर्तियाँ अेक साथ रखी जाती थी और वे मानते थे कि सब धर्म सही है।

मीरा बहनको असका आश्चर्य हुआ तब मैंने गिब्बन लिखित रोमन साम्राज्यके ह्रास और पतनके अितिहाससमें चार पृष्ठ पढ़कर सुनाओ। मैंने कहा कि बचपनसे सर्वधर्म-समभावके संस्कार हम मिलते हैं। असी लिअे हमारे देशमें सर्वधर्म सम्मेलन चल सका। यह अेक समझने की बात है। मीरा बहनको सन्तोष हुआ। प्रार्थनाकी जो बात अुन्हें खटकती थी अुसकी सुन्दरता अुनके ध्यानमें आ गओ।

शायद असके बाद ही मीरा बहनने अेक दिन बापूजीसे कहा कि 'मैं आपकी शिष्या बन चुकी हूँ। मुझे हिन्दू धर्मकी दीक्षा दीजिये।' गांधीजीने कहा कि अुसकी क्या जरूरत है? अीसाओ धर्म क्या बुरा है? अीसाओ हो मेरे पास आकर ज्यादा अच्छी अीसाओ बन जाओ यही मैं चाहूँगा। मीरा बहन बापूजीका भाव समझ नहीं सकी। अुसको बड़ा दुःख हुआ कि गांधीजी अुसे अपनाते नहीं कुछ फरक रखते हैं। अेकान्तमें अुसने बहुत दुःख किया रोयी। बादमें गांधीजीने अुसे आश्रम धर्मका वह पहलू समझा दिया कि सब धर्म अेकसे आदर पात्र हैं। सब धर्मोंके प्रति हम अेकसा सद्भाव रखते हैं। असलिअे हम धर्मान्तरकी आवश्यकता महसूस नहीं करते। हिन्दू धर्ममें जो कुछ खास बातें अच्छी लगें अुनको अीसाओ धर्ममें दाखिल करते किसीको कठिनाओ नहीं होनी चाहिये। धर्मान्तर कोओ पाप नहीं है। लेकिन किसीको अेक समाजमें से अुखाड़कर दूसरे समाजमें बोनेका प्रयत्न अनावश्यक चेष्टा है। धर्मान्तरका आग्रह रखे बिना हम सबका स्वीकार करते हैं असकी सुन्दरता तुम क्या नहीं देखती हो? जब बापूजीका दृष्टिबिन्दु ध्यानमें आया तब मीरा बहनको पूरा सन्तोष हुआ।

अितना तो कबूल करना ही चाहिये कि हम लोग जो प्रार्थनामें शरीक होते थे हमेशा प्रार्थनामें तल्लीन नहीं हो सकते थे। प्रार्थनाके मन्त्रोंका, श्लोकोंका और भजनोंका अर्थ और विवरण मैंने आश्रममें अनेक बार किया है। लेकिन प्रार्थनाके समय मन्त्रोंके या श्लोकोंके अर्थ

की तरफ हमेशा ध्यान रहता ही था अैसा नही। लेकिन अेक विशिष्ट आध्यात्मिक और भक्तिमय वायुमण्डलका हम अनुभव करते थे और प्रार्थनाके समय जो भी विचार मनमे आते थे अुनका वायुमण्डल भी प्रार्थनाके कारण अुन्नत रहता था। कोअी हीन विचार मनमे आया तो अुसकी हीनता पहचाननेमे प्रार्थनाका वायुमण्डल तुरन्त मदद करता था। और आश्रमके आदर्शोका स्मरण करानेमे प्रार्थनाकी मदद बहुत कुछ होती थी।

यह भी सबका अनुभव है कि मनमे कोअी विशेष चिन्तन चलते रहनेसे प्रार्थनाके किसी अेक वचनकी तरफ कभी-कभी विशेष ध्यान जाता था। अुसका विशेष अर्थ मनमे बिजलीके जसा चमक पडता था और अुस तरह सारी जीवनदृष्टि यकायक परिष्कृत हो जाती थी और सारा दिन कृतार्थ हो गया अैसा सन्तोष मिलता था। कभी-कभी किसी वचनका विशेष पहलू ध्यानमे आनेके बाद जीवनके हर क्षेत्रमे अुस दृष्टि का विनियोग करते कअी दिन चले जाते थे।

कभी-कभी प्रार्थनाका, खास करके भजनोका कोअी हिस्सा चित्तमे चुभ जाता था और अपनी गलती या सकुचितताकी ओर ध्यान जानेसे वृत्ति अन्तर्मुख होती थी और आत्मशुद्धिका सकल्प कारगर हो जाता था।

अगर हरअेक आश्रमवासीने अिस तरह प्रार्थनामे अपनेको हुअे लाभ लिख रखे होते तो वह अेक कीमती मसाला हो जाता। मैने तो अनेक बार महसूस किया है कि प्रार्थना अुपासकके लिअे आखिरी पूँजी है। और सब तरहसे अगर मनुष्य हार गया, प्रतिज्ञादुर्बल हुआ, सकल्पशक्ति क्षीण हुअी तो अुत्कट प्रार्थनाके बल पर वह अपनेको बचा सकता है और जीवनमे नया पर्व शुरू कर सकता है। लेकिन यह लाभ स्थायी तभी हो सकता है, जब प्रार्थनाकी अुत्कटता मनुष्य कायम रक्खे। अगर प्रार्थनामे हृदय नही रहा तो फिरसे गिरते देरी नही लगेगी। प्रार्थनासे

फल अनुताप, पश्चात्ताप और प्रायश्चित्तकी भावना तो कम-से-कम होनी ही चाहिये।

प्रार्थनामें हमेशा कुछ-न-कुछ माँगनेका रहना ही चाहिये अैसा नहीं है। चित्तवृत्ति अन्तर्मुख हो, अीश्वरके सान्निध्यका कुछ-न-कुछ अनुभव हो, हृदयकी आर्द्रता और आध्यात्मिकता जाग्रत हो तो प्रार्थना सफल हो गयी। जब सचमुच ही हृदयमें माँगकी आवाज अुठे तब तो अीश्वरकी करुणा पिघल ही जाती है और अुसकी ओरसे मदद मिलते देरी नहीं लगती। लेकिन रोजमर्राकी प्रार्थनामें अेक पवित्र वायुमण्डल जाग्रत रखनेका ही काम होता है।

प्रार्थनाका और अेक भाग है जिसके द्वारा जीवनके सबके सब महत्त्वके पहलुओंका स्मरण होता है और अिस तरह अपने कौनसे पहलूकी अुपेक्षा हो रही थी अुसकी ओर ध्यान जाकर जीवनका विकास सर्वांगीण होनेमें मदद मिलती है।

गांधीजी जब-जब आश्रममें रहते थे तब-तब करीब सबके सब आश्रमवासी प्रार्थनामें हाजिर रहते ही थे। लेकिन जब गांधीजी मुसाफिरीमें जाते थे तब प्रार्थनामें कभी-कभी बहुत कम लोग होते थे। और मुझे अैसे भी दिन याद हैं जब शीतकालके दिनोंमें अकेले मगनलालभाअी प्रार्थनाभूमि पर आकर बैठते थे और प्रार्थनाके मंत्र बोलकर, भजन गाकर चुपचाप चले जाते थे। अुन्होंने दूसरे आश्रमवासियोंसे अिसकी कभी भी शिकायत नहीं की। अुनकी निष्ठा देखकर औरोंके मनमें अुनके प्रति आदर बढ़ता था लेकिन प्रार्थनामें बैठनेवालोंकी संख्या बढ़ती नहीं थी।

मेरी अेक विचित्र वृत्तिका यहाँ जिक्र करना चाहिये। रोज नियमसे प्रार्थना करनेके लिअे आश्रमवासियोंका खास आग्रह रहता था अुसमें मैं भी अेक था। रोज बिना स्नान किये जैसे रहा ही

नही जाता वैसे ही दो समयकी प्रार्थना किये विना मुझसे रहा नही जाता था। प्रार्थना-भूमिपर जाकर सवके साथ् वैठ नही सका तो अपने घरपर या जहाँ रहा वहाँ पर प्रार्थना करता ही था।

अेक दिन वौद्ध सघके वारेमे और वुद्ध भगवान्के विहारोके जीवनके वारेमे पढते अेक नियम मैंने पाया कि अेक ही आश्रम या आराममे दो प्रार्थनाअे नही होनी चाहिअे। अेक सस्थाकी अेक ही प्रार्थना हो, यह अुनका नियम था। मुझे यह जँच गया। तवसे मैं मानने लगा कि आश्रम सामुदायिक प्रार्थना करता है, अुसमे मेरी भी प्रार्थना आ गअी। मुझे अलग प्रार्थना नही करनी चाहिअे। अिसमे आलस्यका भाव नही था, किन्तु सामुदायिक अेकता महसूस करनेकी वात थी। जव गाधीजी मुसाफिरीसे आश्रममे आअे तव मैंने वौद्धोका नियम अुनको सुनाया और कहा कि अव मैं अलग प्रार्थना नही करता हूँ। गाधीजीने वताया कि मेरी वातमे विचार-दोष है। प्रार्थना तो अखड चलनी ही चाहिअे और सामुदायिक प्रार्थनामे नही शरीक हो सके तो जहाँपर भी हम रहे, अपनी प्रार्थना तो करनी ही चाहिअे।

प्रार्थना-समयका अेक और अनुभव यहाँ लिखना जरूरी है। गुजरात विद्यापीठमे जव मैंने सुवह्-शामको प्रार्थना शुरू की तव पहले ही साफ कर दिया कि आश्रममे प्रार्थनामे हाजिर रहना हर अेकके लिअे लाजमी है। जो हाजिर नही रहता वह आश्रमजीवनका द्रोह करता है। विद्यापीठके छात्रालयकी साधना अलग है। अिसमे प्रार्थनामे हाजिर रहनेका आग्रह या नियम नही है, केवल सवको आमन्त्रण ही है।

प्रार्थनाके वाद अुपस्थिति-पत्र लेकर हरअेककी अुपस्थिति दर्ज की जाती थी। कोअी विद्यार्थी प्रार्थनामे हाजिर न रहे, लेकिन अुसके अन्तमे अुपस्थिति-पत्रमे अपनी अुपस्थिति दर्ज करानेके लिअे आ जाय तो अुसे मैं अनुचित नही समझता था।

अेक दिन अेक सज्जनने मुझसे कहा कि 'आपकी प्रार्थनाका वायुमण्डल प्रसन्न, काव्यमय, अध्यात्म-पोषक, अुन्नतिकर होता है। लेकिन अुसके अन्तमें विद्यार्थियोंके नाम पुकारना और हरअेक विद्यार्थीका 'आम' कहकर अपनी अुपस्थिति दर्ज कराना यह बिलकुल यांत्रिक और नीरस व्यापार मालूम होता है। अिसे आप क्यों चलाते हैं?'

अुसको जो जवाब मैंने दिया, मेरे लिअे बिलकुल स्वाभाविक था। लेकिन बात सही होते हुअे भी अुस तरफ मेरा ध्यान नहीं गया था। अिसलिअे मेरे अुत्तरसे स्वयं मुझे ही आश्चर्य हुआ।

मैंने कहा कि 'मैं आजकलके अध्यापकोंके जैसा विद्यार्थियोंकी खुशामद करनेवाला नहीं हूँ। लेकिन छात्रदेवो भव यह मेरा जीवन-मन्त्र है। विद्यार्थियोंमें भगवान्को ही देखो। भगवानकी सेवा समझकर ही विद्यार्थियोंकी सेवा करो। अिसलिअे जब अुपस्थिति-पत्रक पढ़ा जाता है तब विद्यार्थियोंके नाम सुनते मेरे मनमें विष्णु-सहस्रनामके पाठका ही भाव पैदा होता है। भगवान्के हजार नाम सुनते और रटते भक्तोंके मनमें जो धन्यता होती है वही आनन्द विद्यार्थियोंके नाम सुनते मुझे मिलता है। मुझे वह प्रवृत्ति कभी भी नीरस नहीं लगी।' अुस सज्जनको मेरा जवाब अितना अच्छा लगा कि अुसने बम्बअीके अेक अखबारमें हमारी प्रार्थनाका और अिस सवाल-जवाबका जिक्र किया। तब मेरे ध्यानमें आया कि मेरी अिस दृष्टिमें कुछ विशेषता थी।

आश्रममें प्रार्थनाके बाद हरअेक आश्रमवासीने सूत कितना काता अिसका हिसाब दर्ज किया जाता था। हमारे मनमें वह भी हमारी प्रार्थनाका ही अेक अंग-सा लगता था।

कुछ प्रत्यक्ष लाभ भी है ?

प्रार्थना या अुपासनासे आश्रमको, आश्रमवासियोको या समाजको लाभ क्या हुआ, यह सवाल जरूर पूछा जा सकता है। किसी रिवाज या संस्कारके असरके बारेमे शुरू-शुरूमे हम कुछ कह नही सकते। फलाना रिवाज चलानेसे किन-किन लाभोकी अपेक्षा हम रखते है अुसका वर्णन फलश्रुतिके रूपमे हम चाहे जितना कर सके, लेकिन जब अेक प्रयोग अठारह बरस तक चलाया गया तब अनुभवकी बुनियाद पर कुछ-न-कुछ निश्चित रूपसे कहना ही चाहिअे।

आश्रमजीवनके साथ जो दो-चार व्यक्ति अधिकाधिक अेकरूप हो गये थे, अुनके चित्त पर और जीवन पर क्या-क्या असर हुआ यही सबसे महत्त्वका सवाल है।

स्वयं गांधीजी, विनोबा भावे, मगनलाल गांधी, महादेवभाअी देसाअी, किशोरलाल मशरूवाला आदि थोडे लोगोमे आश्रमके व्रत, अुसका आदर्श और अुसके वायुमण्डलका प्रभाव अधिक-से-अधिक था। आश्रमके चन्द शिक्षकोमे और विद्यार्थियोमे भी आश्रमकी प्रार्थनाके प्रति असाधारण निष्ठा थी। जब प्रार्थना चलती थी, प्रार्थनाके मन्त्रो पर प्रवचन सुनाये जाते थे, तब सुननेवाले अनेक लोग अन्तर्मुख होते थे। अपने गुणदोषोका परीक्षा करते थे। प्रयत्नपूर्वक जीवन-परिवर्तन करते थे। अुस समय तो बहुत लोगोको प्रार्थनासे प्रत्यक्ष और स्पष्ट लाभ हुआ। लेकिन यह सब चन्द लोगोके आग्रह और समुदायके वायु-मण्डलके कारण था। जब अँगीठी जलती है तब आस-पासकी सब चीजे

अुस वक्तके लिअे गरम होती है। अंगीठी दूर होनेपर सब चीजें ठण्डी पड जाती हैं।

आश्रमके बहुतसे लोगोंके लिअे दो वक्तकी प्रार्थना यांत्रिक कवायदके जैसी थी। अितनी नियमितता बरतो तब चलानस अुनकी कुछ आदत सुधर गअी अुनके जीवनमें कुछ व्यवस्था आअी। प्रार्थनाके मन्त्रोंके अर्थ और प्रवचन सुननेसे अनेक धार्मिक जीवनका आदर्श स्पष्ट हुआ। हरअेकको अपने जीवनको कसनेके लिअे अेक कसौटी मिल गअी। मनुष्य किसी अुच्च आदर्श तक पहुँच सके या नहीं यह अलग बात है। मनुष्य अुचाअी तक चढकर बाज दफे अुतर भी सकता है। लेकिन जब अेक दफा कोअी अुच्च आदर्शको समझ लेता है पसन्द करता है तब अुससे कम दर्जेका आदर्श अुसे भाता नहीं। पसंद किये हुअे अस आदर्शके अनुसार ही संस्कृतिका मूल्य तय होता है।

निर्मलिस अठारह बरस तक अिसा अुच्च वातावरणमें रहना, हृदयसे अुसका स्वीकार करना और अुसीके अनुसार अपने जीवनको बनानेका कोशिश करना यह अेक स्थायी लाभ ही है।

प्रार्थनाका स्वयं गांधीजीके मन पर सबसे अधिक असर हुआ था, होता था और वे दिन-पर दिन जोरासे आगे बढ़ते थे। वे हमेशा कहते थे कि जो भक्ति दिन-पर दिन बढती नहीं वह भक्ति ही नहीं। गांधीजीके आवना मानदोंमें दयनरा जिन्ह मौका मिला, वे ताज्जुब होते थे कि गांधीजी अपनी साधनामें कितने आगे आगे बढ़ते जाते हैं।

यह सब होते हुअे भी गांधीजीको प्रार्थनासे पूरा लाभ अुठाते कुछ विरप भी आने थे।

समुदायको सेवा करनेवालेको कुछ-न-कुछ त्याग करना ही पडता है। फौजके किसी शिविरमें जब सब सैनिक सोते हैं तब चन्द पहरेदार

को जागना पडता है। जब सब खाने बैठते है तब चन्द लोगोको खाना छोडकर परोसना पडता है। आश्रमकी प्रार्थनामे जब सब लोग आँखें मूंदकर अेकाग्रतासे प्रार्थनामे तल्लीन होनेकी कोशिश करते रहते, गाधीजीको आँखे खुली रखकर देखना पडता था कि कोअी बच्चे शरारत तो नही करते ? औरोकी प्रार्थनामें विक्षेप तो नही कर रहे हैं ?

अिसी तरह जब प्रार्थनाके शब्द बोले जाते थे या भजन गाये जाते थे, अुस समय आश्रमजीवनको अुन्नत करनेके लिअे किस विषय पर या किस घटना पर प्रवचन चलाना है अिसकी बात भी अुन्हे सोचनी पडती थी। गाधीजीके स्वभावकी अितनी प्राजलता थी कि अैसा विक्षेप होने पर वे कह देते थे कि आज मेरी प्रार्थना अेकाग्र नही हो सकी।

आश्रमवासियोमे जो व्यक्ति ज्ञानमार्गी वेदान्ती थे, अुनका चिन्तन अेक ढगका होता था। और हृदय-सर्वस्वका अर्पण करनेवाले जो भक्त-हृदय थे अुनकी प्रार्थना कुछ अलग ही होती थी। चन्द लोगोंके मन पर भजनमे आये हुअे किसी दृष्टान्तका प्रभाव पडता था तो चन्द लोग चित्तको अन्तर्मुख करनेवाली बाते पसन्द करते थे।

प्रार्थनाके बाद आश्रमवासियोमे जो व्यक्तिगत चर्चा चलती थी अुस परसे प्रार्थनाके असरका ख्याल हम कर सकते थे।

अतिपरिचयके कारण आदर कम होता है। अिस न्यायसे कअी आश्रमवासियोंके मन पर प्रार्थनाके मन्त्रोका कोअी असर ही नही होता था। अेक रस्म अदा की और छूट गये अितना ही भाव दिखाअी देता था। अिसके विरुद्ध जो बाहरके लोग आश्रमी वायुमण्डलका लाभ अुठानेके लिअे चन्द दिनोंके लिअे आश्रममे आ रहते थे अुनके चित्त मे बडी अुत्कटता रहती थी, कभी-कभी अुत्तेजना भी पाअी जाती थी। अुनको प्रार्थनामे स्पष्ट लाभ होता दीख पडता था।

प्रार्थनाका अेक और भी विशेष असर यहां पर दर्ज करना चाहिअे।

जब प्रार्थना करनेवाला समुदाय रोज वही-का-वही रहता है तब भी नावीन्य न होनेके कारण सारा वायुमण्डल जड और शिथिल हो जाता है। लेकिन जब समुदाय बदल जाता है या अुसमें चन्द नये लोग आते हैं तब पुराने लोगोंमें भी अेक तरहका नवचैतन्य आ जाता है। नित्य-परिचयके आदमीसे मिलनेसे कुछ नयी बातें सूझती नहीं। नये लोग मिलनेसे कुछ-न-कुछ सूझ ही आता है। अिसी तरह प्रार्थनाके समुदायमें नये व्यक्ति शरीक होने पर प्रार्थनावृत्ति तेज हो जाती है।

प्रार्थनाका कुछ हिस्सा तो स्थायी होता है और चन्द भजन नये नये आते हैं और अुनके राग भी अलग-अलग होते हैं। अिसका असर भी अच्छा होता है। भोजनमें चावल रोटी दाल रोज वही-की-वही और शाक, अचार आदि व्यंजन नये नये—वैसा ही प्रार्थनाके अिस प्रकारका असर होता था।

हमने देखा कि प्रार्थना श्लोकबद्ध और संगीतमय होनेसे बहुत दफे अर्थकी तरफ ध्यान ही नहीं जाता। अिलाजके रूपमें हम लोगोंने थोड़ी गद्य प्रार्थना शुरू की। शुरू शुरूमें अिसका असर अच्छा हुआ। अर्थकी ओर ध्यान अेकाग्रतासे खिंच जाता था। लेकिन कुछ दिनोंके बाद गद्य प्रार्थना वही-की-वही चलनेसे वह यान्त्रिक बनने लगी। अितना ही नहीं अुसके बोलनेमें अेक तरहकी गेयता भी आने लगी।

श्री विनोबाने अीशोपनिषदके गद्य अनुवादको भी गेय रूप दिया है और वहाँ अेक नया तेज हो गया है।

यह हुआ प्रार्थनाके सामान्य लाभका अनुभव। प्रार्थनामें द्वैतभाव अद्वैतभाव वेदान्तकी अभेदभक्ति और भक्तोंकी दास्यभक्ति असे जो अनेक प्रकार आते हैं अुनका असर भिन्न लोगोंके मन पर भिन्न ही होता है। मैं पापी हूँ मुझमें पापका प्रतिकार भी नहीं होता, तुम्हारे दया करने पर ही मैं बच जाअूँगा असे भावोंका चन्द लोगोंके

मन पर अच्छा असर होता है और वे अुन्नतिके पथ पर अग्रसर हो जाते है। दूसरे लोगोंके मन पर 'मो सम कौन कुटिल खल कामी' अैसे भाव का अच्छा असर नही होता। मैं निर्दोष निष्पाप आत्मा हूँ, मुझे दुनियाकी चीजे बाँध नही सकती, मैं अमृतका पुत्र हूँ, जो परमात्मा सूर्यके बिम्बमे विराजमान है वही मेरे हृदयमे बसा हुआ है अैसे भावों से चन्द लोगोको अधिक लाभ होता है और वे अपनी कमजोरियाँ छोड़ सकते है। प्रार्थनामे बैठे हो तब भी आशा और निराशा दोनोकी लहरे मनमे अुठती, कभी अेक तो कभी दूसरी। दोनोका असर पवित्र और शुभ ही होता है।

प्रार्थनाके जो मुख्य दो प्रकार है—व्यक्तिगत और सामाजिक—दोनोके बारेमे अूपर कमोवेश लिखा है। व्यक्तिगत लाभ और सामुदायिक लाभ अलग-अलग होते है।

मनुष्य जब समाजमे रहता है तब ज्यादातर अुसकी शुभ भावनाअे ही जाग्रत होती है। व्यक्तिगत जीवनसे सामाजिक जीवन कुछ हद तक अधिक पवित्र और अुन्नत किया जा सकता है। अशआराममे और पापमे फँसे हुअे समाजकी बात अलग है। लेकिन सामान्य तौर पर शरीफ लोगोको समाजका सहवास लाभदायक ही होता है। और जब अैसा समाज प्रार्थनाके लिअे, अुपासनाके लिअे और सम्मिलित आध्यात्मिक पुरुषार्थके लिअे या सेवाके लिअे अिकट्ठा होता है तब तो समाजमे हम परमात्माकी अेक विभूतिका ही दर्शन करते है और अिस-लिअे हमारे सब अुन्नत भाव जाग्रत होते हैं और अेक-दूसरेकी मदद करते है। जितने लोग अेकत्र प्रार्थना करते है अुनके अन्दर अेक आध्यात्मिक भाअीचारा पैदा होता है जिसके कारण छोटे-बड़े कअी मतभेद दब जाते हैं और आत्मीयता जोर पकड़ती है।

गांधीजीने कअी बार सारे देशका दौरा लगाया। अुनके साथियो

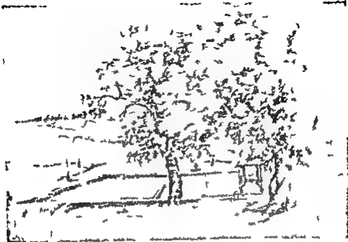
ने भी कअी बार अनेक प्रान्तोंकी यात्रा की। श्री विनोबा भी आज गांव गांव पैदल जाकर प्रार्थनाका बल आजमा रहे हैं और प्रार्थनाका आशीर्वाद फैला रहे हैं। यह बड़ा ही सांस्कृतिक लाभ है, जिसका नाप निकालना मुश्किल है। जब कोअी व्यक्ति समाज या राष्ट्र अपनी हर तरहकी पूंजी खो बैठता है तब अुसका अंतिम सहारा पश्चात्ताप पुनीत प्रार्थना ही होता है। खोया हुआ सब तेज और सत्व प्रार्थना द्वारा फिरसे प्राप्त हो सकता है। प्रार्थना ही अीश्वरकी कृपा है और आत्माकी अमाप शक्ति है।

गांधीजी और आश्रम-प्रार्थना

प्रार्थनाका स्थान कैसा हो अिसके वारेमे गाधीजीने बहुत-कुछ सोचा। लोकजाग्रतिके लिअे भारत-भ्रमण करते गाधीजी अनेक प्रान्तोमे गये। रोज सुवह-शाम प्रार्थना होती ही थी। सुवहकी चार-साढे-चार वजेकी प्रार्थनामे ज्यादा लोग नही आते थे अिसलिअे मेजवान गृहपतिके घरमे ही किसी कमरेमे प्रार्थना होती थी। शामकी प्रार्थना अक्सर खुले मैदानमे होती थी। चाहे-जितने लोग प्रार्थनामे शरीक हो जायँ, जगहकी तगी नही महसूस करनी पडती।

अिसपरसे गाधीजीने सोचा कि आश्रममे प्रार्थनाके लिअे कोअी मकान नही वनाया जाय। सावरमतीके किनारे खुली जगह पसन्द करके वहाँ स्वच्छ सफेद रेती विछवा दी। अुसपर बैठकर हम सुवह-शाम प्रार्थना करते थे। अेक दिन गाधीजीने कहा कि हमारा प्रार्थना-मन्दिर जितना वडा है, अुतना तो कोअी विश्व-सम्राट् भी नही वना सकेगा। ये चार दिशाअे हमारे मन्दिरकी चार दीवारे है और तारोसे शोभित यह आकाश अुसका गुम्वज है। अितना वडा मन्दिर तैयार करनेकी शक्ति किसी भी मानवमे नही है।

स्वराज्य-प्राप्तिके लिअे जव आखिरी फैसला करनेका गाधीजीने तय किया और सावरमतीसे दाडीके समुद्रतट तक पैदल यात्रा करके वहाँ नमकका कानून तोडनेका सकल्प जाहिर किया, तव अग्रेज सरकार सोचने लगी कि अिनको कव गिरफ्तार किया जाय। अहमदावादमे रोज



अुपासना मन्दिर

अफवाह फैलने लगी कि आज रातको गांधीजीको गिरफ्तार करके सरकार बम्बी ले जायगी। साबरमती स्टेशनपर स्पेशल ट्रेनकी तैयारी थी ही। तब तो अहमदाबादके और आसपासके देहातोंके हजारों लोग गांधीजीके दर्शनके लिअ आश्रममें आने लगे। वे सब नदीकी रेतीपर ही आ जाते थे और सुबह शामकी प्रार्थनामें शरीक होते थे। तब गांधीजीने कहा कि आश्रमकी भूमिपर अगर हमने प्रार्थना-मन्दिरके तौरपर कोअी मकान बना लिया होता तो वह चाहे जितना बड़ा होने पर भी अितने लोग अुसमें नहीं बैठ सकते। क्या ही अच्छा हुआ कि हम लोगोंने अींट पत्थरकी दीवारोंका प्रार्थना-मन्दिर नहीं बनाया।

बारिशके दिनोंमें और शीतकालमें कुछ तकलीफ रहती थी सही, लेकिन अिस कारण हम प्रार्थना-भूमिको छोड़कर हृदयकुंजके बरामदेमें जाकर बैठे असे दिन बहुत कम थे।

आश्रमके प्रारम्भके दिनोमे आश्रमवासी ज्यादातर गुजराती ही रहते थे। अिसलिये प्रार्थनाके वाद गाधीजी जो कुछ कहते थे, वह प्रवचनके रूपमे हो या सूचनाके रूपमे, गुजरातीमे ही कहते थे। गीता-प्रवचन हो, अुपनिषदका विवरण हो या किसी त्योहारका अितिहास हो मैं तो गुजरातीमे ही वोलता था। विनोवा अक्सर गुजरातीमे और कभी-कभी मराठीमे वोलते थे।

जव जमनालालजी आश्रममे आने लगे तव भी आश्रमका काम गुजरातीमे ही चलता था। अुनके लिअे हिन्दी, मारवाडी, मराठी और गुजराती चारो भाषाअे अेक-सी थी। लेकिन जव आश्रममे अनेक प्रान्त के लोग आने लगे तव राष्ट्रभाषा प्रचारक जमनालालजीने गाधीजीके सामने दरखास्त रखी कि अव आश्रमका सव काम हिन्दीमे ही चलना चाहिअे और प्रार्थना-प्रवचन तो खास हिन्दीमे ही हो। गाधीजीने अुनकी वात मान ली और तवसे आश्रमकी भाषा और प्रार्थनाकी भाषा हिन्दी ही हो गअी।

गाधीजीने मनुष्यजीवनके धार्मिक, राजनीतिक और व्यावहारिक अैसे भेद कभी नही किये थे। अुनके मन सारा जीवन ही धर्म-साधना था। और अुनकी सव-की-सव क्रियाअे व्यापक अर्थमे सेवामय प्रार्थना ही थी। अिसलिअे प्रार्थनाके अन्तमे अुनके जो प्रवचन होते थे, वे जीवनके सव अगोको और सव पहलुओको स्पर्श करनेवाले व्यावहारिक विचारोंसे भरे हुअे रहते थे। आश्रम-व्यवस्था, आश्रमकी सफाअी, आहारके प्रश्न, व्यक्तियोकी समस्याअे, समाज-सुधार, राजनीतिक मसले, आश्रममे आये हुअे मेहमान, गाधीजीका खास अपना कोअी आध्यात्मिक अनुभव, गीता-जैसे किसी धर्मग्रन्थका विवेचन या सन्तवाणीका रहस्य सव-कुछ अुनके लिअे धर्मसाधना ही थी। आत्मोन्नति, विश्वकल्याण और विज्ञान-शुद्ध जीवन-क्रम यही थी अुनकी जीवन-दृष्टि।

जब प्रार्थना चलती थी तब गांधीजीकी अपेक्षा थी कि छोटे-बड़े स्त्री-पुरुष हम सब लोग आंख मूंदकर प्रार्थनामें तल्लीन, अथवा गांधीजीके ही प्रिय शब्दोंमें कहें तो, ध्यानावस्थित हो जायें। गांधीजी अक्सर अन्तर्मुख हो ही जाते थे। लेकिन अुनकी भूमिका आश्रम पिताकी थी। प्रार्थनामें आश्रमके छोटे-मोटे बच्चे कैसे बैठते हैं, श्लोक कैसे बोलते हैं आदि सब बातोंपर ध्यान रखनेका वे अपना खास कर्तव्य मानते थे। अुन्होंने अेक दिन प्रार्थनाके बाद कहा भी कि आप सब लोग आंख मूंदकर ध्यानावस्थित हो जाअिये। मेरा कर्तव्य अिन बच्चोंके साथ है। मैं तो श्लोकोंके अर्थोंका चिन्तन भी करूं और आंख खुली रखकर अिन बच्चोंकी तमीजकी चौकी भी करूं। गांधीजीके लिअे यह द्विगावधान या योग सहज सिद्ध था। सब तरहका काम अुत्कटतासे करते अुनका आत्मचिन्तन अखण्ड चलता था।

यही कारण था कि कर्तव्य-पालनमें और विश्व-कल्याणकी योजनाअें सोचने और अमलमें लाते अुनकी ओरसे कभी भी प्रमाद नहीं होता था। और यदा कदाचित अगर तनिक भी प्रमाद हुआ तो अितने दुःखी होते थे और अपने प्रति अुनकी अितनी नाराजगी होती थी कि वही बड़ा प्रायश्चित्त होता था। सब व्यक्तियोंके प्रति क्षमाके सागर होते हुअे अुन्होंने अपने प्रति तनिक भी क्षमा-वृत्ति नहीं धारण की। वे हमेशा कहते थे कि मनुष्यका सारा जीवन हर क्षण विचारमय होना चाहिअे। अुन्होंने अपने जीवनमें यह साधना पूरी की थी और अिस तरह अपना सारा जीवन अुन्होंने प्रार्थनामय बनाया था।

आश्रम-स्मृति—१

विलायतमे गाधीजी गोरोके बीच गोरोके घरमे रहे थे। दक्षिण आफ्रिकामे गाधीजीके परिवारमे, अुनके फिनिक्स आश्रममे मिस्टर वेस्ट, मिस्टर पोलक और मिस स्लेशिन् जैसे गोरे लोग रहते थे। दूसरे भी कअी लोग थे। मुसलमानोका और गाधी-कुटुम्बका सम्बन्ध शुरू से घनिष्ठ था। तो भी गाधी-कुटुम्बमे पुराने वैष्णव जीवनके सस्कार बहुत थे। और अुनमे जन सस्कार भी काफी थे।

फिनिक्स मडली जब शातिनिकेतनमे रह रही थी और मै अुनके परिचयमे आया तब अुनके अिन सस्कारोका निरीक्षण कर सका था। मुझमे सनातनी महाराष्ट्रीय सस्कार अपने ढगके थे। हम सब लोग अेक तरह के सुधारक, बुद्धिप्रामाण्यसे चलनेवाले। लेकिन पुराने सस्कारोका असर तो था ही।

शातिनिकेतनमे रसोअी करनेवाले ब्राह्मण ही थे। ब्राह्मणेतरके हाथोका खानेमे बहुतोको अुज्र रहता है और रसोअी बनानेके शुचि-अशुचि के नियम ब्राह्मण ही अच्छी तरहसे समझ सकते है और पाल सकते है। जब शातिनिकेतनमे गाधीजीके आनेपर और गाधीजीकी प्रेरणासे ब्राह्मण रसोअिये कुछ दिनके लिये दूर किये गअे और सब विद्यार्थी तथा अध्यापक रसोअी करनेका और परोसनेका काम करने लगे, मि॰ अेड्रूज और मि॰ पिअरसन भी परोसनेका काम करनेके लिये तैयार थे। मैने सुझाया कि व्यक्तिश. मुझे अेतराज नही है लेकिन कअी लोगोको आपत्ति होगी कि क्रिश्चनके हाथका परोसा हुआ हम क्यो खावे ? अिसलिये अनेक

सुधार अेक साथ अवश्य करके हम अपना काम न बिगाड़ें। अेक बंगाली अध्यापकने दलील की कि दत्तात्रयबाबूकी बात सही तो है लेकिन मिस्टर अॅण्ड्रयूज और पिअरसन अध्यापक हैं। गुरुओंके हाथका परोसा हुआ अन्न खानेमें किसीको भी अुज्र नहीं होगा। मैंने कहा यह दलील अच्छी है, लेकिन औसाओ गुरुओंके चरणोंमें बैठकर सीखना अलग बात है। किन्तु आसाअियोंके हाथका खाना कअियोंको मंजूर नहीं होगा। आज मैं अिस रूढिवादियोंकी वकालत नहीं करूँगा।

खैर, बात वहीं रही। दोनों परोसने लगे। बादमें जब गुरुदेव (रवि बाबू) आश्रममें आये और अुन्होंने स्वावलम्बी प्रयोगको अपना आशीर्वाद दिया तब गुरुदेवसे मैंने अपना विचार प्रकट किया। अुन्होंने क्या जवाब दिया अिस वक्त याद नहीं है।

अिसी तरह जूते पहनकर रसोअीघरमें जानेका जानेकी बात भी छिड़ी। मैंने कहा कि जूते चमड़ेके हों या कॅनवसके हों रास्ते पर चलने के लिये जिन चीजोंका अिस्तेमाल होता है अुन पादत्राण गन्दे तो होते ही हैं। अुन्हें पहनकर रसोअीघरमें जाना अच्छा नहीं है। अेक दो अध्यापकोंने दूसरी बात छेड़ी। अुन्होंने कहा कि चमड़ा तो अपवित्र है। चमड़ेके जूते पहनकर रसोअीघरमें नहीं जाना चाहिये कॅनवसके या रबर के जूते पहनकर रसोअीघरमें जानेमें अेतराज नहीं है। मैंने कहा कि यह तो ब्राह्मण धर्मकी दलील हुअी। हमारे यहां भी लोग असा ही मानते हैं। लेकिन मेरे मन स्वच्छताका खयाल ज्यादा महत्त्वका है।

अहमदाबादके गांधीजीके आश्रममें भी असी ही चर्चा चलती थी। जैन और वैष्णव दोनों संस्कारोंकी वहां प्रधानता थी। कुछ सघर्ष भी था। श्री पूंजाभाअी श्रीमद् राजचन्द्रके परम भक्त, बापूजीके आश्रमकी सेवा करनेके लिये तत्पर और अुत्सुक थे। गुरुमें बाजारसे चीजें लानेका काम वे ही करते थे। वे जब आश्रममें आकर रहते थे तब अुनके रस्म रिवाज

गाधी-कुटुम्वके वैष्णव आदर्शके लिये आपत्तिजनक मालूम होते थे। लेकिन लोग किसी भी तरह सब-कुछ सहन कर लेते थे। लेकिन जब पूजाभाओी आश्रमवासियोको अपने घर भोजनके लिये बुलाने लगे तब मुश्किले खडी हुअी। जूठे न-जूठेका भेद अुनके घर पर कम था। श्री मगनलालभाओीने गाधीजीके पास अपनी कठिनाओी पेश की होगी। मैं अुन दिनो आश्रममे नही था। वडौदामे रहता था। गाधीजीने सोचकर निर्णय दिया कि आश्रमवासी आश्रमके वाहर किसीके घर पर भोजन करे ही नही!!

खान-पान और छुआछूत तो सनातनियोकी दिलचस्पीका खास विषय। वालकी खाल अुतारे विना लोगोको सन्तोष होता ही नही।

अव सवाल अुठा कि गाधी-कुटुम्वके लोग जब राजकोट घर जाअेगे तो वहाँ क्या करेगे? तर्कनिष्ठ गाधीजीने फतवा दिया कि अपने हाथसे पकाकर खावे। छोटे प्रभुदास गाधी जब राजकोट गये, अपने ही घर अपने हाथमे अलग पकाने लगे! वैष्णव दुनियाको कैसा लगा, मालूम नही।

अिसके थोडे दिन वाद मेरे पुराने मित्र और साथी, जो आश्रमवासी बने थे, वडौदाके पास सयाजीपुरामे मेरे वहाँ मेहमान होकर ठहरे। आश्रमका नया नियम साथ ले आये। अव अुनके लिये मैंने अेक चूल्हा बना दिया। लकडी, वर्तन सब-कुछ दिया। मामाकी आँखे कमजोर। रसोअी बनाते धुअेने अुनको रुला दिया। मैं देशपाडे साहेवके घरमे ही अलग रहता था। मैंने गाधीजीसे खत लिखकर पूछा कि यह नये नियम की वला क्या है? मामा मेरे घर पर नही खा रहे है। गाधीजीने तुरन्त फतवा भेज दिया कि—'काका आश्रमके आदर्शोको मानते है। अिसलिये अुनके घर पर मामाको अलग रसोअी वनानेकी जरूरत नही। मामा काकाके घर पर खा सकते है।' (मामा वडे कष्टमेसे वच गये!)

अुन दिनो गाधीजीका आश्रम अहमदावादके पास कोचरब नामके

गोरस था। (अब वह स्थान अहमदाबादका अेक हिस्सा ही हो गया है। मैं अुसे अुपनगर भी नहीं कहूँगा।)

गांधीजीके आश्रममें दूध-घी आदिका सेवन निषिद्ध था। केले, मूंगफली आदि चीजें चाहे जितनी खाओ। दूधके बिना जिनका काम चलता ही नहीं, अुनके लिये नारियलका रस बनाकर दिया जाता था। अहमदाबादमें कच्चा नारियल कहाँसे मिले? सूखे नारियलका खोपरा काटकर गरम पानीके साथ अुसे पीस देते थे। वह था आश्रमका दूध। जिनको चाहिये अुन्हें थोड़ा थोड़ा दिया जाता था।

लाल, हरी या सूखी मिर्च खाना भी निषिद्ध था। अिमाम साहबका खाना तीखेके बिना नहीं चलता था। अुनके लिये बाजारसे मूलीकी मोगरी लाई जाती थी। मूली कुछ तीखी होती ही है और अुसकी मोगरी विशेष। गांधीजीका कहना था कि मोगरी है तो स्वादमें तीखी। लेकिन पकानेसे अुसका तीखापन नष्ट होता है। मिर्चका वैसा नहीं। अिससे स्पष्ट होता है कि मोगरी जीभके लिये तीखी है, लेकिन पेटके लिये अुत्तेजक नहीं है। जो हो, अिमाम साहबके घर पर मोगरीका व्यवहार बहुत कुछ बढ़ा। अपने सिद्धान्त और लोगोंका व्यवहार और शरीरकी आवश्यकतायें अिनके बीच समझौता करनेमें गांधीजी बड़े ही कुशल थे।

आश्रममें खाना अितना अच्छा मिलता था कि दूध-घी आदि गोरसके अभावसे कोअी परेशान नहीं थे।

लेकिन घी-दूधके अभावमें श्री मगनलालभाई गांधीका शरीर दुबला-पतला हो गया।

मैं गांधीजीके साथ सन १९१७ में सिंध जा रहा था तब मैंने गांधीजीसे कहा कि — आश्रमके बहुतसे नियम मुझे पसन्द हैं। अुनका पालन मैं घर पर भी करता ही हूँ। लेकिन दूध-दही, मक्खन आदि छोड़ने

को जी नही चाहता। आश्रममे ये चीजे नही खाअूँगा लेकिन आश्रमके बाहर दूध-दही, घी लेनेकी अिच्छा है। आपकी अिजाजत हो तो वैसा करूँगा।" गाधीजीने प्रसन्नतासे अिजाजत दी।

अुन दिनो मेरा नियम था कि जो कुछ भी खाना हो, भोजन शुरू करनेके पहले हिसाबसे थालीमे परोसवा लेता था। हमारे यहाँ असे व्रत को 'अेकवाढ' (अेक-परोस) कहते है। अगर कोअी कुछ परोसने भूल गया तो वह चीज बादमे मै नही लेता था। और भोजनके समय मौन रखने का मेरा नियम था ही। अिस मौनके कारण ही मैने अेक-परोसका नियम चलाया था। ये मेरे दोनो नियम बरसो तक चले। अिन नियमो के कारण आश्रमवासियोके बीच मेरी अिज्जत बहुत कुछ बढी। खास-कर अिसलिये कि आश्रममे दाखिल होनेके पहले ही ये नियम मैने लिये थे। श्री पूजाभाअी भी मेरी बहुत-कुछ कदर करने लगे थे।

अेक दफे गाधीजीको अुत्तर भारतके अेक महीनेके प्रवासके लिये जाना था। अुन्होने मुझे बडौदा लिखकर पूछा कि आश्रममे आकर रहोगे ? और बच्चोको पढाओगे ?

मै जानता था कि आश्रममे बडी अुथल-पुथल हो रही है। श्री ठक्कर बाप्पाकी सिफारिशसे अेक हरिजन कुटुम्ब आश्रममे दाखिल हुआ था। दूधाभाअी, अुनकी पत्नी दानी बहन और छोटी लडकी लक्ष्मी तीनो आश्रममे आकर रहे। रसोअी बनानेमे दानी बहन मदद करने लगी। अिनके हाथका पकाया हुआ खानेको पू० कस्तूरबा तैयार नही थी। गाधीजीने कहा कि अैसी हालतमे आश्रम छोडना पडेगा। अुसके लिये भी 'बा' तैयार नही थी। गाधीजीके लडके 'बा' पर बिगड गये, "बा, दक्षिण आफ्रिकामे तो हमारे घरपर अीसाअी, मुसलमान सब तरहके लोग रहते थे। अुनके साथ तो आप खाती-पीती ही थी। अब अेक हिन्दू हरिजन आश्रममे आया तो आपत्ति क्यो अुठाती है ?"

वह तो परदेश था। अब तो हम अपने देशमें हैं। विद्यार्थी गांधीके बालक हैं। यहाँ मेरे अंगा कैसे चलेगा ?

बा ने पढ़ाने मृगमें आदि सारा काम चलाया। बापूजी रोज बा के साथ दलील करते रहे। सारा दिन आश्रमका काम करना कुअँसे पानी निकालना और लाना, चक्की चलाकर आटा पीसना, रसोअीका सामान साफ करना, अनाज साफ करना आदि काम दिन भर रहते ही थे। अिसके अलावा आये हुअे लोगोंसे बातचीत करना, विद्यार्थियोंको अपने जीवन सिद्धान्त समझाना, Imperial Citizenship Association की सभाओंके लिये पढ़ना, कलासमें रातकी मुसाफिरी अहमदाबादसे बम्बअी और बम्बअीसे अहमदाबाद महीनेमें कअी बार करना, अितने सख्त परिश्रमके बाद रातको सोनेके बजाय पू० बा के साथ अस्पृश्यता निवारणकी चर्चा करते रहना बापूजीके लिये कड़ी ही कसौटी थी। रोज सिरमें दर्द होने लगा तो भी बापूजीकी तपस्या कम न हुअी।

आश्रमका यह सारा वायुमण्डल मैं जानता था। मगनलालभाअीके परिवारके लोग राजकोट चले गये। मगनलालभाअीको गांधीजीने बुनने का काम सीखने सिखानेके लिये मद्रासमें श्री चेट्टियारके पास भेजा था और अिस तरह कौटुम्बिक कलह तो बहुत कुछ कम कर दिया।

असी हालतमें जब गांधीजीकी ओरसे बुलावा आया तब मैंने लिखा कि मैं अकेला नहीं आअूँगा। मेरी पत्नी और दो बच्चे भी साथ आयेंगे। बापूजीको संतोष हुआ। जब और परिवार हरिजनके आनेसे आश्रम छोड़ रहे थे मैं आग्रहके साथ सहपरिवार आश्रममें जाकर रहना पसन्द करता था। मेरा अेक विद्यार्थी गिरधारी कृपलानी भी मेरे साथ गांधीजी के आश्रममें रहने आया।

असा था अन दिनोंका आश्रमी वायुमण्डल। आश्रम क्या चीज है

यह आजमानेके लिये तरह-तरहके लोग आश्रममे रहने आते थे और कुछ दिन रहकर चले जाते थे। आश्रममे आहार बहुत ही अच्छा, ताजा, स्वच्छ और पौष्टिक मिलता था। लेकिन अुसमे नमक, मसाला, घी या दूध नही होता था। अिसलिये बहुतसे लोग परेशान होकर चले जाते थे। पेटके लिये पौष्टिक आहार मिले अिससे भी जीभके लिये तीखा, खट्टा आदि स्वाद मिले यह मनुष्यकी—हमारे देशके लोगोकी—आवश्यकता अधिक थी यह देखकर बडा ही आश्चर्य होता था। आश्रममे स्त्री-पुरुष, बाल-बच्चे सब पवित्र वातावरणमे पूरी आजादीके साथ रह सकते थे। दो समयकी प्रार्थना, धर्मचर्चा, सत्पुरुषोका सहवास ये सब होते हुअे भी वहाँके परिश्रमी जीवनसे चन्द लोग डरते थे और चले जाते थे। परिश्रममे बर्तन माँजना, टट्टी साफ करना, कुअेसे पानी लाना, जमीन, दीवार, छत सब कुछ रोज-का-रोज साफ करना, दोपहरके समय साथ बैठकर अनाज साफ करना, सुबह अुठकर चक्की चलाना, टट्टीका मैला गाडनेके लिअे खड्डे खोदना अैसे-अैसे घरेलू मामूली काम ही करने पडते थे। लेकिन सफेदपोश आरामतलब लोगोको यह सारा असह्य-सा मालूम होता था।

जो लोग मेहमान होकर दो-चार दिनके लिये आश्रममे आते थे अुनके लिये परिश्रम करनेका नियम नही था। थोडे लोग खुशीसे करते थे। बाकीके आश्रमवासियोकी सेवा लेकर अुनको धर्मात्मा कहनेमे ही आनन्द मानते थे। मेहमानोकी सेवा करना भारतीय सभ्यतामे और संस्कृतिमे बडा ही आनन्दका विषय है। अेक दिन अेक भाअी आश्रमसे जा रहे थे। वे स्वयं अपनी लोहेकी ट्रंक अुठा नही सकते थे। टाँगा मिलना मुश्किल था। गांधीजीने मुझसे कहा, "काका, अिनकी ट्रंक अुठाकर अेलीस ब्रिज तक ले जाओ। वहाँ अिन्हे जरूर टाँगा मिलेगा।" अैसे परिश्रम करना मेरे लिअे कोअी नअी या कठिन बात नहीं थी। मैंने प्रसन्नतासे ट्रंक अुठाअी। देखा तो बोझा ठीक-ठीक था। अिन्कार

करनेका न जो चाहा न वह बना भी था। दुःख मिटाने लगा अपना। पानी पकड़कर पाटपर न रही और दोनों हाथ बांधकर गाँव मारकर दुःखकी नहीं परवा। आश्रममें अनाज बिना बिल्कुल नजर नहीं था। वहाँ तक दुःख न हुआ। सद्भाग्य मेरा कि वहाँ टाँगा मिल गया। जिस भाभीको दुःख थी वह भाभी अमीर घरकी आत्मा नहीं थी। मामूली मध्यमवर्गकी ही आत्मा थी। इसलिए उसे मुझसे कभी मन पसंद नहीं हुआ। उन दिनों लोग मुझे पहचानते भी नहीं थे। जब लौटा तब देखा कि मेरे गलेका पाठ थोड़ी कम गया है और पाँवकी चमड़ी भी थोड़ी उतर गयी है। मैंने वसलीन और आयोडिन लगाया। चार-आठ दिनमें चमड़ी ठीक हो गयी। गांधीजीसे कभी भी मैंने इसकी बात नहीं की। बापूजीने मुझे कभी बार [illegible] शाबाशीतक डालनेको भेजा है। और दोपहरकी गरमीमें कभी-कभी नंगे पैर भी गया हूँ।

यह सब मैं पाठकोंकी सहानुभूति पानेके लिए नहीं लिख रहा हूँ। प्रारम्भके दिनोंमें आश्रमका वायुमण्डल कैसा था इसका ख़याल आज कलके नये लोगोंको समझानेके लिए लिख रहा हूँ।

जब हम लोग आश्रमसे स्टेशन जाते थे तब टाँगेमें न जाते हुए अपना असबाब उठाकर पैदल ही तीन मीलका फासला तय करते थे। इसमें गांधीजी भी अपवाद नहीं थे। वे स्वयं अपना बिस्तरा पीठपर और अपनी मूँगफलीकी थैली हाथमें लेकर पैदल ही चलते थे और समयके पाबन्द इतने कि उनको मिनटभरकी देर भी नहीं सहती।

एक दिन मैं गांधीजीके साथ बम्बई जानेवाला था। मैं सोता था किरायेपर लिये हुए आश्रमके ही नजदीकके दूसरे बंगलेमें। छह बजे निकलनेकी बात थी। जब मैं गांधीजीके कमरेमें पहुँचा तब छह बजकर एक मिनट हुआ था। यानी मैं एक मिनट देरीसे पहुँचा। गांधीजी वहाँ

नही थे। बरामदे पर जाकर देखा तो गाधीजी अपना सारा असबाब अुठाकर रास्ते पर चल रहे हे। दौडकर मै अुनके पास पहुँच गया और मैने पूछा, "आपने मेरी राह भी नही देखी ?"

"राह देखनेकी क्या जरूरत थी ? मैंने छ बजेका समय दिया था। तुम्हे देरी हुअी अिसलिअे मै भी देरी करूँ ?" मै बडा शरमाया। (अेक मिनटकी देरी हुअी अिसलिअे नही। देरी करना तो मेरा हमेशाका स्वधर्म है। किन्तु गाधीजीसे भोलेपनमें सवाल पूछा अिसलिअे।)

आश्रम-स्मृति—२

गांधीजीको अुत्तरकी मुसाफिरीमें जाना था अिसलिये अुन्होंने आठ महीनेके लिअे आश्रममें सुन्दर बुलाया था। मैं आ पहुँचा तब दक्षिण आफ्रिकासे आया हुआ अेक तमाम लड़का बीमार था। अुसके पिताने अपने सारे लड़के गांधीजीको अर्पण किये थे। फकीरी अुनमें अेक था। बहुत दिन तक बीमार रहकर फकीरीका आश्रममें ही देहान्त हुआ।[1] रातका समय था और सुबह गांधीजीको मुसाफिरीमें जाना था। सुबहकी प्रार्थना बड़ी गम्भीर थी। गांधीजीने चार ... । अब मुझे देखना था कि आश्रम धर्मके अनुसार अन्त्यसंस्कार गांधीजी किस तरह करते हैं।

अेक बड़ी चादर जमीन पर फैला दी। अुस पर स्नान कराओी हुआी फकीरीकी देह रख दी। पाँव सीधे हाथ शरीरके साथ बगलमें। फिर अेक मजबूत बांसका लम्बा ... छाती पर रख दिया सिरसे लेकर पाँव तक। फिर वह चादर बांसके साथ शरीरको लपेट दी गओी और अच्छी अेक मजबूत

१ अिस विषयमें गांधीजीने अिस प्रकार लिखा है—

'फकीरीकी मृत्यु आश्रमके योग्य नहीं गिनी जा सकती। आश्रम नया ही था। आश्रमके संस्कारोंने फकीरी पर अपना असर नहीं डाला था। फिर भी फकीरी बहादुर बालक था। मेरी शिकायत अिसलिअे है कि वह अपने पेटू स्वभावका भोग बन गया। अुसकी मौत मेरी परीक्षा थी। मुझे याद है कि आखिरी दिन [redacted] सारी रात मैं अुसके पास बैठा था। और सुबह मुझे गुरुकुल जानेके लिअे गाड़ी पकड़नी थी। अर्थीको छोड़कर कलेजा पत्थर करके मैंने स्टेशनका रास्ता लिया। फकीरीके बापने फकीरीको और अुसके तीन भाअियोंको यह समझकर मेरे सुपुर्द किया था कि मैं फकीरी और दूसरोंके बीच कोअी भेदभाव नहीं करूँगा। फकीरी गया और अपने तीन भाअियोंको भी मैं खो बैठा।

रस्सीसे चादरमे लपेटा हुआ शरीर वावूके साथ सिरसे लेकर पाँव तक मजबूतीसे वाँधा गया। शरीरको श्मशान तक ले जानेके भिन्नधर्मी रिवाज और भिन्न प्रान्तके रिवाज भी मैंने देखे है। गाधीजीकी पद्धति मुझे सबसे सादा, सस्ती और वैज्ञानिक लगी। मैंने सुना था कि वनारसमे जहाँ मकान अूँचे किन्तु सँकरे होते है, सीढियाँ वहुत सीधी होती है, गलियाँ भी सँकरी होती है, वहाँ शव ले जानेका यही अेक तरीका कारगर है। अिसमे शव अुठानेवाले दो हो, चार हो या ज्यादा हो अेक ही कतारमे अेकके पीछे अेक होकर चलते है। सीधी सीढी अुतरनेमे भी आसानी होती है।

हम आश्रमवासियोने फकीरीकी अर्थी अुठाअी। रामदास गाधीने भी अपना कन्धा देना चाहा। मैंने अुन्हे मना किया। गाधीजीने कारण पूछा। मैंने कहा, "हमारा रिवाज है कि जिसके पिता जीवित हैं अुसे किसीकी अर्थी नही अुठानी चाहिये। पहला कन्धा पिताजीको ही देना चाहिये।" गाधीजीके लिये यह वात नअी थी। आश्चर्यसे अुन्होने सुन लिया और कहने लगे कि 'अिस नियमके पीछे भावना है। लेकिन हमेशा के लिये अैसा नियम नही हो सकता।'

श्मशानभूमि तक आनेका गाधीजीके पास समय नही था। अुन्हे मुसाफिरीके लिये स्टेशन पर जाना था। फकीरीको आधे रास्ते पहुँचा-कर गाधीजी लौटे। हम लोग आगे गये।

जहाँ तक मुझे स्मरण है, मैं फकीरीके अग्निसस्कार पूरे होने तक श्मशानभूमिमे नही रहा। मुझे कुछ जरूरी काम था। और वहुत लोग थे। फकीरीकी अन्तिम यात्रामे मै अपना कन्धा दे सका यही मेरे लिये समाधान था।

अिसके वाद आश्रममे कअी मृत्यु हुअी है। व्रजलालभाअीका कुअेमे

गिरकर देहान्त हुआ था। पं० नारायणराव खरेका लड़का बसन्त चेचकसे गया। अिमाम साहबके घर पर अैसी ही दो तीन मृत्यु हुअी थीं। खुद अिमाम साहब काबाजी जानेके परिषदमेंसे लौटे अुसके अगले दिन चल बसे थे। बाकी (मेरी पत्नी) का देहान्त भी आश्रममें ही हुआ। जब चतुर भाअी नामके आश्रमके सेवक जब गये तब बड़ोंकी गलतीसे छोटे छोटे बच्चोंको भी श्मशानभूमि तक ले जाने दिया था। अुसका असर हमारे बालक पर बहुत बुरा हुआ। बहुत दिनों तक वह बीमार रहा और बात बातमें डर जाता था। आश्रमके प्रधान व्यवस्थापक श्री मगनलाल भाअीका देहान्त बिहारमें हुआ था। मुझे फाजीलमें आये हुये सोनाराम मतान्धजीकी पत्नी गंगादेवीजीका देहान्त भी आश्रममें ही हुआ था। अिनके अलावा भीखा और मघजी अिन दो बालकोंके नाम गाथाजान लिये हैं।

मैं मानता हूं कि ब्रजलालभाअीके बारेमें यहां कुछ लिखना अिष्ट है। ब्रजलालभाअी आश्रमके प्रारम्भमें थे। कम बोलनेवाले पर दृढ़ योगी। अुन्होंने बरसों तक अलोना नमक खाना छोड़ दिया था। अुनका कहना था कि यही कारण था कि बिच्छू काटने पर भी अुनको जहर नहीं चढ़ता। कहीं बिच्छूको देखा तो अुसे हाथसे अुठाकर दूर फेंक आते थे। सारे आश्रमकी रसोअी अकेले करते थे। अुनका कभी किसीके साथ झगड़ा हुआ मैंने देखा या सुना नहीं। अैसे बड़े शान्त स्वभाव ब्रजलालभाअी भी सेवा करते करते चल गये और आखिरी दिनोंमें बीमार रहते थे।

अब दिन आश्रममें नये आये हुए दो चार लोग मेरे पास कुछ शिकायत करने आये। कहने लगे आश्रमके व्यवस्थापकोंसे बातचीत करनेकी हमारी हिम्मत नहीं होती। आश्रम बाहरसे अच्छा लगता। पर यह सब-कुछ शान्तिसे और सहानुभूतिसे सुन लेते हैं। अितनी प्रस्तावना सुननेके बाद मैं तैयार हो गया कि कोअी गम्भीर शिकायत है। अुन्होंने कहा कि आश्रममें हर कोअी आदमी पुराना हो या नया हो या यहाँ

ग्रन्थत्रयी

गीता, योगसूत्र और मनुस्मृति

आश्रमके प्रारम्भके दिनोंमें जब प्रार्थनाके बाद मुझे प्रवचन करने पड़ते थे तब धर्मके बारेमें और उसके साहित्यके बारेमें कुछ-न-कुछ कहूँ ऐसी आश्रमवासियोंकी अपेक्षा रहती थी। एक दफे मैंने रामायण, महाभारत और भागवतके बारेमें कहा। अठारह पुराण और अठारह उपपुराण तो हैं ही, लेकिन रामायण, महाभारत और भागवत— इस त्रयीका महत्त्व भारतीय संस्कृतिके लिए असाधारण है यह मैंने समझाया।

दूसरी दफा भारतके अध्यात्म-सम्प्रदायोंके बारेमें कहते हुए मैंने पंचायतन सम्प्रदायोंका विशेष महत्त्व समझाते हुए मैंने कहा कि शिव, शाक्त और वैष्णव जैसे तीन सम्प्रदायोंने भारतके हृदय पर अपना कब्जा जमाया है।

एक विद्यार्थीने पूछा कि हमारे प्रधान धर्मग्रंथ कौनसे? तब मैंने प्रथम ऋक्, यजुः और साम ऐसी वेदत्रयीका महत्त्व समझाकर कहा कि यह तो हमारे धर्मकी बुनियाद है। लेकिन आज धर्मका सारा दारोमदार जिस ग्रंथत्रयी पर माना जाता है वह है — आश्रमभजनावलीमें गीता, मनुस्मृति और पातंजल योगसूत्र। गीतामें हमारा सारा तत्त्वज्ञान पाया जाता है। लेकिन गीताका भाष्य पढ़ते हैं तो उनका निचोड़ तो आ ही जाता है। लेकिन गीताका ध्येय यह है कि अमुक ढंगसे सार्वभौम तत्त्वज्ञानको जीवनमें उतारनेका रास्ता बताया है। इसका महत्त्व समझानेके लिए मैंने पातंजल योगसूत्र और गीता जिस

मैंने यह भी कहा कि महात्मा मुन्शीरामजीने (बादमें अुन्होंने संन्यास लेकर श्रद्धानन्दका नाम धारण किया) अेक देशानुकूल मनुस्मृति बनाओी है और महाराष्ट्रके श्री चिन्तामणराव वैद्यने भी मनुस्मृतिके चन्द श्लोक पसन्द करके प्रकाशित किये हैं। गांधीजीने कहा कि अगर अिन संग्रहोंमें हमारे आश्रम धर्मकी सब बातें आओी हों तो कुछ करनेका बाकी नहीं रहता। नहीं तो अेक अपना संग्रह तैयार करना होगा।

यह बात वैसी ही रह गओी।

अिसके बाद कारवारके श्री नाडकर्णीने अेक आन्दोलन अुठाया। अुनकी सूचना थी कि महात्माजी, मालवीयजी, भगवानदासजी, शंकराचार्यके चार पीठोंके अधिपति — अैसे अेक पचास-साठ लोगोंको अेकत्र करके अुनके द्वारा अेक नओी स्मृति तैयार करवाओी जाय, जो आजकी समस्त हिन्दू जातिको अुपयोगी हो और मान्य भी हो। गांधीजीने तुरन्त जवाब दिया कि मैं अपनेको अिस योग्य नहीं समझता, अिसलिये आपकी योजनामें शरीक नहीं हो सकता।

अिस सिलसिलेमें जब मैंने महात्माजीसे बातचीत की तब अुन्होंने कहा कि आज सर्वमान्य हो सके अैसी स्मृति बनाना मुश्किल तो है ही। लेकिन जिस तेजीसे हिन्दू समाजमें परिवर्तन हो रहा है और अन्य धर्मावलम्बियोंके साथ जिस तरह हमारा सहयोग बढ़ रहा है अुसे देखते आज हिन्दू समाजको किसी भी स्मृतिमें बाँध देना शायद अुचित नहीं होगा।

गांधीजीके आश्रमकी बात अलग थी। हम लोग सब धर्म-समभावमें माननेवाले सब धर्मके लोगोंका आश्रममें अेक विशाल कुटुम्ब बनाकर बैठे थे। और आध्यात्मिक जीवनका प्रयोग करते हुअे समय-समयपर जीवनमें परिवर्तन करनेके लिअे भी तैयार थे।

जब गांधीजीने सन् १९३३ में सत्याग्रह आश्रमका विसर्जन किया और वे वर्धा रहने चले गये तब सेवाग्राम आश्रममे अुन्होने अेक विवाह-विधि तैयार कर दी जो किसी भी धर्मके लोगोके लिये काम आ सकती है। अुस विधिके अनुसार सेवाग्राममे जो प्रथम विवाह हुआ अुसका पौरोहित्य श्री प्रभाकरजीने किया था, जिनके माता-पिता हरिजन ओसाअी थे।

आश्रमकी प्रार्थनामें सनातनी, जैन, बौद्ध, पारसी, मुसलमान, अीसाअी आदि सब धर्मोंकी और पन्थोकी प्रार्थनाअे अिकट्ठी हुअी है। और आश्रम जीवन सबके लिअे अनुकूल बनाया गया है और अुसमे सबके पाससे अुदारताकी अपेक्षा रखी गअी है।

साबरमती आश्रमकी जमीन

'जब तक अंग्रेजोंका राज है, खेतीका सवाल अुठाकर हम ज्यादा कुछ कर नहीं सकते। अिसलिअ खेतीके बाद जो दूसरा महत्त्वका सवाल है, वह है वस्त्रका। अिसीको हम हाथमें लेना है।' यह थी गांधीजीकी दृष्टि।

अिसलिअ अुन्होंने आश्रमकी स्थापनाके साथ यही सवाल हाथमें लिया और अुसीको सबसे अधिक प्राधान्य दिया।

भारतके अनेक प्रान्तोंमें घूमनेके बाद और अनेक प्रान्तोंसे आये हुअ आग्रह और आदरभरे आमन्त्रणोंका विचार कर गांधीजीने अपना आश्रम अहमदाबादमें स्थापित करनेका निश्चय किया, क्योंकि सारे भारतमें वस्त्र-अुद्योगका महत्त्वका केन्द्र अहमदाबाद ही था। शुरू शुरूमें अुनको विश्वास नहीं था कि हाथसे सूत कातनेकी विद्याका पुनरुद्धार हो सकेगा। अिसलिअ हाथबुनाअीसे ही प्रारम्भ करनेका अुन्होंने सोचा था। अहमदाबादकी स्वदेशी मिलोंसे अच्छा और सस्ता सूत मिल जायगा अैसी अुनकी श्रद्धा थी।

शुरूमें कोचरबके पास बैरिस्टर जीवणलालके बंगलेमें आश्रमका प्रारम्भ हुआ। तब 'बनाट विद्या' (बुननेकी कला) सीखनेके लिअ गांधीजीने श्री मगनलालभाअी गांधीको मद्रासके श्री त्यागराय चेट्टीके पास भेजा। मगनलालभाअी अिस विद्यामें प्रवीण होकर लौटे तब तक बेकार बैठना ठीक नहीं अैसा सोचकर गांधीजी वस्त्रविद्याकी अन्तिम कला—कपड़े सीनेका काम ले बैठे। आश्रमके प्राथमिक कामोंमें जितना

भी समय निकाल सकते थे, अुसमे वे कपडे सीनेको बैठ जाते थे। अिस काममे अुनके साथी और शिष्य छोटे देवदास थे। अिन दोनोको सुअी-धागा लेकर नित्य घण्टो तक कपडे सीते मैंने देखा है।

[यही पर दूसरा अेक अनुभव लिख दूँ, जो बहुत बादका है। आश्रमकी स्थापना सन् १९१५ के मध्यमे हुअी और जो बात मैं यहाँ लिखनेवाला हूँ सन् १९३० के मध्यकी है।

बम्बअी सरकारने मुझे साबरमती जेलसे हटाकर गाधीजीके साथ रहनेके लिअे यरवदा जेल भेजा था। जब मैं वहाँ पहुँचा तब गाधीजी यरवदा जेलमे मामूली कैदियोके कपडे सीनेका काम करते थे। पूना की लेडी ठाकरसीके घरमेसे अेक सीनेका सचा मँगवाकर गाधीजी कैदियोकी अर्धचन्द्राकार टोपियाँ सी देते थे। वहाँ जाते ही अिस काम मे मैं अुनका साथी और शिष्य बना और थोडे ही दिनोमे वह सारा काम मैंने अपने हाथमे ले लिया और गाधीजी चरखे पर और तकली पर सूत कातनेके अपने प्रयोगमे पूरा समय देने लगे।

वस्त्रविद्या भारतका सबसे बडा राष्ट्रीय गृह-अुद्योग है और भारतीय सस्कृतिका आधार भी अिसी विद्याके विकास पर निर्भर है यह गाधीजीका दृढ विश्वास था। अिसलिअे कपडे सीनेके काममे भी अुनको पूरी दिलचस्पी थी।

थोडी अपनी बात यही पर लिखूँ। जेलमे रहते साबरमतीमे मैंने बेतकी कुरसियाँ, पुष्पकरंडक आदि बनानेमे काफी प्रवीणता हासिल की। गाधीजीके साथ रहते और अुसके बाद सिन्ध हैदराबाद जेलमे कपडे सीनेके कामका कौशल्य बुद्धिगत और हस्तगत किया। दूसरे हस्तोद्योगोंके बारेमे अपने अनुभव लिखनेका यह स्थान नही है।]

जब गाधीजीने वस्त्रविद्याका ख्याल रखकर आश्रमकी स्थापना

अहमदावादमें की तब मेरी सूचना कुछ अलग थी। मेरा आग्रह था कि बम्बअी और अहमदाबादके बीच सूरत या नवसारीके आसपास आश्रम खोलना चाहिये। मेरी दलील ये थीं—(१) बम्बअी और अहमदाबाद दोनों आधुनिक संस्कृतिके शहर हैं। अुनमें भारतकी हृदयानुभूति पूरी तरहसे प्रकट नहीं होता। (२) देहातके बीच रहनेसे गांवोंका लाभ अुठा सकेंगे। (बम्बअी भी बम्बअी-अुद्योगका मन्स्वरा केन्द्र है।) और सूरत नवसारीकी ओर रहकर बम्बअी और अहमदाबाद दोनों शहरों पर हम प्रभाव डाल सकेंगे। (३) सूरत-नवसारीकी ओर खेती भी अच्छी होती है। वस्त्र-अुद्योगकी दृष्टिसे अिस प्रान्तका भी महत्त्व अधिक है। (४) स्वराज्यका काम किसान और जुलाहा दोनोंके सम्पर्कसे ही अच्छी तरहसे चल सकेगा। (५) मेरी पांचवीं दलील केवल भावनामूलक थी। अंग्रेजोंने अपनी पहली कोठी तापी नदीके किनारे सूरतमें स्थापित की थी। स्वराज्यके आन्दोलनके लिअे स्थापित आश्रमका प्रारम्भ भी सूरतमें हो अिसमें अैतिहासिक औचित्य है।

असी अैसी अनेक दलीलें मैंने पेश कीं। लेकिन गांधीजीने आश्रम की स्थापनाके लिअे अहमदाबाद ही पसन्द किया।

मुझे अितना ही संतोष रहा कि गांधीजीका सबसे बड़ा सत्याग्रही आन्दोलन सूरत जिलेमें ही हुआ और बारडोलीके सत्याग्रहके कारण निराश भारतमें अेक नया चैतन्य पैदा हुआ। सरदार वल्लभभाअीने बारडोलीका आश्रम ही अपने लिअे पसन्द किया और आगे जाकर खादी विद्याका भी बारडोली अेक अच्छा केन्द्र बन गया।

सत्याग्रहाश्रमका प्रारम्भ तो कोचरबमें किराये पर लिये हुअे अेक बंगलेमें हुआ। [आज स्वराज होनेके बाद बम्बअी सरकारने अिस बंगलेको खरीदकर वहाँ अेक सुन्दर आश्रम चलाया है जिसे भी हम गांधी स्मारक कह सकते हैं।]

आश्रमके लिअे अपनी निजी जमीन और अपने निजी मकान आव-श्यक थे ही। अनेक स्थान सोचे गअे। अुनमेसे आखिरकार सावरमती के किनारेकी जमीन पसन्द की गअी। यह स्थान देखनेके लिअे जिस दिन हम गये वह मुझे वरावर याद है। स्वय गाधीजी, अुनके परम मित्र, रगूनके जौहरी डॉ० प्राणजीवन मेहता, रणोलीके प्रख्यात कृपि-विपारद और मेरे मित्र श्री नाथाभाअी पटेल और मैं अैसे हम चार घोडागाडीमे वैठकर जगह देखने गये। जगहमे आकर्पक कुछ नही था। लेकिन नदीका दृश्य वहुत सुन्दर था। अेक वाजू पर छोटीसी चन्द्रभागा नदी सावरमतीमे मिलती थी और सगम पर अिस ओर दुधेश्वर महादेवका मन्दिर और अुस ओर श्मशान था। श्मशानसे नजदीक अहमदावादके लिअे पानीका प्रवन्ध करनेवाला पावरहाअुस था। अुत्तरमे सावरमतीका रेलवे पुल था और अेक वाजू सरकारी सेन्ट्रल जेल। स्थान हम सवको पसन्द आया। गाधीजीने नाथाभाअीसे पूछा, 'नाथाभाअी आप जमीनके माहिर है। कहिअे अिस जमीनमे क्या-क्या हो सकेगा?'

नाथाभाअी ठहरे 'आखावोला', (साफ-साफ वोलनेवाले)। अेक शव्दमे अुन्होने जवाव दिया 'ववूल!'

मैं हँस पडा। गाधीजी और डॉ० मेहता अेक-दूसरेकी ओर देखने लगे। नाथाभाअीने तुरन्त कहा, 'आप क्यो मानते है कि ववूलकी आम-दनी नगण्य है? असली वात यह है कि जमीनका कोअी महत्त्व नही। खेड, खातर (खाद) और पानी तीनोका प्रवन्ध अच्छा हुआ तो चाहे जैसी जमीनमेसे हम किसान अच्छी आमदनी कर सकते है।'

यह सुनते ही मुझे अमेरिकाके प्रख्यात नीग्रो वैज्ञानिक कार्व्हरका स्मरण हुआ। वे भी हमारे नाथाभाअीके मतके ही थे।

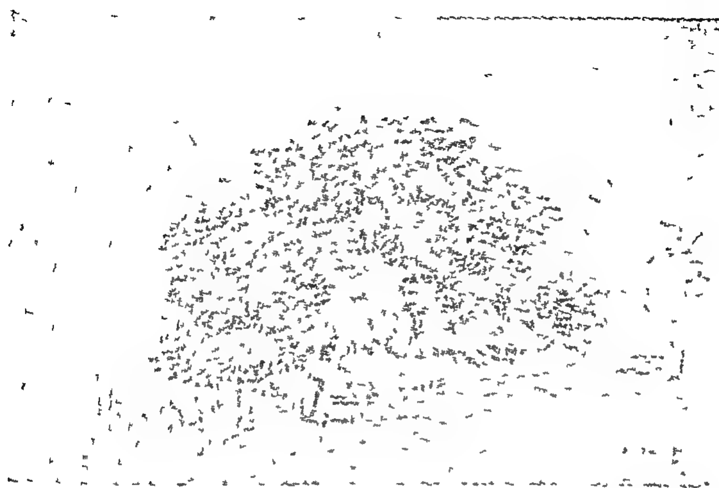
[यही पर कहना अुचित होगा कि वम्वअी अिलाकेमे नाथाभाअी

की प्रतिष्ठा असाधारण था। जिस "मानम मती हो नहा सरता थी तमाखूके लिअे भा जो जमीन अच्छी नहा थी असे स्थान पर कल्मी वरक प्रयोग करके नाथाभाओीन पसठ हजारका मुनाफा किया था। सरकारी कृषि विभागके अध्यापक और विद्यार्थी भी वडौदाके पास रणाली जाकर नाथाभाओीकी कृषि-पद्धतिका अध्ययन करते आय हैं।]

जमीनवालन मन्दिरके नजदीककी थोडी जमीन अपने लिअ रखकर बाकीकी हम बच डाले। मरा आग्रह था कि कुछ ज्यादा दाम दकर भा सारी पूरी जमीन हम लेनी चाहिये। मैंने यह भी सुझाया कि आस पास जितनी भी जमीन मिल सके लेनी चाहिअ। मैंने कहा 'आश्रम खूब फैला हो। आज अिस जमीनकी कोओ कीमत नहीं है। जब आश्रमकी स्थापना होगी तब हमारे कारण ही आसपासकी जमीनकी कीमत बढेगी और फिर दसगुना दाम देकर हम वह खरीदनी पडेगी। जमीनकी कीमत बढायगे हम और असका सजा हमाको भुगतनी पडेगी। मेरी बात गाधीजीके सिद्धान्तम नहीं बैठती थी। लेकिन हुआ वसा ही जसा मैंन कहा था।

अिधर आश्रमके लिअ जमीन खरादी गओी और अधर अहमदाबाद म प्लेगकी महामारी शुरू हुआ। और हम लोगोको कोचरब छोडना पडा।

श्री अम्बालाल साराभाओीके वहासे हमने अक बडा तम्बू अक शामियाना और कओी रावटियाँ मगवाओी। अमरनाथका यात्राम छोटी छोटी रावटिया खडा करनेका मुझ अनुभव था अिसलिअ तम्बू आदि खड करनेका काम मैने ही अपने हाथमें ले लिया और अनेक लोगोको अस काममें तयार किया। बादमें हम लोगोने बासकी चटाओीकी झोप डिया तयार की। जितना घनी पारदर्शक कि बारिश तो क्या धूप को भी बाहर नहीं रख सकती थी। श्री किशोरलालभाओी नरहरिभाओी, माणेकलाल शाह छगनभाओी पापटलालभाओी आदि हम कओी लोग



सर्वसाक्षी अिमली

आश्रमकी शाला चलाते थे। साबरमती नदी और सरकारी रास्ता— अिन दोनोंके बीचका भाग आश्रमकी प्रवृत्तिके लिअे था। और सरकारी रास्तेके पश्चिमका भाग राष्ट्रीय शालाके लिअे था।

नदीके किनारे, आश्रमकी भूमि पर, रेतीवाली जगहमें सुबह-शामकी प्रार्थना होती थी। आश्रमका वह हृदय था। अुस स्थान पर गांधीजीने कअी प्रवचन दिये जिसमें आध्यात्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, ब्रह्मचर्य विषयक, बच्चोंकी स्वच्छताके बारेमें वगैरा अनेक प्रवचन होते थे।

प्रवाससे लौटनेपर गांधीजी अपने मुसाफिरीके अनुभव भी कहते थे। कभी-कभी जिन अच्छे लोगोंका परिचय होता था अुनके भी गांधीजी देते थे और अन्तर्मुख होकर अपने और आश्रम

गुणदोष भी बतलाते थे। अुन दिनों प्रवचन करनेवालोंमें श्री विनोबा भावे और मैं गीता पर कुछ-न-कुछ कहते थे। श्री मगनलालभाओ गांधी आश्रम-व्यवस्थासे सम्बन्ध रखनेवाली सूचनायें भी करते थे और रोज किसने कितना सूत काता अुसका हिसाब भी बताया जाता था।

आश्रम तैयार होनेके बाद रंगूनवाले डॉ० प्राणजीवन मेहताने आश्रमके नजदीक थोड़ी जमीन खरीदकर अपने लिअे अेक बंगला बनवाया, जिसे लोग बंगला कहते थे। बादमें वह आश्रमको ही दे दिया गया। अुसीके सामने अपने लिअे थोड़ी जमीन खरीदी थी श्रीमती अवन्तिकाबाओ गोखले और अुनके पति श्री बबन गोखलेने। वह जमीन भी आखिरकार आश्रमको ही मिली।

श्री गिरजाशंकर जोशी अहमदाबादके सुप्रसिद्ध ज्योतिषी थे। मिल-मालिकोंके साथ अुनका अच्छा सम्बन्ध रहता था। अुन्होंने थोड़ी जमीन खरीदकर वहाँ पर छोटासा ज्योतिर्भवन बनवाया, जिसे आगे जाकर आश्रमने खरीद लिया।

अिसके अलावा जेलके नजदीक आश्रमने १२० अेकड़की नयी जमीन खरीद ली थी। अुस जमीन पर अेक पुराना मकान भी था।

आहारके प्रयोग

गांधीजीने जब अहमदाबादके पास दो बंगले किराये पर लेकर वाडजके नजदीक आश्रम शुरू किया तब अुनके मन पर जैन साधनाका काफी असर था। अथवा यह कहना अधिक सही होगा कि अुनकी साधनाका ढंग असा था कि जैनोंका अुनके प्रति अधिक आकर्षण रहता था।

शाकाहारका गांधीजीका आदर्श पश्चिमके शाकाहारियोंसे काफी मिलता-जुलता था। दूध और दूधसे बननेवाले पदार्थोंका सेवन करना अुनके शाकाहारके विरुद्ध था। सूखा कोपरा (नारियल) कूटकर अुसमें पानी मिलाकर जो अेक तरहका दूध बनता था वह अैसे लोगोंको दिया जाता, जिनकी दूधकी आदत छूटी नहीं थी। जो लोग मिर्चके आग्रही थे अुन्हें मूलीकी फली-मोगरी दी जाती थी। मोगरी कुछ तीखी होते हुअे भी लाल या हरी मिर्चके दोष अुसमें नहीं थे।

अुन दिनों मैं खाते समय मौन रखता था। गांधीजी अैसे संयमकी काफी कदर करते थे। गांधीजीने पूछा, "कितने दिनके लिअे यह व्रत लिया है?" मैंने कहा, "अैसा कोअी नियम नहीं है। जब जी चाहे, छोड सकता हूं।" गांधीजीने पूछा, "अेक साल तो कमसे-कम निभाओगे न?" मैंने कहा, "वैसा भी नहीं।"

"तो रोज सुबह २४ घण्टेका व्रत लेते हो?"

"अैसा भी नहीं। जी चाहे तब छोड सकता हूं।" मेरे जवाबमें

गांधीजीको संतोष नहीं हुआ। अुन्होंने पूछा: मौनका नियम और अेक ही दफे परोसे लेनेका नियम कितने दिन चला है?

मैंने कहा: दो-तीन साल तो चला होगा। और वैसा ही कोअी महत्त्वका कारण न दौरा पड़े तो बरसों तक चलानेवाला हूं।

और सचमुच यह नियम बरसों तक चला। और जब छोड़ा तब विचारपूर्वक ही छोड़ा। अुसका कारण भी यहां देना अनुचित नहीं होगा।

आश्रममें मेरा सारा समय आसपासके विद्यार्थियोंको पढ़ानेमें जाता था। बाकीका समय शिक्षकोंसे और बाहरसे आये हुअे लोगोंसे विचार विनिमय और चर्चा करनेमें जाता था। घरकी बात अगर कुछ करनी हो तो नहाते समय ही पत्नीसे कुछ कर सकता था। अन्यथा अुसे भी समय मिलना मुश्किल था। अपने दोनों लड़कोंसे बातचीत हो ही नहीं सकती थी। अेक दिन ख्यालमें आया कि यह अन्याय है। भोजनके समय हम साथ बैठकर खाते हैं। लेकिन अुस वक्त मेरा मौन रहता था। न लड़के मुझसे बातचीत करते थे न मैं अुनसे कुछ पूछ सकता था। भोजनका समय कौटुम्बिक वायुमण्डलका प्रसन्नता का विचार विनिमयका कुछ आमोद प्रमोदका होना चाहिअे। अुसकी जगह वह अेक तरहसे शून्य सा अुदासीन-सा रहता था। स्त्री पुत्र तो अिसके आदी बन गये थे। घरमें कोअी मेहमान आये तो अुन्हें यह अच्छा नहीं लगता था। लेकिन तत्त्वनिष्ठको कौन समझावे? आखिरकार अेक दिन मुझे ही विचार हुआ कि बच्चोंके साथ वार्तालाप करनेका यह समय अुन्हींको देना चाहिये।

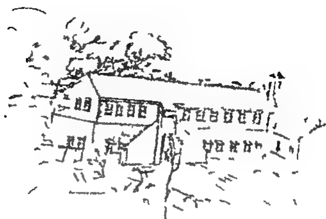
अेक दिन जब भोजनके लिये हम सब अिकट्ठा हुअे और अपने अपने आसन पर बैठ गअे तब मैंने अपना यह विचार सबके सामने प्रगट

किया। सुनते ही मेरा छोटा लडका आनन्दमे आकर कूद पडा। ख्वावमें भी अुसने सोचा नही था कि अैसा कुछ हो सकेगा। मेरे मनमे आया कि कितने सात्विक आनन्दसे मैंने अिन बच्चोको वचित रखा था!

दूध नही लेनेका नियम सिर्फ आश्रमवासियोके लिये ही था। हम शालावालोने असा नियम नही किया था। कुछ सालके वाद गाधीजीने देखा कि आश्रमके व्यवस्थापक श्री मगनलालभाअी दुवले होते जाते हैं। अुनके सिर पर काम तो वहुत था। दिन-पर-दिन बढता भी था। जो कुछ भी प्रयोग गाधीजीको सूझा अुसे आजमानेका काम मगनलालभाअीका ही था। आखिरकार सब दृष्टिसे सोचकर गाधीजीने तय किया कि दूधके विना शाकाहारी लोगोका चलनेवाला नही है। जिस निष्टासे और प्रसन्नता से दूधका त्याग करनेका प्रयोग आश्रमवासियोने चलाया था, अुतनी निष्ठा-से अैसे प्रयोग करनेवाले दूसरे लोग मिलने मुश्किल थे। अिसलिअे अुन्होने आश्रमवासियोको दूध लेनेकी अिजाजत दी। दूध न लेनेवाले वे स्वय अकेले ही रहे। दीर्घकाल तक अुन्होने अपना यह नियम चलाया।

वादमे अुन्होने अपने लिये भी दूध न लेनेका नियम कसे छोडा और फिर वकरीका ही दूध लेना क्यो शुरू किया यह सब गाधी साहित्य पढनेवालोको मालूम ही है।

अेक दिन गाधीजीने कहा कि "मनुष्य और जानवरोके लिअ बचपन मे माँका दूध कुदरतने दिया ही है। दूध वच्चोका आहार है। सारी अुम्र दूध लेते रहना कुदरतके नियमका भग है। लेकिन दूध लेकर ही मनुष्यके लिअे मासाहारका त्याग करना सम्भवित हुआ। अिसलिअे हमारे धर्मकार पूर्वजोने दूधको पवित्र-आहार बताया है और दूध देने वाली गायको पवित्र बनाकर अुसकी रक्षाका भार मनुष्य पर रखा। लेकिन दूधके विना चलाना मनुष्यके लिअे मुमकिन तो होना ही चाहिये। पृथ्वी पर जो कन्द, मूल, फल और पत्ते हे और धान्य हैं अुन पर प्रयोग करके भविष्यके



भाजन शाला

आहसव विनानवत्त कुछ-न-कुछ आहार ढू॰ निकालेंगे हा जा दूधकी जगह पूरा-पूरा काम द सकेगा।

भारतके स्वराज्यका प्रधान संकल्प कर बठा हू अिस वास्त मैं आहारका यह प्रयोग अिस वक्त छोड देता हू लकिन मैंन अपना श्रद्धा खोओी नही है। दूधके स्थान पर वनस्पतिका कोओ आहार मनुष्यको मिलना ही चाहिअ।

जब गाधीजीन सुना कि अशियायी राष्ट्रोंम सोया नामके धा यका प्रचन्न है और अुसके दूधस दही भा बन सकता है तब गाधीजीन मायावास मगनाकर और असकी खेती भी करक काफा प्रयाग करके दख। मूगफलीका दूध भी निकालकर अुसक भा प्रयोग किय। लकिन दूधका स्थान न सक जमा कोआ पदाथ हम अभा तक मिला नहा।

नमक न खानेका प्रयोग गाधीजीने दक्षिण आफ्रिकासे चलाया था। आश्रममे जब रसोअी बनती था, तब अुसमे नमक नही डालते थे। नमकके बिना जिन्हे नही चलता अुन्हे अूपरसे वह दिया जाता था। मैने भी गाधीजीके पास आनेके पहले नमक छोडकर देखा था। आश्रममे दाखिल होनेके बाद भी वह प्रयोग मैने किया था। जिस नतीजे पर मैं पहुँचा था, अुसी पर गाधीजी भी पहुँचे कि—

जब तक मनुष्य फल, सूखा मेवा और पत्ते शाक आदि खाकर रहता है, तब तक नमकके बिना मनुष्यका अच्छी तरहसे चल सकता है। किन्तु अनाजको ही मुख्य आहार बनाने पर मनुष्य नमकके बिना नही चला सकेगा। मैंने आगे जाकर अैसा अनुभव किया कि चावल और गेहूँके साथ नमक न मिलेगा तो चलेगा, लेकिन दाल खानेवालेको तो नमक लेना ही चाहिये। चावल गेहूँके साथ दूध लेनेसे वह पूर्ण आहार बनता है। दाल आदि केवल धान्य पचानेके लिये नमककी आवश्यकता है ही।

मैने यह जो सूक्ष्म भेद निकाला है अुसके वैज्ञानिक प्रयोग करके देखना चाहिये। कुदरतमे अितना तो देखा गया है कि जानवर नमकके पत्थर चाटनेके लिये दूर-दूर तक दौडते जाते है। और दूसरी कोअी नमकीन चीज नही मिली तो अेक-दूसरेका पसीना भी चाटते है। अिस परसे चन्द लोग अनुमान निकालते है कि नमक आदि क्षार मनुष्यके आहारका अेक आवश्यक अग है।

आश्रममे मसालोका त्याग यह भी अेक आग्रहका विषय था। शाक, फल आदि मे जो कुदरती क्षार मिलते है वही काफी है, अूपरसे मसाला लेना केवल स्वादका ही पोषण है, आरोग्यके लिये मसालेकी आवश्यकता नही है। मसाला खानेसे आहारमे सयम नही रहता, यह था आश्रमका मूलभूत सिद्धान्त। शुरू-शुरूमे अुसका पालन हम सब लोग बडी ही कडाअीसे करते थे। बादमे बहुतोके व्यक्तिगत रसोअीघरमे मसालेने

प्रवेश किया। आश्रमकी सामुदायिक रसोआम आखिर तक मसाला वर्ज्य हा रहा।

अिस प्रकरणको पूरा करनेके पहले अेक छोटासा किस्सा देना चाहिये।

जब हम साबरमतीमें थे तब अेक दफे देशमें अकाल पड़ा। आश्रमवासियोंको आवश्यक शाकका मिलना मुश्किल हुआ। शाक-सब्जीके अभावमें स्वास्थ्य सँभालना कुछ मुश्किल हुआ। तब गांधीजीने कहा कि, 'दूर दूरसे और हदसे ज्यादा धन खर्च करके शाक-सब्जी मँगवाना आश्रमके लिये योग्य नहीं है। हम गरीबोंके और फकीरोंके प्रतिनिधि हैं। हमारा आहार सस्ता ही होना चाहिये। अिसलिये हालांकि मैं मसालेके सेवनका विरोधी हूँ आप लोगोंको शाककी जगह अचार खानेकी अिजाजत देता हूँ।

अकालके दिनोंमें सब आश्रमवासियोंने अिस अिजाजतसे लाभ अुठाया। बादमें अकाल दूर होने पर शाक-सब्जी (फल और पत्ते) मिलना आसान हुआ तब भी अचार जो आश्रम आहारमें आया सो आया। अुसका बहिष्कार फिरसे किसीने नहीं किया।

मुझे कहना चाहिये कि गांधीजीके आहारके सब प्रयोग हम आश्रमवासी पूरी निष्ठासे करते थे। महादेवभाओ दिल्लगीमें हम लोगोंको The tribe of vow takers कहते थे।

(मैंने अुनके अिन अंग्रेजी शब्दोंका अनुवाद किया था—व्रत-विलासियोंकी जमात।)

लेकिन आगे जाकर महादेवभाओ स्वयं लोनावाला नामक स्थान पर गये। वहाँ तीन या चार दफे हो आना जैसा कुछ नियम करनेके बाद वे

बीचमें कुछ खाते नहीं थे। अितना ही नहीं किन्तु सौंफ या अिलायची भी मुँहमें नहीं डालते थे। आहारके प्रयोग करनेका स्वतन्त्र अुत्साह गांधीजीका, विनोबाजीका और कुछ हद तक मेरा रहा। बाकीके सब आश्रमवासी हमारे प्रयोगोंमें निष्ठासे शामिल होते थे। किन्तु नअी कोअी चीज शुरू नहीं करते थे। अितना ही नहीं, चन्द आश्रमवासी हम तीनोंके प्रति कुछ डरसा रखते थे कि पता नहीं कि अिन लोगोंकी खोपड़ी पर नअी क्या धुन सवार होगी?

आश्रममें खेती और दुग्धालय

आश्रमकी स्थापनाके साथ खेतीका सवाल अुठा। आश्रमके व्यवस्थापक श्री मगनलालभाओी गांधी खेतीके बड़े पक्षपाती थे। जिसे खेती प्रिय है अुसे पशुपालन भी प्रिय होना ही है। मगनलालभाओीने आश्रममें दुग्धालय खोलनेका भी सोचा।

गांधीजीके मनमें अिस बारेमें अुत्साह नहीं था। वे कहते थे कि, "जब तक स्वराज्य मिला नहीं है, भारतकी सब जमीन और सब मकान अंग्रेजोंके ही हैं। स्वराज्य प्राप्तिके लिये और राष्ट्र निर्माणके लिये वस्त्र विद्याकी जैसी आवश्यकता है वैसी खेतीकी नहीं। अंग्रेजोंने हमारी वस्त्रविद्याका नाश किया। जुलाहे बेकार हुअे। यह सारा अुद्योग वे हिन्दुस्तानसे विलायत ले गये। खेतीके बारेमें असा नहीं है। यहांकी जमीन हमेशा यहीं रहेगी। हमारे किसान अपनी विद्यामें प्रवीण हैं। स्वराज्य पानेकी कोशिशोंमें खेतीको स्थान नहीं है।

अैसा मेरा विचार होते हुअे भी खेतीको और दुग्धालयको आश्रममें मैंने स्थान दिया है; क्योंकि मैं मगनलालके अुत्साहकी कदर करता हूं। अुसका संतोष भी आश्रमके लिये जरूरी तत्त्व है।

अिस तरह आश्रममें खेती शुरू हुआ। दुग्धालय भी शुरू हुआ।

मैंने यहां जानबूझ न कहकर 'दुग्धालय' कहा है। क्योंकि प्रारम्भमें आश्रममें गायें और भैंसें दोनों रखी जाती थीं। और हम लोग अहमदाबादमें भैंसका ही दूध पसन्द करते थे, जिसलिये कि भैंसके दूधमें

मक्खन ज्यादा आता है ।

मेरी पत्नीने यहाँ तक देख लिया कि आश्रमकी भैंसोमे अेक कुछ कम काली थी, अुसके दूधमेसे ज्यादा मक्खन निकलता है । असी भैंस का दूध हमे मिले यह काकीका आग्रह रहता था । श्री मगनलालभाओी भी काकीको अिस बारेमे सतुष्ट करते थे । अिसका अक कारण था ।

आश्रम-शालाके हम शिक्षकगण पूरे आश्रमवासी नही गिने जाते थे । हम लोग अपने खर्चके लिअे थोडीसी तनख्वाह लेते थे । और ब्रह्मचर्य आदि आश्रमके कुछ नियमोमे हम बरी थे । अब शालाके शिक्षक पैसे बचानेके लिअे दोहरी नीति चलाते थे । बाहरका दूध सस्ता मिला तो बाहरसे ले लेते थे । और बाहरका दूध महगा हो गया तो आश्रमके दुग्धालयसे लेते थे ।

फलत आश्रमके दुग्धालयकी ग्राहक-सख्या निश्चित नही थी । कभी-कभी आश्रमका दूध बच जानेमे अुसका खवा या मक्खन बनाना पडता था, जिसमे दुग्धालयको नुकसान होता था ।

मेरा अभिप्राय था कि जब आश्रममे हम लोगोकी सेवाके लिअे दुग्धालय खोला है तब बाहरसे दूध ले ही क्यो ? दुग्धालय घरका है । हमारे आधार पर ही वह खोला गया है । अुसके प्रति अपना जो धर्म है अुसे भूलकर केवल थोडे पैसे बचानेके लिअे हम बाहरसे दूध ले तो स्वदेशी धर्मका अुसमे भग है और सस्थाके प्रति अिसमे आत्मीयता भी कम है । जबसे आश्रममे दुग्धालय शुरू हुआ, मैने बाहरसे दूध कभी भी नही लिया । श्री मगनलालभाओीके मनमे मेरी अिस निष्ठाकी कदर थी । काकीने चुपचाप अिस कदरसे लाभ अुठानेका तय किया और कम काली भैंसका दूध काकीको मिले अैसा मगनलालभाओीसे फतवा ले लिया ।

जब गाधीजीके ध्यानमे आया कि आश्रमके दुग्धालयमे गाय भी

है और भैंस भी है तब अुन्होंने दृढ़तासे कहा कि भैंस तो गायकी शत्रु है। हम गोरक्षा करना चाहते हैं। आश्रममें भैंसका पालन करना आश्रम धर्मके विरुद्ध है। भैंसें गओ और गायोंकी संख्या बढ़ गओ। और हमारे दुग्धालयने शुद्ध गोशालाका रूप ले लिया।

अेक दिन हम सौराष्ट्र राजकीय परिषद्के लिअ गोंडल गये थे। (मुझे स्पष्ट याद नहीं कि वह स्थान गोंडल ही था या मोरवी।) वहाँके राजाने गांधीजीको अपनी गोशाला देखनेकी विनती की। गांधीजी अुत्साहसे गये। मैं भी अुनके साथ था। वहाँ हमने अेक दो अैसे सांड देखे कि अगर हाथीको और अुनको कुश्ती होती तो शायद हाथी ही हार जाता। अितने पुष्ट और सुन्दर सांड मैंने अपनी जिन्दगीमें और कहीं नहीं देखे।

गोशाला देखनेके बाद गांधीजीने राजासाहबसे कहा कि हमारे

आश्रमकी गोशालाके लिअे आप हमे अेक अच्छी-सी गाय दीजिये। मैने मनमे कहा कि अप।नषत्कालमे ऋषि याज्ञवल्क्य भी अिसी तरह राजा जनकसे गाये माँगते होगे। राजासाहवने कहा कि आप हमारी गोशाला आज ही देख आये है। जो गाय आपको पसन्द आवे आप ले लीजिये। मैंने आपको दे दी।

गाधीजीने तनिक भी सकोच किये विना गोशालामे जो सवसे अच्छी गाय थी वही माँग ली। मुझे यह अच्छा नही लगा। कितने प्रेम से राजासाहवने अिस गायको रखा था। रोज जाकर अुसका दर्शन करते थे। स्वय अुसे खिलाते थे। यह गाय तो क्या, राजासाहवके गोशालाकी वह नाक ही थी। मानो अिनका मुकुटमणि ही था। राजासाहवने प्रसन्नतासे गाय दे दी, और वह हमारी गोशालाकी शोभा वन गअी।

मुझे दु खके साथ कहना पडता है कि आश्रममे अुस गायकी अुतनी हिफाजत नही कर सके। राजासाहवकी गोशालामे अुस गाय पर जो कान्ति था और अुसकी जो शान थी वह आश्रममे नही रही। हालाँकि हमारे आश्रमकी गोशाला आदर्श गोशाला मानी जाती थी, और दूर-दूरके लोग अुसे देखने आते थे।

आगे चलकर जव आश्रमका संकोच किया गया तव आश्रमकी गोशाला देहातोमे भेजी गअी। लेकिन मेरा अुद्देश्य आश्रमकी गोशाला का अितिहास लिखनेका नही है। आश्रम-जीवनमे गोशालाका स्थान क्या था यही मुझे वताना है।

* * *

सावरमती आश्रमसे वाजारकी चीजे लानेके लिये हमारे अिमाम-साहवको अहमदावाद जाना पडता था। काफी फासला था। असलिअे अेक घोडा और अेक ताँगा रखनेका तय हुआ। आश्रमके अिमामसाहव

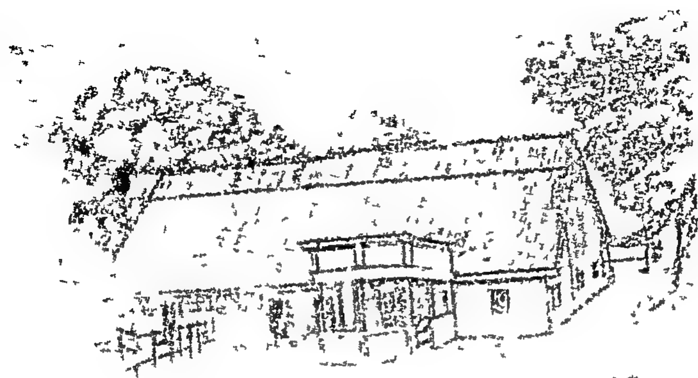
अब्दुल कादर बावजीर जब दक्षिण आफ्रिकामें थे तब अुनका धंधा ही तांगेका था। कभी घोडे, तांगे और नौकर रखकर अच्छी तिजारत करते थे। वहांके सत्याग्रहके दिनोंमें अुनका सारा धंधा बैठ गया। वे अकिंचन हो गये। तब गांधीजीने अुन्हें आश्रममें रहनेके लिये बुलाया। हिन्दुस्तान आने पर वे थोडे ही दिनोंमें अपने परिवारके साथ आश्रममें कायमके लिये आ बसे। यहां पर भी अेक तांगा और घोड़ा रखनेकी अिमामसाहबकी सूझ यह बिल्कुल स्वाभाविक ही था।

दक्षिण आफ्रिकाके फिनिक्स सेटल्मेण्टमें श्री मगनलालभाअी खेती करते ही थे। गोरोंकी खेतीकी अपेक्षा मगनलालभाअीकी खेती कुछ विशेष अच्छी थी। अुसकी अुपज भी ज्यादा रहती था। साबरमतीके आश्रममें जिस तरह हम सब लोग अपने-अपने स्वधर्मके अनुसार ही चले। मैं अध्यापक रहा। मगनलालभाअीने भी आश्रम चलानेके अलावा खादी काम और गोशाला बढाअी और अिमामसाहब घोडा गाडी लेकर शहरमें खरीदी करनेके लिये जाने लगे।

स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः।

श्री मगनलालभाअीने आश्रममें अच्छे-अच्छे वृक्ष बोअे अनाज अुगाया शाक भाजीका प्रबन्ध किया और थोडे ही दिनोंमें अेक सौ बीस अकड नअी जमीन लेकर आश्रमकी खेती बनाअी। चन्द ही आश्रमवासी खेती या गोशालामें दिलचस्पी रखते थे। लेकिन जो लेते थे पूरे अुत्साहके साथ। विद्यार्थियोंको सबोंमें काम करनेका अच्छा मौका मिलता। चन्द विद्यार्थी खेतीमें अधिक ध्यान देकर मगनलाल-भाअीका सन्तोष प्राप्त कर सके थे।

अेक दिन अंग्रेज सरकारके लोग आश्रम देखनेको आये। अुन्हें देखना था कि आश्रममें श्रम कितना लिया जा सकता है। घास



मगन निवास

कार्यालय, वस्त्रालय आदि तो सस्थाके प्रवृत्तिके मकान गिने गये। लेकिन मगनलालभाअीका घर तो अेक खानगी निवास था। अुस पर टॅक्स क्यो न लिया जाय ? मगनलालभाअीने कहा, "मै किसान हूँ। यहाँ खेती करता हूँ और अपनी खेतीकी जमीन पर मकान बनाकर रहा हूँ। अिस पर आप टॅक्स नही ले सकते।" अिस जवाबसे सरकारी कर्मचारी चौक गये। कहने लगे, "किसानका घर अितना बडा और अैसी शानका नही होता।" मगनलालभाअीने जवाब दिया कि "अग्रेजी राज्यमे क्या हरअेक किसानको गरीब भीखमगा ही रहना चाहिअे ? और टूटी-फूटी झोपडी मे ही रहना चाहिये ? आप ही कहिये कि सरकारके हिसाबसे किसान का घर कितना छोटा और खराब होना चाहिये ?" सरकारी कर्मचारी शरमाये और चले गये।

आश्रममें रुग्ण-शुश्रूषा

मुझे याद है कि गांधीजीने अेक दिन स्पष्ट किया था कि बीमारोंको अिकट्ठा करके अुनकी चिकित्सा करनेके लिये आश्रम नहीं है।

जब सन् १९३० में गांधीजी नमक-सत्याग्रहके लिये अस्सी साथियोंको लेकर अहमदाबादसे दांडी चले तब अुन्होंने अपने साथियोंसे भारपूर्वक कहा था कि हम स्वराज्य लेने चले हैं। रास्तेमें गोली चलेगी। न चली तो भी हमें हर तरहके कष्टके लिये तैयार रहना चाहिये। हममें से कोअी बीमार पड़ा तो मैं अुसके लिये अेक क्षणके लिये भी ठहरनेवाला नहीं हूं। अुसे रास्तेकी बाजू पर सुलाकर बाकीके हम सब सीधे आगे जायेंगे। बीमारको भगवानके भरोसे छोड़ देंगे। रास्तेसे आनेजानेवाले लोग अुसकी मदद करेंगे यह विश्वास तो है ही।

अूपरकी दो बातें प्रारम्भमें ही अिसलिये दी हैं कि दोनों गांधीजीके व्यापक सिद्धान्तके नमूने हैं। वरना अुनका स्वभाव अुनमें व्यक्त नहीं होता।

गांधीजीके सहवासमें जो लोग बरसों तक रहे हैं वे सबके सब कहेंगे कि गांधीजीके जीवनमें अुनका सबसे बड़ा आनन्द बीमारोंकी सेवा ही था।

किसीका शारीरिक या मानसिक दर्द देखते ही गांधीजी अेकदम पिघल जाते थे कि स्वयं सेवा करने बैठ जाते थे। बीमारोंके लिये समय देना और खर्च करना अुनके लिये कभी भी भाररूप या अरुचिकर नहीं लगा। कभी-कभी तो अैसा लगता कि बीमारोंकी सेवा करनेका मौका मिलने

पर वे बहुत ही राजी होते थे और क्यो न हों ? वे स्वयं प्रेममूर्ति थे, सेवामूर्ति थे। सहानुभूति तो मानो अुनका प्राण ही था।

मुझे याद है कि किसी अेक आदमीसे गम्भीर नैतिक गुनाह हुआ था और गांधीजी कडे होकर अुसे प्रायश्चित्तका रास्ता बता रहे थे। अितने मे वह व्यक्ति बीमार पडा। बीमारीका समाचार सुनते ही गांधीजीने अुसकी प्रेमसे और कोमलतासे अैसी सेवा की कि सबको और खास तौर पर मरीजको बडा आश्चर्य हुआ। सज्जनोंके प्रति प्रेमभाव और दुर्जनोंके प्रति अुदासीनता या तटस्थभाव अैसा भेद गांधीजीके पास था ही नहीं।

प्रेम और सेवाभावके कारण ही गांधीजीने रुग्ण-शुश्रूषाकी कला और अुसका विज्ञान दोनों हस्तगत किये थे।

दक्षिण आफ्रिकामे झुलु युद्धके दिनोंमें घायलोंकी सेवा करते अुन्होंने रुग्ण-शुश्रूषाका सारा ज्ञान और कौशल्य बाकायदा हासिल किया। प्लेग या अैसे ही कोअी सांसर्गिक रोगके फैल जाने पर सामाजिक स्वच्छता और सामुदायिक सेवाके लिअे आवश्यक संगठन करनेका अुन्हें मौका मिला। अुससे भी अुन्होंने काफी तजरुबा हासिल किया। पू० कस्तूरबा की या मणिलालकी गम्भीर बीमारीके दिनोंमे अुन्होंने क्या-क्या किया अुसका वर्णन गांधीजीकी आत्मकथामे हमें मिलता ही है।

रुग्णोंकी सेवा करते धनी और गरीब, अपना और पराया अैसा भेद अुनको छूता तक नहीं था। अमीर बीमारके लिअे जो अिलाज वे करते थे वही गरीबोंके लिये भी अुन्हें करते हमने देखा है।

गांधीजीकी सारी चिकित्साकी बुनियादमें अुनका जो जीवनसिद्धान्त काम करता था वह था शरीर, मन और आत्माकी अेकताका, तीनोंके अद्वैतका।

आजकलकी पश्चिमकी चिकित्सामें रोगका अिलाज करने मानसिक

और आत्मिक आरोग्यका विचार डाक्टर लोग करते ही नहीं। अुन्हें तो शरीरसे ही मतलब है।

गांधीजी जब जीवनके नियम बूनते थे, राजनीतिक आन्दोलन चलाते थे और बीमारोंकी शुश्रूषा करते थे अुन्हें रोगमुक्त बनानेकी कोशिश करते थे वे अिस शरीर मन और आत्माकी अेकताको कभी नहीं भूलते थे।

जो अिलाज हो वह करोड़ोंके लिये कारगर होना चाहिये यह भी अनका आग्रह था। अिसलिये शरीरको रोगमुक्त करनेके प्रयत्नमें अुन्होंने अुपवास बस्ती आदि शरीरशुद्धिके तत्त्वों पर ज्यादा ध्यान दिया। आहारमें जरूरी परिवर्तन करके हो या रोगको हटानेकी कोशिश करते थे और मिट्टी पानी खुली हवा, धूप सूर्यप्रकाश और ताराप्रकाश आदि नैसर्गिक तत्त्वोंकी मददसे ही वे सारी चिकित्सा करनेके आग्रही थे। चिकित्सामें और आहारमें भी मिर्च मसाला आदि अुत्तेजक पदार्थोंको टालना मांस शराब आदि आत्मशक्तिको क्षीण करनेवाले पदार्थोंका परहेज रखना और संयमका महत्त्व कम करनेवाले पाचक चूर्ण आदि अिलाजोंका त्याग करना—प्रधानतया यह था अुनका आरोग्य विधान। शारीरिक और मानसिक संयम ब्रह्मचर्य अस्वाद या रसनेन्द्रियका संयम अिन बातोंका भी अुनके मन बहुत महत्त्व था। अनिष्ट वाचनका त्याग बेकार वाचनके प्रति अरुचि और आध्यात्मिक ग्रन्थोंका पठन-पाठन और पारायण अिन बातोंका तो अुनकी साधनामें बड़ा महत्त्व था।

और सर्वोपरि था अुनका रामनामका आधार और अुस पर विश्वास।

रामनामके अूपर अुन्होंने बहुत कुछ लिखा है और रामनामका शारीरिक और मानसिक रोग निवारणके लिये अुनका आग्रह था अुन्होंने कअी बार व्यक्त किया है।

बीमारोंकी सेवा और चिकित्साका अुनका अुत्साह अेक आवश्यक तत्त्व मानकर प्रयत्नपूर्वक अुन्होंने साध्य किया हो असा नहीं लगता। अुनके स्वाभाविक विश्वप्रेमका ही वह अेक रूप था। आत्मौपम्य और विश्वात्मैक्य अुनके लिये केवल बुद्धिकी मददसे स्वीकारे हुअे सिद्धान्त नहीं थे। वह तो अुनकी स्वाभाविक सिद्धि थी। गीताके शब्दोंमें अगर हम कहें तो वह अुनकी 'अनेक-जन्म-संसिद्ध' कमाअी थी। गांधीजीकी यह हृदयकी कोमलता देखकर श्री चार्ली अेंड्रयूज कहते थे कि Gandhiji has a feminine soul. 'गांधीजीको भगवानने नारी-हृदय बख्शा है।' अुनकी आत्मशक्तिमें नारी-हृदयके सब लक्षण पाये जाते हैं।

आश्रमका और बाहरका चाहे जितना काम सिर पर हो, गांधीजी रोज सब बीमारोंकी मुलाकात तो लेते ही थे। 'कैसे हो?' करके पूछ-कर भाग जाना अुनका तरीका नहीं था। मरीजकी शारीरिक और मानसिक हालत सहानुभूतिके साथ पूरी-पूरी पूछते-समझते ही रोगियोंकी आधी बीमारी दूर हो जाती थी। और फिर वे गम्भीर होकर अिलाज सुझाते थे और जरूरी साधन जुटाते थे।

समय कम होने पर और बीमारोंकी संख्या अधिक होने पर गांधी-जीको बीमारोंको देखनेके लिअे अेक स्थानसे दूसरे स्थान पर जोरोंसे दौड़ते मैंने देखा है। अिसीलिअे कहता हूँ कि प्रेम, सहानुभूति और सेवा अुनके जीवनका स्वाभाविक और प्रधान अंश था।

बीमारोंके लिअे शौचपेटी (कमोड), बेडपॅन (बिस्तर-शौचपात्र), गरम पानीकी रबड़ थैली, अेनिमा (बस्ती) जैसे-जैसे साधन आश्रममें हमेशा मौजूद रहते थे। नमक, खानेका सोडा (सोडा बायकार्ब), आयोडीन, जख्म बांधनेकी कपड़ेकी पट्टियां आदि चीजें पर्याप्त मात्रामें आश्रममें हमेशा मौजूद रहती थीं। अिसीलिअे गांधीजीके होते हुअे आश्रममें बीमार पड़ना बादशाही आराम लेनेके समान था। प्रारम्भके दिनोंमें अुपवास और

बस्ती पर गांधीजीका भार अधिक रहता था। असलिअे चन्द बीमार गांधीजीको चिकित्सा करते थे। लेकिन जब अुनको फलका रस सन्तरे, नीबू, मोसम्बी अंगूर द्राक्ष दाडिम सेब (सफरजन), टमाटर, गाजर, मूलीका रस सादउजाकी सब्जी, नीमकी पत्तियाँ आदि दिया जाता तब अुनको यह चिकित्सा बडी ही रोचक मालूम होती थी। मामूली आहारमे भी केले मूंगफली, सूखा मेवा, अबले दूध प्याज आदि अच्छी-अच्छी पौष्टिक चीजें मिलनेसे बीमारोंका स्वास्थ्य बहुत ही जल्दी सुधर जाता था। जरूरत पडने पर जैतून (olive oil) मूंगफली तिल या सरसोंका तेल अथवा रड पाम आओील जसे पौष्टिक पदार्थ भी वे देते थे।

क्योंकि दूध दही वनस्पति नहीं हैं प्राणीके शरीरसे निकलनेवाले पदार्थ हैं असलिअे अिनका त्याग करनेका प्रयत्न भी अुन्होंने करके देखा। केवल वनस्पतिसे दूधके जैसा अत्यन्त आवश्यक पदार्थ किसी-न किसी दिन मनुष्य जाति ढूंढ निकालेगी ही असी अनकी अपनी दृढ श्रद्धा थी। लेकिन अनुभवसे अुन्होंने देखा था कि मांसाहारका त्याग मनुष्यको तभी शक्य है जब मनुष्य दूध दही मक्खन घी छाछ, पनीर आदि गोरस पदार्थोंका सेवन करे। अिस क्षेत्रमें गांधीजीने काफी प्रयोग करके देखा। और हर प्रयोगका गहरा निरीक्षण भी किया।

बीमारोंकी शुश्रूषा करते दूसरे-दूसरे आश्रमवासियोंकी मदद लेते लेते कुछ लोगोंको अुन्होंने तैयार किया। निसर्गोपचारके साहित्यका अध्ययन गांधीजीने बहुत बारीकीसे किया था और अुनका निजी तजरबा भी कम नहीं था। जब गांधीजी १९३०में यरवडाके कारावासमें राजबन्दी थे तब गांधीजीने स्वास्थ्यके बारेमें सरकारको रिपोर्ट महीनेमें दो दफे देनेके लिअे स्टील नामके डाक्टर गांधीजीसे मिलने आते थे। वे गांधीजीके पास बैठकर निसर्गोपचारके अेक दो पाठ हर दफा सीखकर ही जाते थे।

बीमारोंको अपनी सहानुभूति देते हुअे वे अपनी साधना भी चलाते

थे और मरीजको अुन्नत जीवनकी दीक्षा भी देते थे।

निसर्गोपचार प्रणालीकी रुग्ण-शुश्रूषा और बीमारोकी गाधीजीकी मुलाकात आश्रम-जीवनका अत्यन्त महत्त्वका अग था, जिसके द्वारा स्वय मरीज और अुनकी सेवा करनेवाले मरीज-सेवक दोनोको सहज ही विश्व-जनीन प्रेममूलक आश्रमधर्मकी दीक्षा मिलती थी।

श्रमधर्म शरीरधर्म

टालस्टायके अेक मित्रने रोटीके लिये यानी आहारके लिये शरीरश्रम करनेकी आवश्यकतापर बहुत भार दिया। मनुष्य विद्वान हो या अविद्वान, राजा हो या रंक, हरअेकको अपने-अपने शरीरमें रहना ही पड़ता है। अिसलिये हरअेक देहधारीको अन्न, पानी, वस्त्र और निवासस्थानकी आवश्यकता होती है। अिसमें भी आहारके बिना किसीका चलता ही नहीं।

असी हालतमें जो लोग खाते तो हैं, लेकिन आहार पैदा करनेमें मदद नहीं करते, शरीरश्रम नहीं करते, वे अपना बोझा दूसरोंपर डालते हैं। यही कारण है कि दुनियाके गरीब लोगोंके सिरपर कामका बोझा बढ़ता है और अुनका अुच्च वर्गके लोगोंकी ओरसे शोषण होता है।

सारे सामाजिक अन्यायोंका मूल अिसी बातमें है कि बहुतसे देहधारी मनुष्य आहारकी अुत्पत्तिमें मदद नहीं करते, अपना अपना बोझा नहीं अुठाते।

रशियन मनीषी टालस्टायने यह बात अुठाई और अुन्होंने स्वयं खेतीका काम करना शुरू किया। हम कविता बनायेंगे और आप हमारे लिअे अनाज और शाक-सब्जी अुगाअिये, असा श्रमविभाग निर्दोष नहीं हो सकता। आहारके लिये श्रम करना अेक असा धर्म है, जिसके लिअे दूसरा कोअी पर्याय है ही नहीं। अगर मेरे लिये कोअी दूसरा खाना लाये और अुससे मैं जी सकूँ तभी रोटीके लिअे शरीरश्रम करनेके धर्मसे मैं बच सकता हूँ।

गाधीजीको बचपनसे शरीरश्रमके प्रति अरुचि थी नही । जब अुन्होने टॉलस्टॉयके सिद्धान्त पढे तो अुनका भी निश्चय हुआ कि आहारके लिअे यानी अन्नोत्पत्तिके लिअे कुछ-न-कुछ श्रम करना ही चाहिअे ।

दक्षिण आफ्रिकामे टॉलस्टॉय फार्म और फिनिक्स सेटलमेटके जीवनमे गाधीजीने शरीरश्रमके अूपर काफी भार दिया । खेती और बगीचेका काम तो वहाँ होता ही था । साथ-साथ घर बनानेका काम, खाना पकानेका काम, टट्टी साफ करनेका काम और विशेष रूपसे छापखानेका काम कुछ-न-कुछ हरअेकको करना ही चाहिअे अैसा वहाँका सार्वत्रिक नियम था ।

जब गाधीजी दक्षिण आफ्रिकासे भारत कायम रहनेके लिये आये, और सत्याग्रहाश्रमकी स्थापना हुअी तब वहाँ भी यही नीति और यही नियम चालू हुअे ।

अिसके पहले शान्तिनिकेतनमे भी गाधीजीके लोग शरीरश्रम करते ही थे ।

कोचरबमे टट्टी साफ करना, जमीनमे खड्ढे खोदकर मलको अुसमे गाडना, अनाज पीसना, रसोअीके बरतन माजना, कुअेसे पानी लाना आदि काम सबको करने पडते थे । गाधीजी स्वय हर काममे मदद करते ही थे । अिसके अलावा कपडे सीनेका भी काम करते थे ।

जब आश्रम साबरमतीके किनारे नये वाडजके पास कायम हुआ तब अूपरके सब कामोके अलावा तम्बू खडे करना, झोपडियाँ बनाना, कुअेके लिये जमीन खोदना वगैरह काम भी बढ गअे, जो काम हम-सब लोग, निरपवाद सब लोग, पूरे अुत्साहके साथ करते थे । और फिर कातने और बुननेका काम भी सीखते थे और बढाते थे । अहमदाबाद जाकर बाजारमे चीजे खरीद लाना यह काम भी कम महत्त्वका नही था ।

बीमारोंकी शुश्रूषा भी कभी-कभी बन जाती थी।

सुबह जल्दी अुठना और रातको जल्दी सोना यह आश्रमका अेक महत्वका नियम था। लेकिन अुसमें अेक बड़ा विघ्न अुपस्थित हुआ।

जब गांधीजी हिन्दुस्तान आये और अपने विचारोंका अमल और प्रचार करने लगे, तब सारे समाजमें अुसकी चर्चा होती ही थी और सरकारी अमलदार भी कभी कभी चिढ़कर लोगोंसे कहते, हमारे पास क्यों आते हो? जाओ गांधीके पास। अुन्होंने सब सवाल हल करनेका ठेका लिया है।

लोग यह नसीहत मानें या न मानें, अुस समयकी सरकारने स्वयं अिसका अजीब पालन शुरू किया। अहमदाबादके आसपास छारा नामकी अेक जरायमपेशा जातिके लोग रहते थे और स्वधर्मका यथाविधि पालन करते हुअे अिधर-अुधर चोरियाँ करते थे। अपनी वंश परम्परागत कलाकी दीक्षा अपने बच्चोंको बाकायदा देते भी थे। सरकारने अिन लोगोंसे मानो अुन्हें कहा, जाओ गांधीजीके पास। और सरकारने आश्रमके पास खुली अुजाड़ जमीनमें अिन लोगोंकी बस्तीकी स्थापना की।

सजा नहीं माननेवाले, कानूनकी मदद नहीं मांगनेवाले हम अहिंसक लोगोंके आश्रममें अपनी कलाको आजमाना अुनके लिये आसान था। अपने बच्चोंको वस्तुपाठ पद्धति (teaching through example) से अपनी कलामें प्रवीण बनाना भी अुनके लिये आसान था। ये छारा लोग आश्रम-दर्शनके लिये चमोके रातको आने लगे और हम लोगोंको अस्तेय व्रतका महत्त्व समझाने लगे। फलतः हम लोग रातको आश्रमके अिर्दगिर्द गश्त लगाने लगे। सारे दिनके परिश्रमके बाद रातकी नींद अिस तरह खोना हमारे लिये आसान नहीं था।

मैंने अपने लिअे रातके अेक बजेसे तीन बजे तकका समय पसंद किया था। जल्दी सोकर अेक नींद पूरी की और रातके बाद फिरसे घण्टा-डेढ घण्टा सो लिया यह कार्यक्रम मेरे लिअे अनुकूल था। अेक हाथमें लालटेन, अेक हाथमें लकडी लेकर आश्रमकी सारी भूमिके अिर्द-गिर्द घूमते रहना और नींदको हटानेके लिअे गीता-अुपनिषद्के मन्त्र बोलना ध्यानके लिअे भी अनुकूल प्रवृत्ति थी।

जब तक परिश्रमका काम अिस तरह चला, तब तक ही आश्रममें मेरे मन सत्ययुग था। बादमें प्रत्यक्ष समाजसेवा शुरू हुअी। लोग जहाँसे बुलावें वहाँ जाना, व्याख्यान देना, रास्ता, हवेली, मन्दिर आदि साफ करना, गांधीजीके सिद्धान्तका परिचय कराना यह अेक प्रवृत्ति बढ गअी। श्रमविभागका तत्त्व और शरीरश्रम कभी-कभी घण्टा, दो घण्टा, सूत कातने तक ही मर्यादित हुआ। चन्द लोग बहुत परिश्रम करते थे और मेरे जैसे शब्दजीवी लोग शरीरश्रम कम करने लगे।

स्त्रियोंको अपने-अपने घरका काम करनेके लिअे भी काफी समय नहीं मिलता था। बच्चोंको सँभालना, सूत कातना आदि काम अुनके पास था ही। अिसके अलावा बापूजीने अुन्हें आश्रमके रसोअीघरका और गोशालाका काम सँभालनेके लिये प्रवृत्त किया।

बच्चोंकी बाकायदा पढाअीमें बुनना, बढअीका काम सीखना आदि शरीरश्रमके तत्त्व थे ही। अितना सब करनेपर भी बच्चे शामको खेलते ही थे और त्योहार-अुत्सवके दिन विशेष कार्यक्रम भी करते थे। और मैंने विद्यार्थियोंको नदीमें तैरनेकी कला सिखानेका खास काम अपने पास लिया था।

अिस तरह आश्रमका सारा जीवन अुद्योग, शरीरश्रम, परिश्रम और तरह-तरहकी प्रवृत्तियोंके कारण छत्तेके जैसा गूँजता रहता था। तो भी



वयन विद्यालय

मैं अपने अनुभवसे कह सकता हूँ कि सब लोग अेकसा परिश्रम नहीं कर सकते थे। कुछ दिनके बाद हम लोगोंको अपने अपने घरमें नौकर भी रखने पड़े। और खेतीके काममें किसानोंकी मदद भी लेनी पड़ी। बुननेवाले जुलाहे भी हम कभी-कभी आश्रममें रखते थे। और जहाँ तक हो सके अुन्हें आश्रमवासी बनानेकी कोशिश करते थे।

जब गांधीजीको आत्मनिरीक्षण करते भान हुआ कि सत्याग्रहाश्रम अितना बड़ा नाम लेनेके लायक नहीं है तब अुन्होंने आश्रमका नाम बदलकर अुसे अुद्योग-मन्दिर कहना पसन्द किया। अिस नाम परिवर्तनमें गांधीजीको आध्यात्मिक सन्तोष-सा मिला। लेकिन नया नाम चला नहीं। आश्रम आखिर तक सत्याग्रहाश्रम ही रहा। लेकिन अुद्योग मन्दिरके नये नामके कारण अितना तो सबके मनपर जम-सा गया कि आश्रम जीवनका प्रधान-तत्त्व है अुद्योग।

खर्चेके बारेमे आश्रमको स्वावलम्बी बनाना आसान नही था। आश्रममे रहनेवाला हरअेक आदमी अपने खर्चेके जितना कमाता तो सही, लेकिन सारे पूरे आश्रमकी सब प्रवृत्तियोका खर्च गाधीजीको मिलनेवाले दानमेसे ही होता था।

भिक्षाश्रम नहीं

मुझे याद नही कि आश्रममे रहने आये हुअे अेक पश्चिमी व्यक्ति रेजिनॉल्ड थे या दूसरे कोअी, अेक दिन आकर गाधीजीसे कहने लगे कि 'मैं सुनता हूँ कि आपका आश्रम दानधर्मके पैसेपर चलनेवाली सस्था है, Charity institute है। यह मुझे शुरूमे मालूम होता तो शायद मैं यहाँ नही रहता। अब अपने खर्चेके पैसे मुझे आपको देने ही चाहिये।'

गाधीजीने कहा कि 'जिस किसीने आपसे कहा असकी दृष्टि अलग थी, गलत थी। आश्रममे रहनेवाला अेक भी व्यक्ति दयाधर्मका अन्न नही खाता। हरअेक आदमी अपने खर्चेके जितना यहाँ आश्रममे कमाता ही है। आश्रमको अनेक प्रवृत्तियाँ चलानी पडती है। अस सार्वजनिक कामके लिअे लोगोसे पैसे मिलते है। यहाँ बहुतसे अैसे लोग है जो केवल आजीविका लेकर सेवा देते है और जो लोग तनख्वाह पाते है वे भी बाहर अनको जितना मिलता असमे कम लेते है और धन-सग्रह नही करते। आपको सत्याग्रहाश्रममे रहते सकोच करनेका कोअी कारण नही है।'

धन और समयका हिसाब

गांधीजीके सत्याग्रह आश्रमके सत्याग्रह-आश्रम और राष्ट्रीय शाला असे दो विभाग थे। राष्ट्रीय शाला आश्रमके अन्तर्गत स्वतंत्र संस्था थी। राष्ट्रीय शालाके अध्यापक आश्रममें ही रहते थे। आश्रमका शासन आश्रमके व्रत और अुसका वायु-मण्डल अध्यापकोंको पसंद था। लेकिन अिन बातोंसे वे बंधे हुअे नहीं थे। हालांकि सबका प्रयत्न आश्रमके व्रतों और नियमोंका पालन करनेका ही था। अध्यापक ज्यादातर शादी-शुदा—परिणीत—थे। और अलग अलग घरोंमें रहते थे। श्री महादेव देसाई हम अध्यापकोंके साथ रहते थे। हमारी तरह वे न तो आश्रमके नियमोंसे बद्ध थे, न राष्ट्रीयशालाके अध्यापक-मण्डलके वे सदस्य थे। अेक पुत्र होनेके बाद अुन्होंने आश्रमके व्रतोंका स्वीकार किया।

चंद आश्रमवासी आश्रमके भी सदस्य थे और राष्ट्रीय शालामें अध्यापनका काम भी करते थे। अिनमें श्री विनोबा भावे, श्री मगनलाल गांधी, श्री छोटेलालजी जैन, श्री लक्ष्मीदास आसर और श्री नारायणदास गांधी अिनके नाम अिस वक्त याद आते हैं। अध्यापकोंमें जो शुरूसे आखिर तक रहे अुनमें मेरे साथ श्री किशोरलाल मशरूवाला, श्री नरहरिभाअी परीख, श्री मगनभाअी देसाअी, श्री हरिहर भट्ट, श्री अप्पासाहब पटवर्धन, श्री जुगतराम दवे, श्री छगनलाल जोशी, श्री भणसालीभाअी अित्यादि भी थे।

आश्रमके सदस्य तनख्वाह नहीं लेते थे। अुनका खर्च आश्रमकी ओरसे किया जाता था। शालाके अध्यापकोंको प्रथम मासिक ६० रुपये

और वादमे शायद ७५ रुपये मिलते थे। सवकी तनख्वाह अेक-सी रहती थी लेकिन चन्द लोग आवश्यकता कम होने से कम लेते थे।

गाधीजीमे तत्व और व्यवहार दोनोका समन्वय करनेकी अजीव शक्ति थी। अुन्होने अेक दिन कहा कि "अध्यापक भी आश्रमके वायु-मण्डलमे रहते है। अुनका आदर्श यह होना चाहिये कि वे अपनेको और अपने परिवारके स्त्री-पुरुषोको और कुमार-कन्याओको अेक तरहसे आश्रमवासी ही मान ले। स्त्री-पुरुष, वच्चे सव अपनी शक्तिके अनुसार सेवा देते जाअे। और सवको अुनकी कमोवेश शक्तिका खयाल किये विना अेक घण्टेके अेक आनेके हिसाबसे पारिश्रमिक या वेतन दिया जाय। यह होगी अुनकी न्यायोचित तनख्वाह।

"लेकिन मैं जानता हूँ कि अितनेमे आप लोगोका चल नही सकता। अिसलिअे आपको मासिक वेतन वाँध दिया है। आप अिसका हिसाव अपने मनमे अैसा रखे कि अेक घण्टेके अेक आनेके हिसाबसे मासिक आपको जितना मिल सके वह आपकी कमाअी है। अिससे अधिक आपको जो दिया जाता है वह राष्ट्रकी ओरसे आप भिक्षा पाते है।

"मैं जानता हूँ कि प्रति घण्टा अेक आनेके हिसावसे मुझे पूरे अध्यापक नही मिलनेवाले। आपसे अच्छे अध्यापक मुझे नही मिल रहे है। अिसलिअे आपको आवश्यक तनख्वाह मैं दे रहा हूँ। मै जितना दे रहा हूँ अिससे जिनकी आवश्यकता ज्यादा हो अुनको मैं नही रख सकता। वे आश्रम छोडकर समाजमे चाहे जो सेवा करे। वह भी देशसेवा ही है। आश्रम अपनी मर्यादाका अुल्लघन नही कर सकता।"

और अेक आदर्श गाधीजीने हमारे सामने रखा था। अुन्होने कहा कि जिस तरह हम आश्रमके पैसोका हिसाव रखते है, पाअी-पाअीका हिसाव पूरी ओमानदारीसे रखते है अुसी तरह हमे अपने समयका भी

हिसाब रखना चाहिये। पैसोंके हिसाबमें हम रोजमेल (cash book) और खातावही (ledger) रखते हैं असी तरह क्षण-क्षणका हिसाब भी रखना चाहिये।

जैसे बाजू रोज हम भगवानकी आरती करके गिनें २४ घण्टे मिलनेमें कितनेमें हमने नींदमें कितने घण्टे बिताये प्रार्थनाके लिअे कितना समय दिया, शौच, दतवन, खाना आदि शरीरकी आवश्यकताओंमें कितना समय दिया, परिश्रम और अुद्योग कितने घण्टे किया, नाश्ता भोजन आदिमें कितना समय गया किताबोंकी पढ़ाओ अखबारोंका वाचन अध्ययन चिंतन आमोद प्रमोद आदि प्रवृत्तियोंमें कितने कितने घण्टे या कितने कितने क्षण दिये गये असका भी हिसाब रखना चाहिये।

महीनेके अन्तमें हिसाब लगाया जाय शरीरकी सेवामें कितना समय दिया अुद्योगमें कितना दिया धर्म-पालनमें कितना दिया अित्यादि सारा हिसाब रखना चाहिये। अिस तरह जहां समयका दुरुपयोग होता हो अथवा समय व्यर्थ जाया होता हो असका हिसाब देखकर जीवनमें नित्य सुधार करनेका सूझेगा।

कल्पना सबको भाओ, कओी लोग अपने दिनके व्यवहार पर अपनी ही मानसिक चौकी रखकर समयका सदुपयोग करने लगे। लेकिन मैं नहीं मानता कि बाकायदा बहीखाता रखकर किसीने हिसाब रखा हो या गांधीजीको दिखाया हो। लेकिन आश्रममें हरअेक व्यक्तिको अपने समयका हिसाब रखना आध्यात्मिक दृष्टिसे या अीमानदारीकी दृष्टिसे बहुत जरूरी था।

कुत्तोंकी समस्या

मराठीमे अेक कहावत है। सेवा करनेवाला कोअी तैयार हो गया तो सेवा करानेवाला, खुशीमे सेवा लेनेवाला कोअी-न-कोअी मिल ही जाता है। देशकी सेवा करनेके लिये गाधीजीने साबरमतीके किनारे दधीचि आश्रमके पास अपना आश्रम खोला। तब अैसे अपरिग्रहका व्रत रखनेवाले आश्रमियोको अुनके छोटे-मोटे परिग्रहसे मुक्त करनेके लिये चोर आने लगे। अुसका जिक्र तो मैंने अिसके पहले किया ही है। शाति, सुव्यवस्था और कानूनकी स्थापना करनेका जिनका कर्तव्य है अैसे लोगोने छारा नामकी अेक जरायमपेशा (गुनहगार) जातिके लोगोको आश्रमके पास ही बसाया। अुनके अुपद्रवसे हम काफी परेशान हुअे। अिन छारा लोगोमेसे अेकने तो अेक दिन श्रीमती प्रेमाबहनके[1] कन्धेपरसे

1. अिसके बारेमें प्रेमाबहन अपने ता० १७-९-५९ के पत्र में लिखती है कि, "छारा लोग शाल ले गये यह बात तो सही है। लेकिन श्री लीलावती बहन आसरके शरीर परसे, न कि मेरे शरीर परसे वे खींच ले गये। हम आश्रमसे अहमदाबादकी ओर बैलगाडीमें बैठकर जा रही थी। लीलावती बहन मेरे पीछे बैठी थीं और वह मेरी ओर देख रही थीं। अितनेमें दो छारा आये। अुन्होंने शरीर पर लपेटी हुअी शाल जोरों से खींच ली। लीलावती बहन गिर गयी और अुन्होंने चिल्लाना शुरू किया। हम पीछे देखने लगे। तो क्या, लीलावती बहनके शरीर परकी शाल खींच करके छारा लोग भाग गये।"

छारा लोगोंको भी मालूम हुआ होगा कि अंग्रेज सरकारने आश्रमवासियों को कानूनका रक्षण देना छोड दिया है। जहा तक मुझे याद है मुझसे कहने वालेने लीलावती बहनका नहीं किन्तु प्रेमा बहनका ही नाम दिया था। लेकिन कहनेवालेकी भूल हो सकती है। अब तो हमें सत्य बात खुद प्रेमा बहनसे ही मिली है।

अुनकी नाल अुठा ली और देखते देखते वह गायब हो गया।

पता नहीं अहमदाबाद म्युनिसिपाल्टीके परोपकारसे, या कुदरती तौर पर, लेकिन आश्रमकी स्थापनाके थोड़े ही दिन बाद अनजानेमें लावारिस कुत्ते आश्रममें आने लगे। जहाँ देखें कुत्ते! छोटे बड़े, तगड़े भूखे बीमार लँगड़े लूले कुत्ते आश्रमवासियोंके दर्शनके लिये आने लगे। अिनमेंसे कभी कुछ हिम्मतके साथ आश्रमवासियोंके रसोअीघरमें भी घुसने लगे। रातको शायद अुनको अपने पूर्वजोंकी याद आती होगी। नौ दस बजेके बाद काफी रो लेते थे। अुस समयके आश्रमके व्यवस्थापक श्री छगनलाल गांधीने हरअेक रसोअीघरके दरवाजेके साथ अेक छोटा आधी अूँचाअीका दरवाजा बना दिया ताकि कुत्ते अन्दर घुस न पायें।

गुजरातमें (और भारतके अन्य हिस्सोंमें भी) लावारिस कुत्तोंको खिलाना बड़ा धर्म माना जाता है। गोरक्षाके पिंजरापोलमें कुत्तोंको रखनेका भी अिन्तजाम किया जाता है। कहीं-कहीं तो गाँवभरके कुत्तोंको खिलानेके लिये फण्ड अिकट्ठा किया जाता है। अुस फण्डकी आमदनीसे रोटियाँ बनाकर जगह-जगह कुत्तोंको दी जाती हैं।

जैसे गायके प्रति मनुष्यकी कृतज्ञताने अपना अेक धर्म वनाया है अुसी तरह मकानो और जानवरोकी रक्षा करनेवाले कुत्तोके लिये दया-भावका रहना जरूरी माना है। धर्मशास्त्रमे कुत्तोको अपवित्र माना है। लेकिन मनुष्यके हृदयमे जो स्वाभाविक धर्म है, सरल दयाधर्म है, अुसने कुत्तोंको खिलानेमे वडा पुण्य वताया है।

आश्रमके काफी परिवार कुत्तोको खिलाने लगे। फिर तो अिन अतिथियोकी सख्या वढ गअी और अुनकी हिम्मत भी।

अेक दिन कुत्तोके सवालका हल निकालनेके लिये आश्रमवासी वुजुर्गोकी अेक सभा वैठी। कुत्ते कितने परेशान करते हैं अिसका वयान कअी लोगोने सुनाया। आखिरकार मैंने सुझाया कि अिन कुत्तोको खिलाना हम वन्द करे। खानेको मिलता है अिसीलिअे वे आते है। हम अुन्हें खिलाना वन्द करे अिसके साथ भोजनके वादका अुच्छिष्ट हम अिधर-अुधर न फेंकते हुअे अुसे जमीनमे गाड दे। अुस जूठनकी अच्छी खाद वन जायगी।

सवको मेरा सुझाव पसन्द आया। लेकिन अुसका अमल हो नहीं सका। दयाधर्मी हिन्दू कुत्तोका न खिलायें यह वने ही कैसे?

फिरसे समिति वैठी। हमारी समितिमे स्त्री और पुरुष दोनो तरहके सदस्य थे। मैंने नया प्रस्ताव रखा कि हम अेक-अेक परिवारके लोग अेक-अेक कुत्तेको अपनाये और अुसीको खिलाये, औरोको नही। अैसा करनेसे अपनाये हुअे कुत्ते आर्य वनेगे और वाकीके अनार्योको स्वय ही भगा देगे। आर्य वने कुत्ते रसोअीघरमे नही आयेगे। खानेकी चीजोको चाटेंगे नही। किसी चीजको मुंह नही लगायेंगे। अिस तरह स्वार्थ और परमार्थ दोनोका लाभ हमे मिलेगा। मेरा यह प्रस्ताव सवको पसन्द आया। लेकिन अुसको कार्यान्वित करनेका किसीको सूझा नही। दया-

धर्मी लोग जो कुत्ता आया अुसे खिलाने लगे। कुत्तोंका आक्रमण ही नहीं मिटा।

तीसरी सभामें मैंने तीसरा प्रस्ताव पेश किया कि हम कुत्तोंके लिये जगहें खरीदकर अुन्हें अेक जगह कतारमें बाँध रखें और सब घरोंसे कुत्तोंके हिस्सेका खाना अिकट्ठा करके अुन्हें खिलावें। अिसमें जमीनके लिये पैसे खर्च करनेकी बात थी। खाना अिकट्ठा करके कुत्तोंको बाकायदा दो दफा खिलानेका प्रबन्ध करनेकी बात थी। वह प्रस्ताव किसीको जँचा नहीं।

अिसके बादकी सभामें मैंने मुश्किल हारकर परेशान होकर कहा कि जब आप मेरा अेक भी प्रस्ताव नहीं मानते तब मैं अिन कुत्तोंको मार डालनेका प्रबन्ध करूँगा। आप सब कोअी कहते हैं कि अिन कुत्तोंने तंग किया है। तब मैं सारा पाप अपने सिरपर लेकर अिन्हें खतम ही कर दूँगा।

कुत्तोकी ओरसे होनेवाली परेशानी असह्य तो है। हम प्रस्ताव करते है
कि आअिन्दा हम कुत्तोकी चर्चा करना ही छोड देंगे। जो परिस्थिति है
अुसे मान्य रखकर हम अुसे सहन करनेका निश्चय करते है। What
cannot be cured must be endured"

यह प्रस्ताव भी किसीको नही भाया। आश्रमका शामका भोजन
काफी जल्दी होता था। और शामकी प्रार्थनाके पहले और भोजनके बाद
अिधर-अुधरकी बाते करनेके लिअे समय मिलता था। अिसलिअे लोग
अिकट्ठा होते थे और चर्चा भी करते थे। और चर्चामे बीच बीचमे कुत्तो
का सवाल भी अुठता था। मैंने आखिरकार सोचा—यद् यत् परवशं
कर्म तत् तत् यत्नेन वर्जयेत्। यद् यद् आत्मवश तु स्यात् तत् तत् सेवेत
यत्नत.॥ मैने स्वय श्वानातक-निवारिणी सभामे जाना छोड दिया। और
कुत्तोका नाम भी छोड दिया। अिस निश्चयमे दो अपवाद करने पडे।
अुनके बारेमे किसी समय सक्षेपमे लिखूंगा।

अहिंसाकी भी मर्यादा

आश्रमजीवनमें जीवनकी सम्पूर्णताकी ओर सतत जागृति रहनी ही चाहिये। शहरवासी अपना कुदरतके साथका सम्बन्ध करीब भूल ही जाते हैं। गाँवके लोग कुदरतसे अलग तो हो नहीं सकते। लेकिन अज्ञान, दारिद्र्य, आलस्य और असुविधाके कारण और जीवन-यात्राकी विषमताके कारण भी अुनका जीवनरस अितना क्षीण होता है कि कुदरतका आनन्द वे ले नहीं सकते और कुदरतमें रही आध्यात्मिकता पहचानना भी अुनके लिअ मुश्किल होता है। फलतः मनुष्यजातिने कुदरतके साथ रहा हुआ अुसका आध्यात्मिक सम्बन्ध खो दिया है। जमीन, पानी, नदी, तालाब, पहाड़, बादल और छह ऋतुओंके रूपमें प्रकृति हमारे जीवनमें प्रवेश करती है और हमारे जीवनका अविभाज्य अंग बनती है। अुसकी ओर फिरसे मनुष्यको जाग्रत करना आश्रमजीवनका अेक महत्त्वका अुद्देश होना चाहिये।

अिसी तरह जंगली और ग्रामीण पशुपक्षी, कृमीकीट, मछलियाँ आदि भूचर, खेचर और जलचर प्राणियोंके साथका हमारा सख्य सम्बन्ध भी हम भूल गये हैं। लोग अक्सर जंगलमें जाते ही नहीं। जंगलकी चीजें शहरमें मंगवाकर संतोष मानते हैं। जंगलमें जाते हैं वनस्पतिके शत्रु और पशुपक्षियोंके शिकारी। अिस महापापका निवारण करनेका कमसे कम अुसकी ओर ध्यान खींचनेका काम भी है आश्रमजीवनका। खेतीके द्वारा हम जीवसृष्टिका संहार भी करते हैं और पोषण भी करते हैं। कहीं तालाब बनाया तो वहाँ पानी पीनेके लिअ कितने ही पशुपक्षी आते हैं और मनुष्यकी हिंसा-वृत्ति नास्तिक शिकार

वनते हैं। अैसे स्थानमें पशुपक्षियोंके लिअे अभयका वायुमण्डल पैदा करना यह भी आश्रम-जीवनका अेक आवश्यक अंग और काम है।

धर्म धर्मके वीच, वंश वंशके वीच जो अनावश्यक, किन्तु भयानक संघर्ष असंस्कारी मानवने तैयार किये है, अुनका निवारण करनेका रचनात्मक तरीका ढूंढनेका काम तो आश्रमका मुख्य काम है।

सम्पूर्ण जीवन—निष्पाप, ज्ञानपूत, सुव्यवस्थित और समृद्ध जीवन स्थापित करनेके लिअे ही आश्रमजीवनके प्रयोग होते है। आश्रमके साथ खेतीका सम्वन्ध केवल स्वावलम्बनके लिअे नही, किन्तु सम्पूर्ण जीवनकी आवश्यकताके स्वरूप रखा गया है।

मानवीय संस्कृतिके प्रस्थानका प्रथम आविष्कार है अग्निका अुपयोग। जिस दिन मनुष्यने अग्निके द्वारा खाना पकानेका, अीटें पकानेका और मिट्टीके वर्तन वनानेका अिलम ढूंढ निकाला अुस दिन मानवी जीवनकी प्रकृतिमें संस्कृतिका प्रवेश हुआ।

ठण्डी, गरमीसे वचनेके लिअे मनुष्यने प्रथम चर्म, वादमें वल्कल और अन्तमें कपडे वनानेकी कलाका आविष्कार किया वह संस्कृतिका दूसरा प्रस्थान था।

हल चलाकर जमीनको जोतना, खाद डालकर अुसे सकस वनाना, और बीज वोकर दसगुना अनाज पाना यह है संस्कृतिका तीसरा प्रस्थान।

मनुष्यने चक्रका आविष्कार करके छ प्रकारसे अुसका प्रयोग किया। चक्कीके द्वारा आटा पीसना, तरह-तरहकी चीजे खरीदना, चरखे पर सूत कातना, पहियेका अिस्तेमाल करके गाडी चलाना, कुअेके अूपर घटमाल चलाकर पातालका पानी अूपर लाना और कोल्हू चलाकर

तिलका या गन्नेका रस निकालना और कुलाल (कुम्हार) चक्रकी मददसे मिट्टीके बरतन आदि बनाना यह सब चक्रगतिका चमत्कार है।

खेती करते जैसे कीटसृष्टिका संहार होता है वैसे ही असंख्य पक्षियोंका पोषण भी होता है। लेकिन खेतीके साथ पशुओंको गुलाम बनाकर अुनसे सेवा लेनेका मनुष्यको सूझा यह भी मानवी संस्कृतिका अेक सबल अंग है। ऋषिपंचमीके दिन असा ही आहार करनेका नियम होता है जिसमें बैल आदि पशुओंकी सेवा लेनेका पाप न हो। सालभर में अेक दिन असा रखकर मनुष्यको बताया गया है कि अुसकी संस्कृति की बुनियादमें अेक प्रकारका अन्याय और अधर्म पाया जाता है।

आश्रमजीवनका अुद्देश्य है निष्पाप सेवामय जीवन चलाकर जीवमात्रके साथ आत्मैक्यका अनुभव करना।

अैसे जीवनमें भी कुछ-न-कुछ हिंसा आ ही जाती है। जो हिंसा आज अपरिहार्य सी मालूम होती है वह कल विज्ञानकी मददसे हम टाल सकते हैं। अिसलिअे आश्रमजीवनका अेक कार्य यह भी है कि विज्ञानकी मददसे हिंसा कम कम की जाती है अिसके प्रयोग करते रहना। हम मानते थे कि शहद जैसी स्वादिष्ट और मुफीद चीज पानेके लिअे शहदकी मक्खियोंकी हिंसा करना अपरिहार्य है। किन्तु आज शहदकी मक्खियोंके जीवनका अध्ययन करके शहद पानेका अहिंसक अुपाय मनुष्यजातिने ढूँढ़ निकाला है। आश्रमजीवनका यह भी अेक कार्य होना चाहिये कि अैसे शास्त्रोंके सारे शोधोंका अभ्यास करके मंजूर रखा है अैसा तरह मधुमक्खी पालनेका धर्म और तरीका भारतके जनताको हम सिखावें।

० ० ०

मनुष्येतर प्राणियोंके साथ मनुष्योंका सम्बन्ध कैसा हो अिसका निर्णय आश्रमजीवनके द्वारा करके दिखाना अिस कल्पनाका स्वाभाविक

करते हुअे महात्माजीने दो-तीन प्रयोग आश्रमके द्वारा किये। हिन्दू
मसारको जिसके कारण वडा आघात पहुँचा वह था गायके वीमार
बछडेकी अन्तिम वेदनासे अुसे मुक्त करनेके लिअे अुसे मरणदान देने
का। असे मरणदानमे हिंसा नही, किन्तु अहिंसा है यह गाधीजीने
समाजको समझाया।

अिसी तरह भावनावश होकर जिस हिंसासे हमारे लोग बचते
आये है अुस हिंसाको टालना हमारा धर्म नही है यह भी गाधीजीने
हिम्मतपूर्वक लोगोको समझाया वन्दरोके वारेमे।

हमारी खेती जैसी चाहिअे वैसी आज नही है। कअी देशोके
मुकाविले हमारी खेतीकी अुपज वहुत ही कम है यह वात आज सब
तरहसे स्पष्ट हो चुकी है। अैसी हालतमे अनाज, फल, फूल और शाक-
पानका नाश करनेवाले वन्दरोका आतक सहन करना भारतीय सस्कृति
के लिअे असह्य होना चाहिअे। लेकिन वन्दरोका आकार और थोडा-
वहुत स्वभाव भी मनुष्योके जैसा है अिसलिअे वन्दरोको नही मारना,
अुनका आतक लाचारीसे सहन करना यह हो गया है हमारे लोगोका
स्वभाव। और रामायणमे जव हमारे लोगोने पढा कि सीतामाताकी
मुक्ति करनेके लिअे हनुमान, अगद, सुग्रीव आदि वन्दरोने मदद की थी,
तव तो हमारे धार्मिक हृदयोने तय किया कि वन्दरोको हम नही
मारेगे। अगर वे नुकसान करते है तो अुनको भगायेगे। वे फिरसे आयेगे
तो अुनसे होनेवाला नुकसान लाचारीसे वरदाश्त करेगे। लेकिन वन्दरो
को मारनेका नही सोचेगे।

जनताका धर्म-जीवनके वारेमे निर्णय देनेका आश्रमका कर्तव्य
समझकर गाधीजीने जाहिर किया कि वन्दरोको मारना हिंसा है जरूर,
लेकिन खेतीका और शाक-फलका ख्याल करते हुअे वन्दरोका आतक
वरदाश्त करना धर्म नही है। थोडे वन्दरोको मार डालनेसे ही वाकीके

बन्दर मरनेके लिअ भाग जायंगे और खेतीको हम बचा सकेंगे। धर्म-कारोंने हिरन खरगोश और सुअरको मारना जैसे मृगयाधर्मी राजाओंका धर्म बताया है असी तरह बन्दरोंको मारकर अपनी खेतीको बचाना का धर्म गांधीजीने किसानोंको बताया।

अहिंसा अुत्तरोत्तर बढ़नी चाहिये असमें कोअी शक नहीं है। लेकिन जो प्राणी हिंसा अपरिहार्य है अुससे बचकर मनुष्य अपने आहार का नाश सहन कर यह कोअी धर्म नहीं है। गांधीजी ही असा अुपदेश भारतके लोगोंको कर सकते थे। और लोग भी गांधीजीके ही मुंहसे असा धर्मनिर्णय सुननेको तैयार हुअे। बेशक मर्यादाधर्म सार्वकालिक नहीं होता। बन्दरोंसे बचनेका अहिंसक मार्ग किसी दिन मिलेगा ही।

प्रान्तोंकी विविधता

हमे भूलना नही चाहिये कि जैसे धर्मोकी विविधता अिस देशमे है वैसे हिन्दू धर्मके अन्दर भी वर्ण और जातिके आदर्श और रस्म-रिवाज की भी विविधता है, जिसे हम धार्मिक विविधताके अन्दर ही शुमार कर सकते है ।

अिसके अलावा प्रान्तीय भेदके कारण भी जीवन-गत बड़ी विविधता भी है । वह धार्मिक विविधता भले न हो, लेकिन समस्त जीवनमे अुतरी हुअी गहरी विविधता तो है ही । अिसमे भाषाभेदकी प्रधानता तो है ही, लेकिन कठिनाअी अुत्पन्न करनेवाली विविधता तो आहारकी है । गाधीजीका आग्रह था कि आश्रममे हरअेकको अुसके अनुकूल आहार मिले । अिस आग्रहके कारण व्यक्तियोको तो समाधान रहता ही था । लेकिन मेरे खयालसे आश्रमके प्रवन्धको पर यह वडा ही वोझा होता था ।

मद्रासकी ओरसे जो लोग आश्रममे रहने आये अुनका लाल (या हरी) मिर्च या अिमलीके विना चलता नही था और गाधीजी तो मिर्चके कट्टर विरोधी । तो भी अुन्होने दक्षिणके लोगोके लिअे अूपरसे मिर्च देनेका प्रवन्ध करवाया ।

आश्रममें वगालकी ओरसे वहुत कम लोग आये । लेकिन आअे अुनके लिअे गाधीजीने मछली खिलानेका प्रवन्ध तो नही किया, लेकिन ज्यादा भात देनेकी ओर गाधीजीका पूरा ध्यान रहता ।

मै जन्मसे महाराष्ट्री सही, लेकिन कर्णाटक, गुजरात, सिंध, गुजरा-

प्रान्त, बंगाल आदि अनेक प्रान्तोंमें रहा हुआ। मेरा किसी भी आहारका आग्रह नहीं था और विरोध भी नहीं था। मैं शाकाहारी था तो समूचा आश्रम भी शाकाहारी था। अिसलिओ मेरे कारण आश्रमको कोओ तकलीफ नहीं अुठानी पड़ी।

लेकिन अेक चीजके कारण मैं भी सबके लिओ तकलीफदेह बनता था। महाराष्ट्रमें कढ़ी वगैरामें गुड़ नहीं डालते। माना जाता है कि कढ़ी वगैरामें गुड़ डालनेसे वह पदार्थ शराबके जैसा अपवित्र बनता है। मैं अिसी कल्पनामें पला हुआ। जब आश्रममें कढ़ी बनाओ जाती तब मेरे लिओ बिना गुड़की कढ़ी बनती थी। मन बहुत कहता कि कढ़ीके बिना मेरा चल सकता है, लेकिन आश्रममें मेरे लिओ अलग कढ़ी बनाते ही थे। आखिरकार प्रबन्धकोंका कष्ट कम करनेके लिओ मैंने गुड़वाली कढ़ी बरदाश्त करनेका तय किया।

अिमाम साहबको मिर्च खानेका विशेष शौक था। और मिर्च तो आश्रमके लिओ ममनूअ (निषिद्ध) चीज था। फलतः अिमाम साहब और अुनके परिवारके लिओ बाजारसे मूली और मूलीकी मोगरी (फली) लाओ जाती थी।

पंजाबियोंको गुजरातकी रोटी पसन्द नहीं था। अुनको लगता ही नहीं था कि गुजराती रोटियाँ खाकर पेट भर सकता है।

हरअेकको अुसके अनुरूप आहार देनेकी नजाकत गांधीजी तक ही सीमित थी।

जब आश्रममें यूरोपियन लोग रहने आते तब गांधीजी अुनकी खातिरदारीकी ओर विशेष ध्यान रखते थे। और कहते थे कि अिन लोगोंको भोजन करनेके बाद और चाय पीनेके बाद मुखवासके लिओ पान-सुपारी या मसाला नहीं देना चाहिये। यूरोपियन लोगोंको बैठनेके

लिअे कुर्सी या स्टूल और मेजकी व्यवस्था रहती ही थी, भोजनशालामे भी और प्रार्थनाके समय पर भी। आश्रमके विद्यार्थियोको आश्रमके अिन नियमोके कारण अच्छी तालीम मिलती थी और वे दिलके अुदार और भिन्नमत-सहिष्णु बन जाते थे।

आश्रममे कही भी जमीन लीपनेके लिअे गायका या अन्य पशुका गोबर अिस्तेमाल नही होता था, क्योकि मुसलमान लोगोकी दृष्टिसे गोबर अपवित्र चीज थी।

जिस तरह हमारे धर्ममे गृहस्थाश्रमी व्यक्तिके लिअे आतिथ्य-धर्म सिखाया है और मेहमानको हर तरहकी सहूलियत देनेकी कोशिश की जाती है वैसे ही अतिथि-मेहमानका मेजबान (यजमान) गृहपतिके प्रति भी धर्म होना चाहिअे। अगर आतिथ्यमे कुछ कमी रही तो गृहपति मानता हे कि अुसने अपना धर्म नही पाला। वैसे ही अगर अतिथिने गृहपतिको परेशान किया तो वह भी पाप है अितनी बात धर्मकारोकी ओरसे अतिथियोको बताना रह गया है। अिसी तरह आश्रमधर्ममे भी भिन्न रिवाजवाले, भिन्न प्रान्तीय व्यक्तियोको समझाना आवश्यक था कि अपने-अपने खास रिवाज और आग्रहका बोझ आश्रम पर जितना कम डाला जाय अुतना अच्छा।

आश्रममे जो चीनी या जापानी युवक आकर रहे, अुन्होने अपने लिअे कभी, कुछ भी सहूलियत नही माँगी। खान-पानमे और रहन-सहन मे जैसा भी आश्रमका प्रबन्ध रहा, अुसमे वे समा जाते थे।

प्रार्थनामे और त्योहार मनानेमे आश्रमकी जो दृष्टि थी अुसके बारेमे तो मैं लिख चुका हूँ। ओीसाअियोका बड़ा दिन और अिस्लामियोका बड़ी वफातका दिन और ओीदका दिन हम अपने ढगसे मनाते थे। त्योहारोके बारेमे आश्रमका जो रुख था वह मेरी किताब 'जीवनका काव्य' मे आ ही गया है।

आश्रम और प्रायश्चित्त

'बहुदोषा हि मानवा

मनुष्यका स्वभाव ही असा है कि क्या अच्छा है यह जानते हुअ भी मनुष्य बुराअीकी ओर आकर्षित हो जाता है और असके हाथों दोष होते हैं, वह गुनाह करता है, पाप करता है।

अुपनिषद्के ॠषि कहते हैं कि—

"किमहं साधु नाकरवम् ।
किमहं पापम् अकरवमिति ॥"

मेरे हाथों साधु कृत्य, शुभ कृत्य क्यों नहीं हुअे ? पाप ही क्यों होते हैं ? असा परिताप मनुष्यको हमेशा करना पड़ता है। ब्रह्मज्ञान होनेपर साक्षात्कारके आनन्दका अनुभव करनेपर ही यह परिताप दूर होता है।

दुर्योधनने तो साफ साफ कहा : धर्म क्या है मैं जानता हूं। लेकिन अुसकी तरफ मेरी प्रवृत्ति ही नहीं होती। अधर्म क्या है सो भी मैं ठीक जानता हूँ। लेकिन अुसे टालनेको जी ही नहीं चाहता। असी कोभी अेक शक्ति मेरे हृदयमें बैठी है। वह मुझे जैसी प्रेरणा करती है वैसा ही मैं करता हूं—

'जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्तिः
जानाम्यधर्मं न च मे निवृत्तिः ।
केनापि देवेन हृदि स्थितेन
यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि ॥

दुर्योधन रजोगुण और तमोगुणकी मूर्ति था। सत्त्वगुणी अर्जुन भी

गीतामे भगवानसे पूछता है, "हे भगवान, अिच्छा न होते हुअे भी मानो कोओी अुसे जबरदस्ती जोड देता हो, अिस तरह किसकी प्रेरणासे मनुष्य पापका आचरण करता है ?" —

"अथ केन प्रयुक्तोऽयम् पापं चरति पुरुष ।
अनिच्छन् अपि वार्ष्णेय ! बलात् अिव नियोजितः ॥"

यह सब बताता है कि मनुष्यमे अनेकानेक दोष भरे हुअे है । जिसने-जिसने दोष किया अुसे कतल करनेका अगर निश्चय किया जाय तो शायद ही दो-तीन व्यक्ति बच पायेंगे । (भार शायद ही पर है ।) मानव है ही दोषोसे भरा हुआ—

"'स्खलितः स्खलितो वध्य' अिति चेत् निश्चितम् भवेत् ।
द्वित्राः यद्वयेव शिष्येरन्; बहुदोषा हि मानवाः ॥"

अैसी हालतमे मनुष्य क्या करे ? धर्मशास्त्र कहता है कि अपराधी पश्चात्ताप करे और प्रायश्चित्त करे । जो भूल अपने हाथो हो गओी, अुसके लिअे जब तक मोह है, मनुष्यको प्रसन्नता होती है । लेकिन मोह दूर होने पर गुनाह होनेके 'पश्चात्' मनुष्य 'ताप' करने लगता है, दुखी होता है, अुसे रंज होता है । अिस पश्चात्ताप यानी मायूसीके द्वारा अुसका पाप कमोवेश धुल जाता है । अगर गुनाह बडा है और मोह जबरदस्त है, तो पश्चात्ताप पूरा नही होता, जोरोसे नही होता । अैसी हालतमे पश्चात्तापकी मददमे प्रायश्चित्त करना पडता है ।

प्रायश्चित्त वह तप है, जिसके द्वारा मनकी शुद्धि होती है ।

'प्रायो' नाम तपः प्रोक्तं 'चित्तं' मानस(निश्चय)मुच्यते ।
तपो-निश्चय-संयोगात् प्रायश्चित्तम् अिति अिर्यते ॥

किया सो किया अब आयन्दा अैसा काम फिरसे नही करूँगा अैसा निश्चय करना और ""निश्चयको दृढ करनेके लिये अुपवास आदि

तप करना असे द्विविध कायका प्रायश्चित्त कहते हैं।

जब मनुष्य समाजके खिलाफ कुछ गुनाह करता है तब समाज देखनेको नहीं बैठता कि गुनहगारको किये हुअे कामके लिअे पश्चात्ताप हुआ है या नहीं। और पश्चात्ताप हुआ भी हो तो भी जिसका अुसने नुकसान किया हो अुसका तो भुगतान करना ही चाहिअे। अिसलिअे समाज दोषी आदमीको सजा करता है। अिस तरह प्रमाद, दोष, गुनाह, पापके लिअे हमारे पास दो अिलाज हैं। (१) पापी स्वयं पश्चात्ताप और प्रायश्चित्त करे। (प्रायश्चित्त किस रूपमें करना, कितनी मात्रामें करना अिसका निर्णय करनेके लिअे दोष करनेवाले व्यक्तिको असमें गुरुजन मदद अवश्य कर सकते हैं। लेकिन प्रायश्चित्त तो स्वेच्छासे ही करनेकी चीज होती है।) (२) अथवा समाज अस आदमीके दोषकी जांच करके दोषकी मात्राके अनुसार अुसे सजा करे या दण्ड करे।

प्रायश्चित्त व्यक्ति स्वेच्छासे कर लेता है। अुसमें गुरुजन और धर्मशास्त्र मदद करते हैं। सजा समाजकी ओरसे सरकार करती है और सरकारको दण्डके कानून मदद करते हैं।

हमारे देशमें सजा करनेका काम जाति संस्था ही अक्सर कर लेती थी। अिसमें भी जब राजसत्ताकी बात हो, जातिसत्ताको मदद धर्मशास्त्र करता था।

कभी कभी गुनहगार स्वयं राजाके पास जाकर अपने गुनाहको स्वीकार करता था और राजासे सजा मांग लेता था।

गांधीजीके आश्रममें रहनेवाले सब मामूली आदमी ही थे। अुनके हाथों कभी दोष हो जाते थे। आश्रमकी स्थापना सत्य और अहिंसाकी बुनियादपर होनेके कारण आश्रममें सजाके लिये बिलकुल स्थान न था।

(अगर किसी लडकेने पढाओके वर्गमे शरारत की तो अुसे वर्गके बाहर निकाल दिया जाता था। लेकिन अिसका अुद्देश्य शरारती लडकेको सजा करनेका नही था। वर्गके बाकीके लडकोको शरारतसे बचानेका था। किसी बीमारको शहरकी बस्तीसे दूर करते है या अस्पतालमे पहुँचा देते है अुसी तरह आत्मरक्षाका वह प्रकार था।)

मैंने अूपर कहा कि गाधीजीके आश्रममे सजाके लिअे अवकाश नही था। किन्तु दोपका प्रायश्चित्त करनेके लिअे गुनहगार व्यक्ति स्वय अुपवास आदि कुछ-न-कुछ तप कर लेता था। अक्सर गाधीजीके पास जाकर अपनी भूल प्रकट कर गाधीजीसे प्रायश्चित्तके बारेमे सलाह ली जाती थी।

गाधीजीका प्रधान नियम यह था कि जिसने दोप किया, नियम-भग किया वह सुबहकी या शामकी प्रार्थनाके समय सब आश्रमवासियोके सामने और मेहमानोके सामने भी अपने दोपका अिकरार करे। गाधीजीका कहना था कि पाप अधेरेमे, अेकान्तमे, गुप्ततामे ही बढता है। पापको खुल्ला कर देनेपर पापकी मात्रा अेकदम घट जाती है और तपमे पुण्यका अुदय होने लगता है।

प्रार्थनाके समय, सबके सामने अपना पाप प्रकट करनेकी जबरदस्ती किसीपर की नही जाती थी। लेकिन गाधीजी अपनी पूरी शक्ति लगाकर अैसे प्रायश्चित्तीको अपना पाप प्रकट करनेके लिअे प्रोत्साहन देते थे।

कभी-कभी दोपी और प्रायश्चित्ती व्यक्तिकी अिजाजत लेकर वे स्वय अुसके दोपोको, पाप या गुनाहको प्रकट कर देते थे। अिसमे भी गाधीजीकी अहिंसा ही काम करती थी। आदमीको कभी-कभी शरमके मारे बोलना भी मुश्किल हो जाता है। कभी-कभी पश्चात्ताप करनेपर भी अपने पापका वर्णन सौम्य करनेका लालच होना है। और

लालच तो बहुत बुरा है। जब पापको खुला कर देना है प्रगट करना है तब असमे सकोच क्यो किया जाय ? लेकिन मनुष्यकी हिम्मत नही होती। प्रायश्चित्त करते समय भी मनुष्य कुछ-न-कुछ ढकना चाहता ही है। असी हालतमे व्यक्तिकी कमजोरी ध्यानमे रखकर ही गाधीजो स्वय असकी ओरसे दोषका विस्तारसे वर्णन कर देते थे। और दोषीको प्रार्थनामे अपस्थित रहकर वह सारा सुनना पडता था।

दोषीकी ओरसे पूरा अिकरार करनेके बाद गाधीजी आश्रमवासियो से कहते थे कि जितना कहना जरूरी था सब मैंने कह दिया है। अब ज्यादा समझनेकी या ढूढ निकालनेकी कोशिश कोओी न करे। और वे यह भी कहते थे कि प्रायश्चित्तीने प्रायश्चित्त किया है। अब असके प्रति कठोरता, तुच्छता या अपहास नही बताना चाहिये। मनुस्मृतिमे भी लिखा है—

'कृत निर्णेजनाश्चैव न जुगुप्सेत कर्हिचित् ।"

—जिन्होने प्रायश्चित्त करके अपना पाप धो डाला है असकी ओर जुगुप्सा तिरस्कार तुच्छता या अपहास बरतना नही चाहिये।

गाधीजी सबको यह भी समझाते थे कि किसीके हाथो दोष हुआ तो दूसरे यह न मान कि हम पुण्यात्मा है हम तो श्रेष्ठ है। पाप तो हर आदमी से हो सकता है। अगर नही हुआ है, तो वह अीश्वरकी ही कृपा है।

और भी अक बात है। सत्यके पालनका यह भी अेक अग है कि हम सचमुच जसे है वसे ही दुनियाके सामने पेश हो जाअें। दुनिया हम वसे ही पहचाने। अिस तरहसे चलना आसान नहीं है लेकिन पश्चात्ताप और जाहिरा प्रायश्चित्त करनेसे हम दुनियाके सामने खुले हो जाते है।

अिसका दर्द चाहे जितना हो लेकिन असमे अेक आराम तो रहता ही है कि दुनियाके सामने दम्भ करनेकी आवश्यकता नही रहती।

जिससे अेक तरहका आराम मिलता है और आगे बढनेका रास्ता साफ हो जाता है।

गाधीजीने अपने लिये हमेशा ही यह कठोर मार्ग चलाया। और अुसका लाभ पहचाननेसे ही वे दूसरोको अिसी मार्ग पर ले जानेको अुत्सुक रहते थे। दण्ड या सजाके मार्गके ही जो आदी होते थे अुनको यह प्रायश्चित्तका मार्ग अजीब-सा लगता था। वे अन्दर-अन्दर कहते थे— "बडा विचित्र है आश्रमका यह तरीका। चाहे सो पाप करो और अेक दफा सबके सामने आकर कह दो कि हमसे अैसा हुआ। थोडा-सा रो लो। और छुट्टी पाओ। कितना आसान कर दिया है महात्माजीने।" लेकिन अैसे लोग भी धीरे-धीरे समझ गये कि सबसे बडा पाप है असत्य और अपने दोषको छिपाना। दोष और पापका सबके सामने स्वीकार करने पर आदमी नया ही मनुष्य बन जाता है। गाधीजीकी प्रेरणासे जिन लोगोने यह तरीका आजमाया अुनका तनिक भी नुकसान नहीं हुआ। वे शुद्ध और निर्भय हुअे और नम्रताके साथ वे जोरोंसे आगे बढ़ भी सके।

पापका प्रायश्चित्त और गुनाहके लिये समाज या सरकारकी ओरसे होनेवाली सजा दोनोंके बीचका फर्क अूपर स्पष्ट किया ही है। कभी-कभी यह फर्क साफ नही हो सकता था।

गाधीजी आश्रमके संस्थापक, आश्रम-व्यवस्थाके सर्वेसर्वा थे। अिस-लिअे आश्रमके बारेमें सब 'अधिकार' अुन्हींके थे। आश्रममें किसे रखना किसे नहीं रखना, नियम बनाना, अुनमें तबदीली करना या अुन्हें रद करना, सब-कुछ गाधीजीके अधिकारके अन्तर्गत था। साथ-साथ गाधीजी आश्रमवासियोंके नेता और गुरुजन भी थे। सब आश्रमवासियोंकी धर्म-बुद्धि (Conscience) गाधीजी ही थे। अिसलिअे गाधीजीकी सलाह या नसीहत कभी-कभी हुक्म या सजाके रूपमें लिये जाते थे।

अेक दिन किसीसे आर्थिक व्यवहारमें अपराध हुआ। गांधीजीने जाहिरा तौरपर पश्चात्ताप करनेकी सूचना तो दी ही लेकिन साथ साथ यह भी कहा कि क्योंकि आर्थिक अपराध हुआ है तुम्हारे पास जो-कुछ भी द्रव्य संग्रह हो अुसमें मुक्त हो जाओ। सारी रकम या पूंजी आश्रम को दे दो।

अब अिसे हम सजा कहें या प्रायश्चित्त? गांधीजी अुसे प्रायश्चित्त ही कहते है। मैंने भी अुसे प्रायश्चित्त ही माना। लेकिन गांधीजीकी नसीहत नहीं मानी जाती तो गांधीजी कह सकते थे कि प्रायश्चित्त स्वेच्छा का सवाल है। लेकिन जो भी व्यक्ति प्रायश्चित्त करनेके लिये तैयार नहीं है अुसे मैं आश्रममें कैसे रख सकता हूं? यह होता था गांधीजीका धर्मसंकट। अिसलिअे प्रायश्चित्त गांधीजीकी अिच्छा हो या न हो परिणाममें सजाका ही रूप हो जाता था। सिवाय कि आदमी स्वेच्छासे आश्रम छोडना पसंद करे।

गांधीजीकी नसीहतमें दूसरा भी अेक जबरदस्त हिस्सा रहता था जो सजासे भी भयानक साबित होता था।

जिस किसीके भी हाथसे थोडा भी अपराध हो जाय और गांधीजी अुसे प्रायश्चित्तका रास्ता बतावें और असा प्रायश्चित्त करनेकी अुस व्यक्तिकी तैयारी न हो तो गांधीजी सोचने लगते थे कि प्रायश्चित्तरूपी धर्मकी बात अितनी स्पष्ट होते हुअे भी दोषी व्यक्ति नहीं समझ पा रहा है, तो अुस व्यक्तिमें नैतिक जागृतिकी जगह नैतिक जडता आ गअी है। अुसे दोषका अिलाज करना जरूरी है।

असे समयपर गांधीजी स्वयं अुपवास यानि फाका करनेपर अुतारू हो जाते थे। या अपने ही गाल पर तमाचा मार देते थे या सिर कूटने थे। यह तो भावनाप्रधान या भावुक आश्रमवासियोंके लिये सजासे भी

भयानक, कठोर और हिंसक साबित होता था। और घबडाकर आदमी गांधीजीकी बात मान भी जाता था।

आश्रममे आनेवाले चर्चाप्रिय कअी लोग पूछते थे कि यह नैतिक जबरदस्ती — moral coercion — हिंसक है या नही ? दूसरे जवाब देते कि आजका समाज गुनहगारोको फाँसी तककी अनेक कडी सजाअे देता है। और अुसमे सजा पानेवालेकी शुद्धि या अुन्नति होती है अैसा अनुभव नही है। केवल अपने सन्तोषके लिये, केवल बदला लेनेके सन्तोषके लिअे सजा कर लेते है। अैसे समाजको क्या अधिकार है कि किसीकी अुन्नति के लिये और नैतिक जागृतिके लिये अुस पर कुछ प्रभाव डाला तो अुसमे भी हिंसा देखे ? सीधी सजा तो प्रभाव डालनेवालोको भुगतनी पडती है। गुनहगारको बुरा तो लगता है, लेकिन अुसकी नैतिक भावना जाग्रत होती है।

अिस विषयके अनेक पहलू है। मानवजातिने कानूनके द्वारा गुनाह और अुसकी सजाका अेक बहुत बडा विज्ञान या शास्त्र बनाया है। पश्चात्ताप या प्रायश्चित्त और तपके बारेमे दुनियाके सब धर्मोने किसी समय बहुत-कुछ सोचा था। वे सब बाते आज कुछ पुरानी-सी हुअी है। जब मानसशास्त्र या चित्तविज्ञान स्थूलसे सूक्ष्म हो रहा है, प्रायश्चित्तकी बाते नये सिरेसे सोचनी चाहिये। अिस विषयके पुराने विस्तारमेसे रखने लायक क्या है सो भी देखना चाहिये। आश्रमने अिस बारेमे काफी अनुभव लिया था। अुसका भी बयान अनेक लोगोके द्वारा अिकट्ठा हो जाय यह जरूरी है।

अक दिन किसीसे आर्थिक व्यवहारमें अपराध हुआ। गांधीजीने जाहिरा तौरपर पश्चात्ताप करनेकी सूचना तो दी ही लेकिन साथ-साथ यह भी कहा कि क्योंकि आर्थिक अपराध हुआ है तुम्हारे पास जो-कुछ भी द्रव्य संग्रह हो अुससे मुक्त हो जाओ। सारी रकम या पूंजी आश्रम को दे दो।

अब अिसे हम सजा कहें या प्रायश्चित्त? गांधीजी अुसे प्रायश्चित्त ही कहते हैं। मैंने भी असे प्रायश्चित्त ही माना। लेकिन गांधीजीकी नसीहत नहीं मानी जाती तो गांधीजी कह सकते थे कि प्रायश्चित्त स्वेच्छा का सवाल है। लेकिन जो आदमी प्रायश्चित्त करनेके लिये तैयार नहीं है अुसे मैं आश्रममें कैसे रख सकता हूं? यह होता था गांधीजीका धमसंकट। अिसलिअे प्रायश्चित्त गांधीजीकी अिच्छा हो या न हो परिणाममें सजाका ही रूप ले लेता था। सिवाय कि आदमी स्वयं खुद आश्रम छोड़ना पसंद करे।

गांधीजीकी नसीहतमें दूसरा भी अक जबरदस्त हिस्सा रहता था जो सजासे भी भयानक साबित होता था।

जिस किसीके भी हाथमें थोड़ा भी अपराध हो जाय और गांधीजी अुसे प्रायश्चित्तका रास्ता बतायें और असा प्रायश्चित्त करनेकी अुस व्यक्तिकी तैयारी न हो तो गांधीजी सोचने लगते थे कि प्रायश्चित्तरूपी धर्मकी बात अितनी स्पष्ट होते हुअे भी यदि व्यक्ति नहीं समझ पा रहा है, तो अुसमें व्यक्तिमें नैतिक जागृतिकी जगह नैतिक जड़ता आ गयी है। असे दोषका अिलाज करना जरूरी है।

असे समयपर गांधीजी स्वयं अुपवास यानि फाका करनेपर अुतारू हो जाते थे। या अपने ही गाल पर तमाचा मार देते थे या सिर कूटते थे। यह तो भावनाप्रधान या भावुक आश्रमवासियोंके लिये सजासे भी

भयानक, कठोर और हिंसक सावित होता था। और घवडाकर आदमी गांधीजीकी बात मान भी जाता था।

आश्रममे आनेवाले चर्चाप्रिय कअी लोग पूछने थे कि यह नैतिक जवरदस्ती—moral coercion—हिंसक है या नही ? दूसरे जवाब देते कि आजका समाज गुनहगारोको फाँसी तककी अनेक कडी सजाअे देता है। और अुससे सजा पानेवालेकी शुद्धि या अुन्नति होती है अैसा अनुभव नही है। केवल अपने सन्तोषके लिये, केवल वदला लेनेके सन्तोषके लिअे सजा कर लेते हैं। अैसे समाजको क्या अधिकार है कि किसीकी अुन्नति के लिये और नैतिक जागृतिके लिये अुस पर कुछ प्रभाव डाला तो अुसमे भी हिंसा देखे ? सीधी सजा ता प्रभाव डालनेवालोको भुगतनी पडती है। गुनहगारको वुरा तो लगता है, लेकिन अुसकी नैतिक भावना जाग्रत होती है।

अिस विपयके अनेक पहलू है। मानवजातिने कानूनके द्वारा गुनाह और अुसकी सजाका अेक वहुत वडा विज्ञान या शास्त्र वनाया है। पश्चात्ताप या प्रायश्चित्त और तपके वारेमे दुनियाके सव धर्मोने किसी समय वहुत-कुछ सोचा था। वे सव वाते आज कुछ पुरानी-सी हुअी है। जव मानसशास्त्र या चित्तविज्ञान स्थूलसे सूक्ष्म हो रहा है, प्रायश्चित्तकी वाते नये सिरेसे सोचनी चाहिये। अिस विषयके पुराने विस्तारमेसे रखने लायक क्या है सो भी देखना चाहिये। आश्रमने [illegible]स वारेमे काफी अनुभव लिया था। अुसका भी वयान अनेक लोगोके द्वारा अिकट्ठा हो जाय यह जरूरी है।

आश्रम कलके और भविष्यके

गांधीजीने स्थायी रूपसे भारत लौटते ही अपने आश्रमकी स्थापना की । अुसे अुन्होंने अपनी अच्छीसे अच्छी कृति मानी । आश्रमकी सफलता निष्फलता मेरी ही सफलता निष्फलता है अैसा वे मानते थे कहते थे ।

आश्रमका प्रभाव लोगोंके जीवन पर अच्छा पड़ा । गांधीजीके अिस आश्रमके नमूने पर देशमें अनेक आश्रम स्थापित हुअे । श्री जमनालालजीने विनोबाको लेकर वर्धामें नालवाडीमें और पौनारमें आश्रम चलाया । गांधीजी स्वयं सेवाग्राम जाकर रहे । श्री शंकरलाल बैंकरने बम्बअीके पास साधनाश्रम कुछ दिन चलाया । अुसमें श्री केशवराव देशपांडेकी सहायता थी । बंगालमें प्रफुल्लचन्द्र घोष जैसे अनेक साथियोंने अभयाश्रम चलाया । बिहारमें सदाकत आश्रमकी स्थापना श्री मजहरुल हकने की । और अब राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रबाबूका वह स्थान हो गया है । अैसे अैसे अनेक आश्रम देशमें स्थापित हुअे । चन्द आश्रम केवल खादीका काम ले बैठे । दूसरोंने हरिजन कार्यमें अपनी सारी शक्ति केन्द्रित की जिसमें श्री मामा फड़केका आश्रम शायद सर्वप्रथम था । बरहज दोहरीघाट आदि अनेक स्थानोंके आश्रम भी याद आते हैं । राजाजीके आश्रमको तो हम कैसे भूल सकते हैं ?

आज अिन सब आश्रमोंकी स्थिति क्या है ? अुनसे लोगोंको कौन सी प्रेरणा मिलती है ? गांधीजीके अिन आश्रमोंसे रचनात्मक कार्य करनेवाली अखिल भारतीय संस्थाओं अनेक निकलीं । अिन सबकी हालत आज कैसी है ?

सस्थाअे सब चलती है। समाजको अुनमे कुछ सेवा भी मिलती है। स्वराज्य सरकारकी ओरसे, गाधी स्मारक निधिकी ओरसे और स्थानिक जनतासे अैसी सस्थाको मदद भी मिलती है। यह सब ठीक ही है। लेकिन क्या आजके भारतको, आजकी दुनियाको अुनसे कुछ सविशेष प्रेरणा मिलती है? अनसे प्रेरणा लेकर क्या सामाजिक जीवनमे क्रान्ति हो रही है? जो प्रेरणा शिक्षा-सस्थाओमे समाजको नही मिलती, वह अगर अिन आश्रमोसे मिले तो अिनका होना कृतार्थ है। अिन सब सस्थाओके सचालक सुयोग्य है, निष्ठावान हैं, कर्मठ है। अिन सस्थाओ-की टीका-टिप्पणी करनेका तनिक भी अुद्देश्य नही है।

लेकिन थोडा चिन्तन अवश्य करना है। गाधीजीके जीतेजी अिन सस्थाओकी टीका-टिप्पणी नही होती थी सो नही।

गोखलेजीके Servants of India Society (भारत सेवक समाज) के अध्यक्ष श्रीनिवासशास्त्रीको सत्याग्रहाश्रमके प्रति तनिक भी आकर्षण नही था। अुसकी बात हम न करे। वे moderate और आधुनिक जो ठहरे! लेकिन श्री जवाहरलालजी, सरदार वल्लभभाअी और आचार्य कृपलानी जैसे गाधीजीके राजनैतिक साथी भी आश्रम-जीवनकी आलोचना करते थे।

अिस बातको हम भूल जाये। स्वय गाधीजीने सत्याग्रहाश्रमके प्रत्यक्ष जीवनको सोचकर तय किया कि आश्रम अपने आदर्श तक नही पहुँच रहा है, अिसलिअे अुन्होने आश्रमका नाम बदलकर अुसे अुद्योग-मन्दिरका नाम दिया। यह नाम चला नही। सत्याग्रहाश्रमका नाम ही कायम रहा। आगे जाकर गाधीजीने सरकारकी दमन-नीतिके निषेधमे अपने आश्रमका विसर्जन किया और वे वर्धा चले गये। जो सत्याग्रहाश्रम था अुसकी जायदाद हरिजन आश्रमको दे दी। अब वह श्री परीक्षितलाल मजुमदारकी निगरानीमे अच्छी तरहसे चल रहा है।

गांधीमतके कार्यकर्ताओंकी सहायताके लिअ और अनके संगठनके लिअे श्री जमनालालजीने गांधी-सेवा संघकी स्थापना की। श्री किशोरलाल मशरूवालाने बडी निष्ठाके साथ अुसे चलाया। गांधीजीने अुस सेवा-संघको भी बगालमें पद्मा नदीके किनारे विसर्जन किया।

यह सब असा क्यों हुआ?

अेक बात स्पष्ट है कि गांधीजीने मनुष्यजातिकी शक्ति-अशक्तिको पहचानकर शक्ति बढानेके लिअ भरसक कोशिश की। अुन्होंने देखा कि आजका मनुष्य अितना अूंचा नहीं चढ सकता। प्रधान धर्मको गौण कर पर्याय धर्म चलानेका अिलाज सबके सब धर्मसंस्थापक आजमाते आये हैं। गांधीजीने भी थोडी कुछ सौम्यता धारण की। लेकिन असमें वे प्रगति नहीं देख सके।

दूसरी अेक बात ध्यानमें आती है। ये सारे आश्रम सर्वधर्मी होते हुअे भी हिन्दुओंने ही चलाये हुअे थे। अिनमें मुसल्मान, पारसी, अीसाअी, यहूदी आदि धर्माभिमानी लोग बहुत कम संख्यामें आये और जो आये अुनमेंसे बहुत ही कम आश्रम जीवनके साथ ओतप्रोत हो सके।

और अेक बात। गांधीजीके आश्रमका खर्चा चन्द धनी लोग देते थे। गांधीजीका व्यक्तित्व अितना प्रभावशाली था कि अिन आश्रमोंमें दाताओंका प्रभुत्व तनिक भी नहीं था। लेकिन मुझे मालूम नहीं कि कौन-कौनसे आश्रम सामान्य जनताके पाओी-पैसेसे चल होंगे।

अिन सब आश्रमोंका वायुमण्डल संयम प्रधान था। लेकिन अुससे किसीको भी सन्ताप नहीं हुआ। जो लोग जीवनमें संयमको प्रधानता नहीं मानते थे अुनको अुसीकी शिकायत थी ही। और जो लोग संयममें मानते थे अुनकी शिकायत थी कि अिन आश्रमोंमें संयमके नियमोंका पालन होता है। लेकिन संयमकी सुवास या असका प्रभाव आश्रम-जीवनमें दीख नहीं पडता।

आश्रम-जीवनमे अनेक सिद्धान्तोका दृढतासे पालन करनेकी बात थी। अेक ही नियमका पालन करनेवाले बहुतसे लोग अेकत्र रह सकते हैं। अनेक नियमोका पालन करनेकी बात आती है तब किसीमे अेककी, किसीमे दूसरेकी कमजोरी, तो किसीमे तीसरेकी। अिसे वायुमण्डलमें परस्पर सहानुभूति टिक नही सकती, असन्तोष स्थायी रूप पकडता है और धृति क्षीण होती है।

ये कठिनाअियाँ तो थी ही। लेकिन मुख्य सवाल यह था कि आश्रम-के व्रत और नियम और आश्रमी-जीवन आत्म-शुद्धि-द्वारा मोक्ष-साधना को प्रधानता देता है या समाज-सेवा द्वारा सामाजिक अुन्नतिको? अिसकी स्पष्टता कभी नही हुअी। गाधीजीके मनमे अैसी दुविधा न थी। वे दोनोका समन्वय कर सकते थे। लेकिन वह तो अुनके व्यक्तित्व-की ही खूबी थी।

नतीजा यह हुआ कि अिन आश्रमोमे लोगोकी अभिरुचि मन्द पड़ी। जहाँ लोकसेवा प्रधान हुअी वहाँ आश्रमवासियोकी आश्रमिता ही गायब हुअी।

तत्वनिष्ठा, व्रत-पालन, सयम, त्याग और चारित्र्यमे जो अूँचे थे अुनमे समाजसेवाकी, लोकसग्रहकी, सफलताकी और नये-नये साधकोंको आकर्षित करनेकी शक्ति बहुत कम पायी गयी। जो व्यवहारकुशल थे, अन्यान्य रचनात्मक कार्यमे लग गये। और जिनको रजोगुणी राजनीतिमें दिलचस्पी थी वे अुस क्षेत्रमे जाकर प्रभावशाली बन गये।

सर्वांगीण आश्रमवृत्ति कार्यसाधक न बनी। बहुतसे आश्रमवासियों-की शक्तिमे अेकागिता होनेके कारण अुन्होंने अपना-अपना क्षेत्र ढूँढ लिया। कअी लोग सचालनमे डूब गये और थोडे चिन्तनमे।

अब देशकी हालत अैसी बनी है कि भौतिक और औद्योगिक प्रगति

गांधीमतके कार्यकर्ताओंकी सहायताके लिअे और अनके संगठनके लिअे श्री जमनालालजीने गांधी-सेवा संघकी स्थापना की। श्री किशोरलाल मशरूवालाने बड़ी निष्ठाके साथ अुसे चलाया। गांधीजीने अुस सेवा संघका भी बंगालमें पधा नजीक विचार विसर्जन किया।

यह सब असा क्यों हुआ ?

अेक बात स्पष्ट है कि गांधीजीने मनुष्यजातिकी शक्ति-अशक्तिको पहचानकर शक्ति बढ़ानेके लिअे भरसक कोशिश की। अुन्होंने देखा कि आजका मनुष्य अितना अूंचा नहीं चढ़ सकता। प्रधान धर्मको गौण कर व्यापक धर्म चलानेका अिलाज सबके सब धर्मसंस्थापक आजमाते आये हैं। गांधीजीने भी थोड़ी कुछ सौम्यता धारण की। लेकिन अुसमें वे प्रगति नहीं देख सके।

दूसरी अेक बात ध्यानमें आती है। ये सारे आश्रम सर्वधर्मी होते हुअे भी हिन्दुओंके ही चलाये हुअे थे। अिनमें मुसलमान पारसी अीसाअी, यहूदी आदि धर्माभिमानी लोग बहुत कम संख्यामें आये और जो आये अुनमेंसे बहुत ही कम आश्रम जीवनके साथ ओतप्रोत हो सके।

और अेक बात। गांधीजीके आश्रमका खर्चा चंद धनी लोग देते थे। गांधीजीका व्यक्तित्व अितना प्रभावशाली था कि अिन आश्रमोंमें दाताओंका प्रभुत्व तनिक भी नहीं था। लेकिन मुझे मालूम नहीं कि कौन-कौनसे आश्रम सामान्य जनताके पाओी पैसेसे चले होंगे।

अिन सब आश्रमोंका वायुमंडल संयम प्रधान था। लेकिन अुससे किसीको भी सन्तोष नहीं हुआ। जो लोग जीवनमें संयमकी प्रधानता नहीं मानते थे अुनको अुसीकी शिकायत थी ही। और जो लोग संयममें मानते थे अुनकी शिकायत थी कि अिन आश्रमोंमें संयमके नियमोंका ही पालन होता है। लेकिन संयमकी सुवास या अुसका प्रभाव आश्रम जीवनमें दीख नहीं पड़ता।

आश्रम-जीवनमे अनेक सिद्धान्तोका दृढतासे पालन करनेकी बात थी। अेक ही नियमका पालन करनेवाले बहुतसे लोग अेकत्र रह सकते हैं। अनेक नियमोका पालन करनेकी बात आती है तब किसीमे अेककी, किसीमे दूसरेकी कमजोरी, तो किसीमे तीसरेकी। असे वायुमण्डलमें परस्पर सहानुभूति टिक नही सकती, असन्तोप स्थायी रूप पकडता है और धृति क्षीण होती है।

ये कठिनाअियाँ तो थी ही। लेकिन मुख्य सवाल यह था कि आश्रम-के व्रत और नियम और आश्रमी-जीवन आत्म-शुद्धि-द्वारा मोक्ष-साधना-को प्रधानता देता है या समाज-सेवा द्वारा सामाजिक अुन्नतिको ? अिसकी स्पष्टता कभी नही हुअी। गाधीजीके मनमे अैसी दुविधा न थी। वे दोनोका समन्वय कर सकते थे। लेकिन वह तो अुनके व्यक्तित्व-की ही खूबी थी।

नतीजा यह हुआ कि अिन आश्रमोमे लोगोकी अभिरुचि मन्द पड़ी। जहाँ लोकसेवा प्रधान हुअी वहाँ आश्रमवासियोकी आश्रमिता ही गायब हुअी।

तत्त्वनिष्ठा, व्रत-पालन, सयम, त्याग और चारित्र्यमे जो अूँचे थे अुनमे समाजसेवाकी, लोकसग्रहकी, सफलताकी और नये-नये साधकोंको आकर्षित करनेकी शक्ति बहुत कम पायी गयी। जो व्यवहारकुशल थे, अन्यान्य रचनात्मक कार्यमे लग गये। और जिनको रजोगुणी राजनीतिमें दिलचस्पी थी वे अुस क्षेत्रमे जाकर प्रभावशाली बन गये।

सर्वांगीण आश्रमवृत्ति कार्यसाधक न बनी। बहुतसे आश्रमवासियों-का शक्तिमे अेकागिता होनेके कारण अुन्होने अपना-अपना क्षेत्र ढूँढ लिया। कअी लोग सचालनमे डूब गये और थोडे चिन्तनमे।

अब देशकी हालत अैसी बनी है कि भौतिक और औद्योगिक प्रगति

जो हो रही है लेकिन भावनात्मक आदर्शवाद राष्ट्रीय जीवनमेंसे हट रहा है। संकुचितता, अत्यागिता, अदूरदृष्टि, स्वार्थ, अभिमान, सत्तालोभ, पदाभिमान, अहमहमिका, अहम्‌श्रेयसी आदि असामाजिक और अराष्ट्रीय दोष बढ़ने लगे हैं। यह सब देखकर चंद लोगोंके मनमें विचार आ रहे हैं कि गांधीजीने देशमें जो चारित्र्य-शुद्धिका जीवन-शुद्धिका प्रभाव दिखाया वह शायद अुनके आश्रमी प्रयोगके कारण ही होगा।

अिसलिअे अब फिरसे हम आश्रमकी स्थापना क्यों न की जाय? लोगोंने गांधीजीके पुण्यका फल तो ले लिया। किन्तु अुनका पुण्यमार्ग छोड़ दिया। अब हम दोष समझ गये। अिसलिअे पुण्यमार्ग पर फिरसे क्यों न जायें? आश्रमी प्रयोग फिरसे सजीवन क्यों न करें? असा अेक भी आश्रम अगर प्रभावशाली सिद्ध हुआ तो सारे देशका वायुमण्डल सुधर जायगा और राष्ट्रके नेताओंकी प्रधान चिंता कम हो जायगी।

यह विचार सार्वत्रिक नहीं है। थोड़े लोगों तक सीमित है। अुनको सूझता नहीं कि यह सब कैसे किया जाय?

सच बात तो असी दीख पड़ती है कि अब भविष्यके लिअे पुराने ढंगके आश्रम चलाये तो भी काम नहीं दे सकेंगे। प्राचीन कालकी अुज्ज्वलता स्मरकर जिन्होंने आश्रम-जीवनके प्रयोग किये अुनकी प्रेरणा सही थी। किन्तु वह कार्यपद्धति और वह कार्यक्रम भविष्यके लिये अनुकूल नहीं होगा। आयन्दा जो संस्कार-केन्द्र और सहजीवनके प्रयोग किये जायेंगे अुनकी बुनियादमें भूतकालके गौरवकी नहीं किन्तु भविष्यकालकी अुज्ज्वलताका स्पष्ट दर्शन होना चाहिअे। भारतीय अनुभवके निचोड़को हम अपनी पूंजी बना सकते हैं किन्तु हमें जगत्‌की सब संस्कृतियोंका अनुभव आत्मीय भावसे अपनाना होगा। गंगा-यमुना अगर पवित्र नदियाँ हैं तो नील, अिरावती, यान्सीकेंग, सान, ह्वाअिन, टेम्स, हडसन, अॅमेझान आदि नदियाँ भी अुतनी ही पवित्र हैं। मनुष्यने

जितनी भी सस्कृतियाँ आजमायी है वह सब हमारी भली-बुरी पूँजी है। अुसका स्वीकार करके रशिया, अमेरिका, आफ्रिका, और जापान अि० सब देशोके साथ अुनके गुणदोषोको भूले विना हमे अपनी आत्मीयता बढानी है और सब देशोके मानव-हित-चिंतक सज्जनोको हम साथ ले सके अैसे जीवन-केन्द्रोकी स्थापना करनी होगी। अिसमे सबसे अधिक हम लोगोकी ही कसौटी होगी। क्योंकि हम लोगोने अपनी सकुचिततताको कअी दफे आध्यात्मिकता माना है। तमोगुणको सत्त्वगुणका जामा पहनाया है। और अलग रहनेमे पवित्रता देखी हे। हमारी पुरानी साधना ही हमारा बुढापा बन गयी है। हमे नये किस्मकी आत्म-शुद्धि करके अपनी दृष्टिमे यौवनकी आस्तिकता लानी पडेगी।

अिस भविष्यकी साधनाका गहरा चिन्तन करनेके दिन आये है।

जो हो रही है लेकिन भावनात्मक आदर्शवाद राष्ट्र व जीवनमेंसे हट रहा है। मनुष्यिनता अदागिता अदूरदृष्टि स्वार्थ अभिमान सत्तालोभ, पक्षाभिमान अहमहमिका अहमहमिका आदि अमामाजिक और अराष्ट्रीय दोष बढ़ने लगे हैं। यह सब देखकर चन्द लोगोंके मनमें विचार आ रहे हैं कि गांधीजीने देशमें जो चारित्र्य-शुद्धिका जीवन-शुद्धिका प्रभाव दिखाया वह शायद अुनके आश्रमी प्रयोगके कारण ही होगा।

अिसलिअे अब फिरसे अन आश्रमोंकी स्थापना क्यों न की जाय? लोगोंने गांधीजीसे पुण्यका फल तो ले लिया। किन्तु अनका पुण्यमार्ग छोड़ दिया। अब हम दोष समझ गये। अिसलिअे पुण्यमार्ग पर फिरसे क्यों न जायें? आश्रमी प्रयोग फिरसे सजीवन क्यों न करें? असा अेक भी आश्रम अगर प्रभावशाली सिद्ध हुआ तो सारे देशका वायुमण्डल सुधर जायगा और राष्ट्रके नेताओंकी प्रधान चिंता कम हो जायगी।

यह विचार मानसिक नहीं है। थोड़े लोगों तक सीमित है। अुनकी सूचना नहीं कि यह सब कम किया जाय?

सच बात तो अभी दीख पड़ती है कि अब भविष्यके लिअे पुराने ढंगके आश्रम चलाये तो भी काम नहीं दे सकेंगे। प्राचीन कालकी अुज्ज्वल रूपना देखकर जिन्होंने आश्रम-जीवनके प्रयोग किये अुनकी प्रेरणा सही थी। किन्तु वह कार्यपद्धति और वह कार्यक्रम भविष्यके लिये अनुकूल नहीं होगा। आयन्दा जो संस्कार केन्द्र और सहजीवनके प्रयोग किये जायेंगे अुनकी बुनियादमें भूतकालके गौरवका नहीं, किन्तु भविष्यकालका अुज्ज्वलताका स्पष्ट दर्शन होना चाहिअे। भारतीय अनुभवके निचोड़को हम अपनी पूंजी बना सकते हैं किन्तु हम जगतकी सब संस्कृतियोंका अनुभव आत्मीय भावसे अपनाना होगा। गंगा-यमुना अगर पवित्र नदियाँ है तो नील अिरावती, यान्सीक्यांग सान हाअिन येल्लो हडसन अमेज़ान आदि नदियाँ भी अुतनी ही पवित्र हैं। मनुष्यने

जितनी भी सस्कृतियाँ आजमायी हे वह मव हमारी भली-वुरी पूँजी है। अुसका स्वीकार करके रशिया, अमेरिका, आफ्रिका, और जापान अि० सव देशोके साथ अुनके गुणदोपोको भूले विना हमे अपनी आत्मीयता वढानी है और सव देशोके मानव-हित-चितक सज्जनोको हम साथ ले सके अैसे जीवन-केन्द्रोकी स्थापना करनी होगी। अिसमे सवसे अधिक हम लोगोकी ही कसौटी होगी। क्योकि हम लोगोने अपनी सकुचितताको कअी दफे आध्यात्मिकता माना है। तमोगुणको सत्त्वगुणका जामा पहनाया है। और अलग रहनेमे पवित्रता देखी है। हमारी पुरानी साधना ही हमारा वुढापा वन गयी है। हमे नये किस्मकी आत्म-शुद्धि करके अपनी दृष्टिमे यौवनकी आस्तिकता लानी पडेगी।

अिस भविष्यकी साधनाका गहरा चिन्तन करनेके दिन आये हैं।

बहनोंके बापू

[पू० गांधीजीने भारत भ्रमण करते आश्रमकी बहनोंको जो पत्र लिखे अुनका सम्पादन श्री काकासाहबने किया है। अिस किताबकी अुन्होंने जो प्रस्तावना लिखी है अुसमें आश्रमके स्त्री जीवनकी अच्छी झांकी मिलती है। अिसलिअे अुसे अिस किताबमें परिशिष्टमें स्थान देना अुचित माना है।]

आश्रम जीवनके बारेमें चर्चा करते हुअे अेक बार मैंने पू० बापूजीसे कहा था कि 'आश्रममें जितने पुरुष आये हैं वे सब आपकी प्रवृत्तिसे आकर्षित होकर आये हैं। राष्ट्रसेवा तो सबका आदर्श है ही। अुनमें कुछका आकर्षण राजनीतिक स्वराज्यके लिअे है। कुछ लोग यह देखकर आये हैं कि हिन्दू धर्मकी पुनर्जागृति आपके द्वारा होगी। कुछको अितना ही आकर्षण है कि आपके जरिये अहिंसा जीवित और प्रमाणभूत होने लगी है, कुछका मुख्य आकर्षण अस्पृश्यता निवारण ही है। जबकि हममें कुछ यह समझकर आये हैं कि राष्ट्रीय शिक्षाका प्रयोग करनेके लिअे यह अुत्तम स्थान है। मगर यह नहीं कहा जा सकता कि आश्रमकी स्त्रियाँ आश्रमके आदर्शोंसे खिंचकर आयी हैं। गंगाबहन जैसी अेक दो बहनोंके अपवादको छोड़ दें तो बाकीकी सब बहनें अपने पति, पिता या भाअी वगैरा रिश्तेदारोंके पीछे-पीछे आयी हैं। यह स्पष्ट बात है कि आश्रम-जीवन अुन्हें जबरदस्ती स्वीकार करना पड़ा है। कुछ बहनोंके मनमें आश्रमके आदर्शोंके प्रति विरोध नहीं तो अरुचि जरूर है। मैं

सिर्फ ब्रह्मचर्यके आदर्शकी ही बात नही कहता, मगर हम जो कौटुम्बिक जीवनको गौण बनाकर सामाजिक जीवन बितानेकी तालीम देना चाहते हैं, वह भी कुछको पसन्द नही है। हमारी लक्ष्मीबहनमे गांधर्व महाविद्यालयके सामाजिक जीवनकी आदी होनेके कारण कुछ होशियारी आ गअी है, परन्तु यह देखकर कि जिनमे सामाजिक जीवनका अुत्साह है, अुन्हीको सारा भार अुठाना पडता है, अिस आदर्शके प्रति अुनका भी समभाव नही रहा। हमारे भोजनके नियम भी बहनोको परेशान करते है।

"दूसरी बात यह है कि रोज थोडी-थोडी चर्चा करके स्त्रियोको सब कुछ समझानेका धैर्य (धीरज) पुरुष-वर्ग मे कम है। ज्यादातर यही वातावरण दिखाअी देता है कि जैसे-तैसे निभा लिया जाय। नतीजा यह है कि स्त्रियाँ आश्रमजीवनको परिपुष्ट बनानेके बजाय शिथिल करनेकी कोशिश करती दिखाअी देती है। और अिस तरह हमारा बोझ बढता जा रहा है। अिसका अुपाय आप ही कर सकते है।"

अिस पर बहुत चर्चा हुअी और तय किया गया कि बापूजीको स्त्रियोके लिये अेक कक्षा चलानी चाहिये। बापूजीने अुसमे अेक कीमती बात जोडी। अुन्होने स्त्रियोके लिअे अेक स्वतन्त्र प्रार्थना शुरू की। अुसके सारे श्लोक बापूजीने स्वय ही चुने और स्त्रियोके लिअे वक्त निकालकर अुसमे अपनी आत्मा अुडेल दी।

अिस सबका अद्भुत असर हुआ। स्त्रियोमे अेक नअी जागृति आअी। अुनके सवालोकी चर्चा होने लगी। आश्रम-वासियोको अुनकी मुश्किलो का अधिक स्पष्ट भान हुआ। कअी विशेष कक्षाअे चली, और तरह-तरहके प्रश्न हल होनेके लिअे पैदा हुअे। फिर तो बापूजीने लगभग क्षेत्र-सन्यास लेकर आश्रममे ही अेक साल बितानेका फैसला किया। अनेक प्रवचन दिये। साल पूरा होनेके बाद बापूजीने **दक्षिणकी** यात्रा शुरू

थी। वे दिन गुजरातके बाढ़ संकटके थे। अुसके बाद मद्रासमें कांग्रेस अधिवेशन हुआ। बापूजी कांग्रेसकी राजनीतिसे अलग हो गये थे और अुन्होंने राजगोपालाचार्यको अुनके खादीके काममें मदद देनेके लिये दक्षिणका सफर किया। अुसी कामके सिलसिलेमें अुन्होंने लंका-सीलोनका भी दौरा किया। अुड़ीसा भी गये। गौहाटी कांग्रेसके बाद अुन्होंने फिर राजनीतिमें प्रवेश किया और स्वराज्य दलको सलाह देनेका जिम्मा लिया।

सन् १९२७ २८ और २९ के तीन वर्षोंके दरमियान पू० बापूजीने बहनोंके नाम पत्र लिखकर स्त्री मण्डलका अपना जमाया हुआ वातावरण जाग्रत रखनेकी कोशिश की। वे स्त्रियोंके सामने रचनात्मक कामके कोओ सुझाव रखते और यदि बहन अुसे मान लेती तो वे अुन्हें प्रोत्साहन देते थे। यदि वे घबरा जाती या वहममें पड़ जाती तो फौरन अपना सुझाव वापस लेकर या अुसे नरम करके अुन्हें अभयदान देते और अुस विचारको दूसरी तरह घुमाकर फिरसे अुनके सामने ज्यादा सफलताथ रखते थे। सफरके दौरानमें स्त्री जागृतिके जो जो अुदाहरण अुनके सामने आते, अुनके बारेमें बहनोंको लिखकर प्रोत्साहन देते थे। जिस तरह कओ ढंगोंसे प्रयत्न करके बापूजीने आश्रममें स्त्री जागृतिका वातावरण जमाया था। अुसके मीठे फल तुरंत देखनेको मिले।

जब गांधीजीने स्वराज्य आन्दोलनके अुग्ररूपमें दांडी-कूच शुरू की तब आश्रमके बहुतेरे पुरुष और युवक अुनके दलमें शरीक हो गये थे और आश्रमके तमाम विभागोंका भार आश्रमकी बहनोंने अपने सिरपर ले लिया।

आश्रमके बाहरकी बहनोंने भी अुन दिनों बड़ा काम करके दिखाया। अुसमें भी शराबबन्दीके लिअे शराबखानों पर धरना देनेका काम, शराबके ठेकेदारोंको समझानेका काम और शराब पीनेवाले लोगोंके घरमें जाकर शराबके खिलाफ असर करनेके लिअे स्त्री-पुरुषोंको प्रेरित करनेका काम तो बहनोंने अुत्तम ढंगसे ही किया था। अुन दिनोंकी देश-जागृति

और खास तौर पर स्त्री-जागृतिकी याद करने पर आज भी मन आश्चर्य-चकित हो जाता है और बोल अुठता है कि 'सचमुच ही अुस जमानेमे कुछ जादू-सा कर दिया गया था।' अिसमे शक नही कि अुन दिनो मनुष्यने जैसे अपने बूतेसे बाहरका काम कर दिखाया था।

: २ :

बापूजीके पत्रोमे तीन बातोका सतत आग्रह दिखाओ देता है

(१) सामाजिक जीवनका महत्त्व बहनोके मन पर ठसाना (दिलमे पक्के तौरपर अुतारना) और अिस सामाजिक जीवनको जाग्रत करके दृढ बनानेके लिअे तरह-तरहके अुपाय करना।

(२) 'शिक्षाका अर्थ है अक्षर ज्ञान' अिस वहमको मिटाकर शिक्षा का सच्चा अर्थ है चरित्र-निर्माण और जीवनकी दृष्टिसे आवश्यक कौशल, यह नया विचार सबसे मनवाना।

(३) हम समाज पर और अुसमे भी दबाये हुअे वर्ग पर बोझ न बने और हमारे जीवनमे किसी-न-किसी तरहसे पाप प्रवेश न करे, अिसके लिये शरीर-श्रम, अुद्योग-परायणता, सादगी और सयमके प्रति निष्ठा पैदा करके अुसीका वातावरण स्थिर करना।

अिन तीन आग्रहोके साथ-साथ तबूरेके सुरकी तरह स्त्री-स्वातन्त्र्य की बात अिन पत्रोमे अखण्ड रूपमे आती ही है। स्त्री सचमुच अबला नही है, पुरुषोकी आश्रित होनेका अुसके लिअे कोओ कारण नही। समाजका नेतृत्व पुरुषोके हाथमे रहे, यह भी कोओ सनातन नियम नही। स्त्री अपने जीवनका अपनी स्वतन्त्र अिच्छाके अनुसार निर्माण और विकास कर सकती है, और अिसी तरह मानव-प्रगतिमे हाथ बँटा सकती है। बापूजी बहनोको अिस किस्मकी शिक्षा अुनकी शक्तिके अनुसार देते कभी थकते ही न थे।

आश्रममें कभी कभी चोर आते थे। अिस अवसरका लाभ अुठाकर बापूजीसे प्रश्न पूछा कि जब चोर आयें तब बहनें क्या करें? आश्रममें अगर पुरुष कोअी न हों, तो बहनें अपनी रक्षा कर सकेंगी या नहीं?

अिस चर्चाके समय बहनोंने बापूजीको जो पत्र लिखे थे वे यदि आज हमारे पास होते, तो वह अेक कीमती मसाला साबित होता। अब तो बापूजीके जवाबोंसे सिर्फ कल्पना ही की जा सकती है कि बहनोंके पत्रोंमें क्या रहा होगा।

पुरुषने स्त्री-जातिको पराधीन बनाया। अपनी भोग-लालसाको प्रधानता देकर अुसने स्त्रीको जेवर जैसी पराधीन और कृत्रिम बना दिया। पुरुषकी अीर्ष्या और स्वामित्व-बुद्धिके कारण ही स्त्री-जाति अबला, असहाय और अनाथ मानी गअी। अिस सबका विचार करने पर यही तय रहा कि स्त्री-रक्षाकी आखिरी जिम्मेदारी पुरुषोंकी ही है और जब तक आश्रममें अेक भी पुरुष हो, स्त्रियोंका बचाव करते करते मर मिटना ही अुसका धर्म है। यह स्वीकार करनेके बाद भी बापूजी कहते हैं कि अभी भले ही तुम अपने आप और अपने बलसे अपनी रक्षा न कर सको, लेकिन धीरे धीरे यह शक्ति तुम्हें पैदा तो करनी ही है।

अूँचे वर्ण और कमजोर जातियोंके बीच जो भेद है वह सिर्फ ढीले लोगोंमें ही है या पुरुषोंमें ही है ऐसी बात नहीं। स्त्रियोंमें भी वह अुतनी ही मजबूतीके साथ घर किये बैठा है, यह जानकर बापूजी अिन पत्रोंमें बहनोंको मजदूरनियोंके साथ सगाअीकी गाँठ बाँधनेकी प्रेरणा देते हैं।

आश्रमकी बहनोंमें कुछ बिलकुल सादी जैसी थीं, कुछ अपढ़ बनियाँ जैसी थीं, कुछ अनुभवहीन थीं, कुछ शहरी वातावरणमें पली हुअी थीं, तो कुछ गाँवोंसे सीधी आश्रममें पहुँची थीं। और यह बात भी न थी कि सब अेक ही प्रान्तकी थीं। जहाँ जितनी ज्यादा विविधता हो वहाँ

अेक भी बात कहते दस बार सोचना पड़ता है। असलिअे अिन पत्रोंमें गांधीजीने बहुत ही सावधानीसे अपनी बात रखी है। जितना गले अुतरे, सर्व-सम्मतिसे करना तय हो, अुतना ही करना, बाकीको छोड़ देना— यह अभयदान तो कदम-कदम, पग-पग पर दिया हुआ ही है।

अुन्होंने प्रारम्भ किया है समय-पालनके आग्रहसे। प्रार्थनामें आना ही है, तो वक्त पर आना चाहिअे। संस्कृतमें 'समय' शब्दके दो अर्थ हैं अेक है समय यानी वक्त और दूसरा है वचन। अिन दोनों अर्थोंमें 'समय प्रतिपाल्यताम्'—यह है बापूजीकी पहली सीख। प्रार्थनामें समय पर आना, प्रार्थनामें ध्यान लगाना, श्लोक जबानी याद करना, गीताके अध्याय कण्ठस्थ करना, अुच्चारणकी तरफ खास तौर पर ध्यान देना— यह सब धीरे-धीरे आ जाता है। प्रार्थनामें जानेका निश्चय करनेके बाद वह असाधारण कठिनाअीके बिना टाला नहीं जा सकता। जिसका निश्चय किया, अुसका पालन होना ही चाहिये। प्रार्थना तो हृदयका स्नान है। जैसे रोज नहानेमें हम नहीं चूकते, वैसे ही हृदयको शुद्ध करनेवाली प्रार्थना भी हम नहीं छोड़ सकते।

पुराने जमानेमें धर्मनिष्ठाका अर्थ था मन्दिरमें देवदर्शनके लिअे जाना। आजकल भगवान रामचन्द्रने चरखेका रूप धारण कर लिया है। यह राममूर्ति चरखा छोड़ा नहीं जा सकता। यज्ञके तौर पर यानी परमार्थके लिअे किये जानेवाले कामके रूपमें चरखा चलाना ही चाहिअे। अिस कलिकालमें 'वसन रूप भये श्याम' यह हमें भूलना नहीं चाहिये। त्याग द्वारा ही जीवन अुन्नत होता है। मगर त्याग यों ही नहीं हो जाता। सेवाके लिअे, परोपकारके लिअे त्याग करना आसान होता है। अिसी-लिअे चरखा-यज्ञ का आग्रह रखा गया है। यह चरखा नियमित चलाना चाहिअे। नियमित किया हुआ काम माफिक आता है। अेक ही बारमें बहुत-सा करने लगें, तो अुस कर्मसे आत्मा दुखी होती है। प्रार्थना और चरखेका सामूहिक कार्य करने लगें, तो अुसमें आपसमें अेक-दूसरेका और

सबका औश्वरके साथ सहयोग सधता है।

अैसा कहकर गांधीजीने स्त्रियोंमें पारिवारिक भावनासे भी व्यापक सामाजिक भावना पैदा करनेकी कोशिश की है और अिसके लिअे अन्दर से मानसिक विकास करनेकी और बाहरसे अपनेमेंसे अेक प्रमुख मुकरर करके अुसे सबकी सेवा करनेमें मदद देनेकी बात सामने रखी है। 'बहनोंके बीच सहयोग अत्यन्त आवश्यक है। सारे आश्रमको अेक कुटुम्ब मानो और अुसके द्वारा विश्व-कुटुम्ब भावनाकी तैयारी करो। आज स्त्री-सविकाओंकी खास जरूरत है क्योंकि स्त्रियोंके हाथमें स्वराज्य की कुंजी है। तुम कुशल बनकर, पवित्र जीवन बिताकर सारे भारत वर्षमें फैल जाओ। लोगोंका यह खयाल कि स्त्री भीरु और अबला ही होती है, गलत साबित कर दो। सभामें अिकट्ठी होओ तब बहुत बात चीत न किया करो। लम्बी-चौड़ी पगडंडेका नासूर मिटा ही देना चाहिये। अिकट्ठा तो अिसलिअे होते हैं कि हमारे हृदय मिल जायें।' अित्यादि महत्वकी बात समझानेके बाद गांधीजीने धीरे धीरे शुद्ध सार्वजनिक भावनाका सौंपा है क्योंकि यह काज स्त्रियोंका परिचित क्षेत्र है।

भावनात्मक साथ साथ भण्डार आ ही गया। भण्डार सभालने, हिसाब रखनेकी बात आ गयी। अिसलिअे अुनकी शिक्षा भी लेनी ही रही। यहाँ तक पहुँचनेके बाद बापूजीने स्त्रियोंको बालमन्दिर सौंप देने की सिफारिश की।

स्त्रियोंकी शिक्षाके मामलेमें बापूजीने अुनके सामने बहुत ही आसान कार्यक्रम रखा है लिखने-पढ़नेको मुख्यता रखो और सुधारो, अुच्चारण शुद्ध करो हिसाब लिखना आना मुश्किल बात नहीं। अिसके लिअे जोड़ बाकी गुणाकार और भागाकार तकका गणित आना चाहिये।

अिसके बाद आता है अक्षर मन्दिरकी शिक्षा। जिसमें काम करने सा थ बात आ जाती है। हम धीरे धीरे विज्ञान, जुगराफिया और ख्यात

वनना है। पाखाने साफ करनेकी साधना भी राष्ट्रीय शिक्षाका महत्त्वपूर्ण अग है। हमारे लिअे और वच्चोके लिअे जव तक दूधकी जरूरत रहेगी, तव तक गोशालाकी चिन्ता भी रखनी ही पडेगी।

अिस प्रकार अुन्होने शिक्षाके आवश्यक अग स्त्रियोके सामने रखे हैं। मगर वापूजीका खास आग्रह यह है कि सच्ची शिक्षा —अुत्तम-तालीम— हृदयकी ही है। अिसके लिअे पहली वात निर्भयताकी है। जन्म-मृत्युका हर्ष-शोक छोड देना चाहिअे। अगर जीना अच्छा लगता है, तो मृत्युके वाद जन्म आयेगा ही। और जन्म नही चाहो, तो अिस लोकमे ही मोक्षकी साधना की जा सकती है। अिसलिअे दोनो तरहमे मृत्युका डर निकाल ही देना चाहिये।

पुरुषके विना हम असहाय हैं, अनाथ है, यह खयाल सवसे पहले निकाल देना चाहिये। अिसलिअे गहने और शृगार दोनो छोड देने चाहिये। सच्चा सौंदर्य हृदयमे है, अुसीका हमे विकास करना चाहिये। रूप बनाना और गहने पहनना सव विकार वढानेके लिअे है। विकारी न होनेका नाम ही ब्रह्मचर्य है। वह सध जाय तो अिसी जन्ममे मुक्ति है। विकार मिट जाय, तो रोग भी मिट जाय। हमे जो जवानी मिली है, वह विकारोको पोषण देनेके लिअे नही, वल्कि अुन्हे जीतनेके लिअे है। कला हम जरूर सीखे, मगर सच्ची कला सादी और कुदरती होती है। सुघडता और व्यवस्थिततामे वहुत कुछ कला आ जाती है।

स्त्रियोमे जो स्वाभाविक कलावृत्ति होती है, अुसका विचार करके वापूजी कहते है कि प्रदर्शन वगैराका वन्दोवस्त करना अिन्हीका काम है।

स्त्री-सगठनमे जव वीचमे शिथिलता आ गअी, तव अुसका खतरा समझकर गाधीजीने साफ कह दिया कि नियम नरम न किये जायें। नियम नरम करके लागू करनेके वजाय अुन्हे निकाल देना ज्यादा अच्छा

है। अिसलिओ न रह सका सामाजिक जीवनका विकास न कर सका। तो अलग रह सकता था। अैसा किया गया सम्बन्धोंके साथ भी रह सकती थी।

प्रत्येक अवसर पर बापूजी अुन्मुक्त होकर कहा दिखाते हैं। बार बार तब क्या किया जाय अिसकी चर्चा करते हुअे अुन्होंने स्पष्ट शब्दोंमें कहा कि हम अपरिग्रह बनकर पाप करें, अच्छी तरह नहीं करते और गफलतमें रहते हैं, जिससे चोरी होती है। धर्मके नाम पर चलनेवाले अनेक रिवाजोंको अन्धाचार जैसा गलत रूप कर दिया कि धर्मका अर्थ है निःस्वार्थ परोपकार, विकारों पर विजय और कायरताका त्याग। किसी भी चीजको छिपाना पाप है क्योंकि असत्यका जन्म हिम्मत—साहसका अभाव होता है।

धर्मका सबसे बड़ा और प्रधान अंग है भक्ति। अिसकी बात करते हुअे बापूने मगर गहराअीमें जाकर अुन्होंने कहा है—भक्ति यानी श्रद्धा। और वह श्रद्धा जितनी आवश्यक पति हो अुतनी ही सदैव प्रति भी हो।

भक्तिकी जितनी गहरी मीमांसा हम और कहीं शायद ही मिले।

धर्मका अर्थ है परोपकार। अितना कहनेके बाद परोपकारमें होने वाले अहंकार और मैं-पनको निकाल ही डालना चाहिये यह कहनेको अुन्होंने अब भी भूल नहीं छोड़ी। वह यहां तक कि गंगा नदी बरसातमें कीमती और बहुत-सा कीचड़ फैलाकर हमारी जमीनको अुपजाअू बनाती है और आगे बढ़ता है—अितना कहनेके बाद बापूजी और भी जोड़ते हैं कि अपना किया हुआ अुपकार कृतज्ञ लोगोंके मुंहसे सुनना पड़े, अिस संकोचके कारण गंगा तुरन्त भाग जाती है।

हमारे देशमें जहां देखो वहीं सफाअीकी कमी है। नदीके घाटपर शहरकी गलियोंमें—अितना ही नहीं, मगर भगवानके मन्दिरोंमें भी अस्वच्छता और गन्दगी फैली हुअी होती है। मानो घरके बाहर हमारी कोअी जिम्मेदारी ही नहीं।

परिशिष्ट—२

गांधीजी प्रणीत सर्व-समाजी विवाह-विधि

अपने जीवनके महत्त्वके प्रसंगोंको यादगार, पवित्र और शुभ बनानेके लिअ मनुष्यने कुछ संस्कार और विधियाँ बना रखी हैं। अिनमें सबसे महत्त्वकी है विवाह विधि। भिन्न परिवारके, भिन्न गाँवके और भिन्न प्रान्तके दो जीव प्रेमके कारण अेकत्र रहना चाहते हैं। अेक-दूसरेमें ओतप्रोत होनेका निश्चय करते हैं और अेक नये खानदानकी स्थापना करना चाहते हैं। अेक युवक अेक युवतीको अपने जीवनकी साथी बनाकर, वंश विस्तारका संकल्प करता है। जो दो थे वे अेक बनना चाहते हैं। अेकके अनेक होते हुअे भी अपनी अेकता दिन पर दिन अधिक महसूस करना चाहते हैं। जीवनके अिस महान् परिवर्तनके लिअ अुचित विधिकी आवश्यकता है।

जिन आदर्शोंको लेकर दम्पति जीवनका आरम्भ होता है अुन आदर्शोंका प्रतिबिम्ब समाजकी विवाह विधिमें मिलना चाहिये। यों देखा जाय तो परस्पर प्रेम निष्ठा और आदर ही सम्बन्धका मुख्य बंधन है। जीवनमें भले बुरे अनेक प्रसंग अुपस्थित होते हैं। मनुष्यका स्वभाव भी बदल जाता है। जीवनके आदर्शोंमें भी तबदीलियाँ होती हैं। असे निमकके परिवर्तनमें प्रेमको स्थायी रूपसे स्थिर रखना और समस्त जीवन-यात्रामें अुसे निभाना, अुसे समृद्ध करना और अुसकी सुगंधि द्वारा और फैलाकर गृहस्थाश्रमको समाजके लिये आशीर्वादरूप बनाना यह है दम्पति-जीवनकी बुनियाद।

पतिकी माली हालतमे तबदीली हुअी तो पत्नी तुरन्त अुसके अनुसार अपने जीवनमे, अपनी आदतोमे परिवर्तन कर ही डालती है। पतिका वैभव बढा तो पत्नी गृहलक्ष्मी बनकर आसपासके सब लोगोको सम्हालती है। भाग्यवश पतिको बुरे दिन देखने पडे तो पत्नी श्रम-सहिष्णु बनती है और अपनी प्रसन्नतासे पतिकी हिम्मत बढाती है। ऋतु-चक्र बदलते ही, जिस तरह पशु-पक्षियोका जीवन-क्रम बदलता है, अुसी तरह भाग्य-चक्र बदलते ही पति और पत्नी अेक-दूसरेके प्रति अनुकूल होनेकी पराकाष्ठा करते हे।

वैवाहिक जीवनमे दोनो मिलकर प्रथम अन्न-वस्त्र, घर और अुपकरण आदि मसाला जुटाते है। गाय, बैल आदि पशुओकी मदद लेते है। वृक्ष-वनस्पतिसे आहार प्राप्त करते है। कपास, अून आदि तन्तुओसे कपडे बनाते है। सहजीवनके नियम बनानेके लिअे जीवनका शास्त्र ढूंढते है। पहाड, नदी, तालाव, वन-अुपवन आदिका सहारा लेते है। प्राथमिक अवस्थामे गुफायें ढूंढते है या पहाडके पत्थरको काटकर कृत्रिम गुफाये, लयन बनाते है। आगे जाकर बडे-बडे प्रासाद बनाते है। नगोकी (पहाडोकी) रक्षा पाकर, नगरोकी स्थापना करते है। पेशेके अनुसार समाजके भिन्न-भिन्न वर्ग और वर्णकी स्थापना करते है। आमोद-प्रमोदके लिअे संगीत, चित्रकला, नाटय, नृत्य आदिका आविष्कार करते है। और अनन्त कालमे अपना स्थान निश्चित करनेके लिअे श्राद्धके द्वारा परम्परा मजबूत करते है।

अिस तरह दम्पति-जीवन याने गृहस्थाश्रम और मानवी संस्कृति दोनो अेक-दूसरेके साथ सम्बन्धित है। अैसे संस्कारी जीवनके आदर्शोको व्यक्त करनेके लिये हमारी विवाह-विधिमे सप्तपदीकी व्यवस्था की थी।

"जो लोग सात कदम साथ चलते है, अुनके बीच मैत्री होती है" यह कहावत पुरानी है। अिनका यह शब्दार्थ कुछ कामका नही। जाजाग्

रास्ते पर सैकड़ों लोग सात कदम क्या सात सौ कदम साथ चलते हैं लेकिन एक दूसरेका नाम तक नहीं जानते। सप्तपदीका अर्थ है कि शुद्ध जीवनके सात आदर्शोंमें जिन लोगोंने एक दूसरेका साथ दिया, उन्हींके बीच पावन मैत्री संभव होती है और वह जीवनके अंत तक टिक भी सकती है। सप्तपदीके जिन सात आदर्शोंकी स्थापनाके लिए जो जीवन साधना जरूरी है उन्हींको महात्माजीने सप्तव्रत का नाम दिया। यम ही जीवनकी साधना है। संस्कारी जीवन यम दान और तपकी बुनियाद पर खड़ा है।

विवाह विधिके द्वारा गृहस्थाश्रमके और मानवी जीवनके आदर्शोंको व्यक्त करनेकी कोशिश भिन्न भिन्न अभियान की है। हरेक धर्मने अपने-अपने लोगोंके लिए विवाह विधि कायम की है। लेकिन अब जब अनेक धर्मोंके हम मिलाकर एक राष्ट्र बना रहे हैं तब सब धर्म-समभाव या सब धर्म समभाव सूचक नयी विधिकी आवश्यकता है। सब धर्म समभावके अंदर महात्मा गांधीजीने हमें ऐसी एक विधि तैयार करके दी है। जिस तरह अन्य विधियाँ कानूनके द्वारा मान्य हुई हैं उसी तरह इस युगकी नयी विधि भी समाज मान्य और विधान मान्य होनी चाहिए।

स्वतंत्र भारतके राज्यको हम Secular democracy कहते हैं। Secular का मानी होता है वह अवस्था जिसका धर्मके साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। इसका राज Secular है। वह धर्मको नहीं मानता है। वह कहता है कि धर्म एक ढकोसला है और इसके द्वारा सामाजिक अन्याय और अत्याचारको सहारा मिलता है।

हमारी राज्य-व्यवस्था इस अर्थमें Secular नहीं है। हमारी सरकार और हमारी संस्कृति भी धार्मिकताको आध्यात्मिकताको प्रोत्साहन देती है। लेकिन इसमें किसी भी एक धर्मका विशेष पक्षपात

नही है। सब धर्मोके प्रति अुसके मनमे अेकसा आदर है, अेकसी श्रद्धा है। अैसी हालतमे जब भिन्नधर्मी लोगोके बीच विवाह होनेकी परिस्थिति खडी होती है, तब विवाह-विधि अैसी होनी चाहिये, जिसके अन्दर धार्मिकता पूरी हो, किन्तु किसी विशेष धर्मका आग्रह न हो। धर्मपरायण किन्तु विशिष्ट धर्म-निरपेक्ष विधिके द्वारा ही अैसे विवाह सम्पन्न हो सकते है।

गाधीजीकी बनायी हुअी विवाह-विधि हम नीचे देते है। अिसके लिये आवश्यक कानून बनाकर लोगोको अेक नयी सहूलियत बनाकर देना जरूरी है। स्वराज्य सरकारका यह पवित्र कर्तव्य है। अिसके द्वारा समाजकी धार्मिकता बढेगी और सब धर्मोके बीच कुटुम्ब-भाव पैदा होगा।

गांधीजी प्रणीत विवाह-विधि

श्री.... 'और श्रीमती'''की विवाह-विधि होती है अुसे मै अीश्वर को दरम्यान समझकर करता हूं। आप दोनो भी अैसा करे। अिस विधिमे आप जो साक्षी बने है, अपने मन पवित्र रखे और विवाहाकाक्षीकी पवित्र अिच्छाके सहायभूत हो।

अब मैं अीश्वरको धन्यवाद देनेवाला भजन गाता हूँ, सो ध्यानसे सुने।

(राग भैरव, ताल धमार)

"आज मिल सब गीत गाओ.
अुस प्रभुके धन्यवाद
जिसका यश नित गाते है
गन्धर्व मुनिगण धन्यवाद'''आज
मन्दिरोमे कन्दरोमे परवतोके शिखर पर
देते है लगातार सौ-सौबार मुनिवर धन्यवाद
आज मिल सब गीत गाओ।"

१ प्रश्न आप दोनों स्वस्थ चित्त हैं?
अुत्तर (दोनों) जी हाँ।
२ प्रश्न आपने कल सात यज्ञ[1] जैसा बताया गया था किये ?
अुत्तर जी हाँ।
३ प्रश्न आप लोग जानते हैं न कि यह सम्बन्ध विषयभोगके लिये और भोगके लिये नहीं है ?
अुत्तर जी हाँ।
४ प्रश्न अिस आश्रममें[2] आप धर्मभावसे त्यागभावसे और सेवा भावसे प्रवेश करते हैं ?
अुत्तर जी हाँ।
५ प्रश्न अिस कारण दोनों अेक दूसरेके सेवाकार्यमें विक्षेप नहीं डालोगे लेकिन अेक दूसरेको मदद करोगे ?
अुत्तर जी हाँ।
६ प्रश्न अेक दूसरेके प्रति मन वचन कर्मसे हमेशा वफादार रहोगे ?
अुत्तर जी हाँ।
७ प्रश्न हिन्दुस्तान जब तक स्वतंत्र नहीं होगा तब तक आप प्रजोत्पत्ति कायम नहीं रखनेका भरसक प्रयत्न करेंगे ?[3]
अुत्तर जी हाँ।
८ प्रश्न जो अस्पृश्य माने जाते हैं अनके साथ दोनों बर्ताव व्यवहार करने-करानेमें मानते हैं न ?
अुत्तर जी हाँ।

---

१ सप्तपदीके बदले जो सात यज्ञ करनेके हैं वह विधि अिसमें दिये गये हैं। यह यज्ञ विवाहके दिन किये जायें। यहाँ कल शब्दका प्रयोग अिसलिये है कि वर वधूको यह यज्ञ मगन दिन बनाये गये थे। अिसलिये आज यह प्रश्न अिस तरह रहना चाहिये "आपने सात यज्ञ किये हैं?
२ गृहस्थाश्रममें।
३ अब अिस प्रश्नकी जरूरत नहीं रही।

९ प्रश्न स्त्री-पुरुषके समान अधिकार है अैसा आप मानते है न ?
अुत्तर: जी हाँ।

१० प्रश्न आप लोग अेक-दूसरेके मित्र है, दासदासी कभी नही, यह भी ठीक है न ?
अुत्तर. जी हाँ।

११ प्रश्न नम्बर दो प्रश्नमे बताये सात यज्ञ सप्तपदीका स्थान लेते है, वह भी आप समझते है न ?
अुत्तर जी हाँ।

अब मैं आपको अिस बन्धनमे अपने हाथसे काते हुअे सूतके मारफत डालता हूँ। आप लोग अिस सूत-हारको जतनसे रखें और याद रखें कि आपका बन्धन कभी आप नही तोडेंगे और आपने जो प्रतिज्ञा की है, अुसके पालनमे आप अिस धर्मक्रियाको याद करके भगवानसे मांगे कि सर्वशक्तिमान परमात्मा आपको सहाय करे।

अब हम साथ मिलकर रामधुन गायेंगे।

(विवाह-विधि समाप्त)

सात यज्ञ

१ विवाह बन्धनतक तुम दोनोको अुपवास रखना चाहिये। (फल ले सकते है।)

२ तुम दोनोको गीताका १२वाँ अध्याय पढना चाहिये। और अुसके अर्थका चिन्तन करना चाहिये।

३ हरअेक, अपने हिस्सेके जमीनके टुकडे जिनमे पेड अुगे हो, साफ करे।

४ हरअेक गोशालामे जाकर गायकी सेवा करे।

५ हरअेक कुअेके आसपास सफाअी करे।

६. हरअेक पाखानेकी सफाअी अच्छी तरह करे।

७ हरअक राज कात ।

यह सब काम हरअक जहाँ तक हो सके यनका मावनाम कर ।

* * *

जिस विधिके अनुसार पहला विवाह विधि थी प्रमाकरजान कराया था जो हरिजन माँ बापके पुत्र है और जिनके माँ बाप मिशनरी बन गये थे।

वरके साथकी बात चीतमें गांधीजीने यह भी कहा था I believe in one man one wife and vice versa for all time

'मैं मानता हूँ कि हर हालतमें अेक पुरुषको अेक ही पत्नी हो और अेक स्त्रीको अेक ही पति ।

परिशिष्ट—२

आश्रम-संहिता

['आश्रम-परम्परा और आश्रम-महिता' लेखमे जिसका जिक्र आया अुस आश्रम-महितामे लिअे गये पचास प्रकरणोकी फेहरिस्त पाठकोकी जानकारीके लिये नीचे दे रहे है ।]

१ प्रार्थना
२ व्रत-प्रायश्चित्त
३ परिग्रह
४ शरीरश्रम
५ स्त्री-पुरुष सम्बन्ध
६ स्वाध्याय
७ सामान्य-विवेक
८. नित्यकर्म
९ यज्ञ
१० दफ्तर
११ हिसाब
१२ समयका रोजनामचा और खाताबही
१३ समय-पालन
१४ रुग्णालय
१५. शुश्रूषा-अुपचार
१६ खेल-कूद-व्यायाम
१७ अुद्योग-चर्मालय, बुनाअीका वायुमण्डल

१८ यन्त्र
१९ अखबार
२० पुस्तकालय
२१ सभा समितियाँ
२२ उत्सव
२३ बुजुर्ग
२४ बच्चे
२५ पड़ोसी
२६ विपद्ग्रस्तोंकी मदद
२७ मकान
२८ दुग्धालय
२९ मनी
३० बाजार
३१ आहार
३२ रसोईघर
३३ भोजनालय
३४ कोठार
३५ अतिथि
३६ स्वच्छता-सफाई
३७ रास्ते
३८ पेड़ पत्ते
३९ कूड़ेकी व्यवस्था
४० पाखाना
४१ स्नान
४२ पानी और जलनिकासकी व्यवस्था
४३ साग
४४ जानवर—जिन्हें और मदद वगैरा
४५ कुत्ते, बन्दर इ०
४६ मुसाफिरी
४७ अन्तक्रिया
४८ व्यवस्थापक और सञ्चालकोंका सम्बन्ध
४९ आश्रम-समाचार
५० आश्रमका इतिहास लिख रखना

परिशिष्ट—४

आश्रम-जीवनके अध्ययनके लिए उपयोगी अन्य किताबें

गुजराती

(१) आश्रम-जीवन (गांधीजी) (प्रकाशकः नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद—१४)
(२) मंगळ प्रभात (गांधीजी) ,,
(३) सत्याग्रहाश्रमनो इतिहास (गांधीजी) ,,
(४) बापूना पत्रो : आश्रमनी बहेनोने ,,
(५) बापूना पत्रो : कु० प्रेमा बहेन कंटकने ,,
(६) बापूना पत्रो : श्री छगनलाल जोशीने (छप रहा है) ,,
(७) समूळी क्रान्ति (किशोरलाल मश्रूवाला) ,,
(८) आश्रमी केळवणी भाग १ (जुगतराम दवे) ,,
(९) ,, ,, भाग २ ,, ,,
(१०) ,, ,, भाग ३ ,, ,,
(११) जीवननुं परोढ (प्रभुदास गांधी) ,,

हिन्दी

(१) सत्याग्रह आश्रमका इतिहास (मूल गुजराती) (गांधीजी) (नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद-१४)
(२) आश्रमवासियोंसे (गांधीजी) ,,
(३) मंगल प्रभात (मूल गुजराती) (गांधीजी) ,,
(४) आश्रम-जीवन ,, ,, ,

(५) बापूके पत्र-आश्रमकी बहनोंको (मूल गुजराती) (गांधीजी)
(नवजीवन प्रकाशन मंदिर अहमदाबाद-१४)
(६) बापूके पत्र—कु० प्रेमा बहनके नाम (मूल गुजराती)
(७) बापूके पत्र—गंगा बहनके नाम
(८) बापूके पत्र—मीराके नाम (मूल अंग्रेजी)
(९) आत्मरचना अथवा आश्रमी शिक्षा—१ (जुगतराम दवे)
(१०) " २
(११) " ३
(मूल गुजराती)
(१२) जीवन प्रभात (मूल गुजराती) (प्रभुदास गांधी)
(सस्ता साहित्य मण्डल दिल्ली)
(१३) जीवन संस्कृतिकी बुनियाद (काका साहब कालेलकर)
(हिन्दुस्तानी प्रचार सभा वर्धा)
(१४) गांधीजीका आश्रम—१
(१५) " २
(सस्ता साहित्य मण्डल दिल्ली)

English

(1) **Ashram Observances in Action** (Gandhiji)
(Transl from Gujarati) (Navajivan Trust Ahmadabad 14)
(2) **From Yeravada Mandir** (Gandhiji)
(Transl from Gujarati)
(3) **Bapu's Letters to Ashram Sisters**
(Transl from Gujarati)
(4) **Bapu's Letters to Mira**

चित्र-सूची

(१) काकाका नीम

यह पेड काकासाहबकी पत्नीका लगाया हुआ है। जब वह बहुत छोटा था, तब अुस पर अेक बैलका पैर पडनेसे वह करीबन टूटसा गया था। काकासाहबकी हिफाजतमे वह फिरसे जीवित हो गया। आज यह बडा वृक्ष हो गया है। आश्रमभूमिपर खडे हुअे सब वृक्ष आश्रमवासियो के ही प्रयत्नसे फले-फूले है।

(२) सर्वसाक्षी अिमली (अर्पण-पत्रिका)

अिस भव्य वृक्षने ही सबसे पहले बापूका स्वागत किया। यह पुराण पुरुष आश्रमकी सब छोटी-बडी घटनाओंका आज साक्षी है। दाडी सत्याग्रहके पहले ८० सत्याग्रहियोने यहीसे अपना कूच शुरू किया था।

(३) अुपासना-मन्दिर (पृ० ७६)

• चार दिशाअे जिसकी चार दीवारे है और आकाश जिसका गुम्बज है अैसी अिस प्रार्थनाभूमिपर सर्वधर्म-समभावकी प्रार्थना रोज सुबह हुआ करती है। अैसा भव्य मन्दिर आज तक किसीने बनाया नही और न कोअी बना सकेगा।

(४) आनन्द-निवास (पृ० ९९)

यह मकान अुपवासवीर श्री० भणसाली भाअीके लिअे तैयार करवाया गया था। अिस मकानमे ही स्व० महादेवभाअी सपरिवार रहते थे। काकीका, काकासाहबकी पत्नीका देहान्त अिसी मकानमे हुआ था।

(५) भोजन शाला (पृ० ११०)

अिस मकानमे आश्रमका रसोडा चलता था। आश्रमके छोटे-बडे सब कार्यकर्ता अिसी मकानमे भोजनके लिअे और भोजन-सामग्री तैयार

करनेके लिए आया करते थे। इस मकानके ऊपरके भागमें
भोजन मिलता था और नीचेके भागमें टन्डन आनेके कारण नि
नीचेके भागमें आश्रमका पुस्तकालय वाचनालय रहता था।

(६) गोशाला (पृ० ११६)

आश्रमकी यह एक अनोखी गोशाला है। आज यहां आश्रमकी अ
गाय और बछड़े रहते हैं। आश्रमवासियोंको तथा शहरके लोगों अ
अस्पतालोंको यहींसे शुद्ध दूध भेजा जाता था।

(७) मगन निवास (पृ० ११८)

जिस मकानमें बापूके सबसे पहले और कनिष्ठ साथी स्व०
मगनलाल गांधी रहते थे। आश्रमकी व्यवस्थाका बड़ा पत्थर यहीं
प्रथम प्रयोग इस भूमिपर किया था। जिनके स्वर्गवासमें मैं आज
विधवा बन गया हूं ऐसे उद्गार बापूके मुंहसे निकल पड़े थे। बापू
जिन बापूका वास्तव्य इस मकानमें भी रहा था।

(८) वस्त्र विद्यालय (पृ० १२०)

आश्रम भूमिके ऊपर बना हुआ यह सबसे पहला इमारत है। अब
धर्म युद्धके नामसे स्व० श्री० महादेवभाईने जिसका वर्णन किया है
अभी पहली मिल मजदूरोंकी हड़तालके मजदूरोंने इस इमारतकी नींव।
साबरमतीकी रेतीसे भरकर इस मकानकी बुनियाद तैयार की है। इस
मकानके पूर्व तरफके कोनेमें पू० बापूका निवास होनेसे सामान्य जि
मकानको मिला है। और पश्चिमके कोनेमें इमामसाहबका स्थान नं
इसीमें किया है। इसीमें उद्योगशाला चलती थी और बुनाईकी
शिक्षा विद्यार्थियोंको भी जाती थी।

(ये सब चित्र साबरमती आश्रमके चित्रकार श्री दत्ता मन्त्र
द्वारा दिये गये थे। इसलिये सचित्रताके आभार दिये गये हैं।)